वर्ष-18 अंक-55
मार्च-जून-2001

सम्पादन सलाहकार मण्डल
निरंजन महावर

सम्पादक
कपिल तिवारी

सहायक सम्पादक
अशोक मिश्र

मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद् भोपाल का प्रकाशन

© *स्वत्वाधिकार सुरक्षित*

सम्पर्क :

मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद्
मुल्ला रमूज़ी संस्कृति भवन, आधार तल,
बाणगंगा, भोपाल-462003
दूरभाष : 551878

मूल्य :
एक प्रति बीस रुपये
वार्षिक पचास रुपये
आजीवन सदस्यता पन्द्रह सौ रुपये
चौमासा का वार्षिक शुल्क अनुषंग पुस्तिका के साथ सौ रुपये

प्रचार/प्रसार :
उर्मिला पारखे/प्रवीण गावण्डे

आवरण छायाचित्र :
लघुचित्र शैली, साभार

शब्दांकन :
अभिषेक फोटोकम्पोजर्स, भोपाल

मुद्रण :
प्रियंका ऑफसेट, भोपाल

λ चौमासा में प्रकाशित समस्त सामग्री लेखकों के अपने कार्य और विचार हैं। आवश्यक नहीं कि परिषद् उनसे सहमत हो।

λ पत्रिका और प्रकाशन से सम्बन्धित समस्त विवादों का न्यायालयीन कार्यक्षेत्र भोपाल रहेगा।

डॉ. कपिल तिवारी, सचिव, मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद् सम्पादक, मुद्रक, प्रकाशक द्वारा मे. प्रियंका ऑफसेट 25-ए, प्रेस काम्पलेक्स, भोपाल से मुद्रित कराकर मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद्, मुल्ला रमूजी संस्कृति भवन, आधार तल, बाणगंगा, भोपाल से प्रकाशित।

सम्पादक : **डॉ. कपिल तिवारी**

रामनारायण उपाध्याय

प्रदेश के गाँधीवादी अध्येता लोकवार्त्ताविद और वरिष्ठ रचनाकार पंडित रामनारायण उपाध्याय का निधन साहित्य जगत की अपूरणीय क्षति है। गाँव तथा गाँधी के महत्त्व को जीवन भर धारण करने वाले उपाध्याय जी अपनी सार्थक रचनाशीलता के लिए देश भर प्रसिद्ध रहे। निमाड़ी लोक गीत, जब निमाड़ गाता है, निमाड़ी और उसका लोक साहित्य, निमाड़ का सांस्कृतिक–इतिहास, लोक जीवन में राम जैसी सुदीर्घ अनुभवों से सृजित उनकी कृतियाँ, लोक-साहित्य के क्षेत्र में गंभीर और महत्त्वपूर्ण मानी गई हैं। गाँधी साहित्य और विचारधारा से ओत-प्रोत 'युग पुरुष गाँधी', 'गाँधी दर्शन', 'गाँधी युग की विभूतियाँ', प्रेरक प्रसंग, दूसरा सूरज, गाँधी विचार यात्रा, साहित्य-चिन्तन की उनकी अमूल्य कृतियाँ है। पं. उपाध्याय ने अपने आधे दशक से भी अधिक के रचनाकाल में लगभग 40 कृतियों का प्रणयन किया। कविता, ललित निबन्ध, लोक साहित्य, व्यंग्य और संस्मरणात्मक कृतियों के माध्यम से उन्होंने अपने रचना संसार को बहुआयामी बनाया। 20 मई, 1918 को खण्डवा मध्यप्रदेश के कालमुखी गाँव में जन्में पं. रामनारायण उपाध्याय धरती, प्रकृति और जीवन के अन्यतम के चितेरे रहे। 'अनजाने जाने पहचाने', 'जिनकी छाया भी सुखकर है', 'कथाओं की अन्तर्कथाएँ, जिन्हें न भूल सका' और 'संस्मरणों की गंगा' उनकी अन्य बहुचर्चित, बहुप्रशंसित और महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं।

अद्वितीय सृजनात्मकता के धनी पं. रामनारायण उपाध्याय के बहुआयामी और गहन रचनाधर्मिता के लिये भारत शासन द्वारा 1991 में पद्मश्री अलंकरण से विभूषित किया गया। मध्यप्रदेश साहित्य परिषद् का ईसुरी पुरस्कार भी उन्हें प्राप्त हुआ है। भवभूति अलंकरण से विभूषित पं. रामनारायण उपाध्याय को अनेक राज्यों और संस्थाओं के पुरस्कार, सम्मान, अलंकरण मिले हैं। वे 'निमाड़ लोक संस्कृति न्यास' के संस्थापक भी रहे। सात्विक, मिलनसार और चिंतन-मनन तथा सृजन से निरंतर जुड़े पं. रामनारायण उपाध्याय प्रदेश के ही नहीं देश के उन गिने चुने वरिष्ठ रचनाकारों में रहे, जो अपनी उपस्थिति से रचना-जगत को प्रेरित करते हैं। उनके निधन से एक ऐसी पीढ़ी का अंत हो गया जो गाँधीवादी चिंतन और राष्ट्रीयता के समन्वय से पोषित देश के सांस्कृतिक धरोहर की चिंता के साथ सृजन करने वाली पीढ़ी के रूप में जानी जाती रही है। पंडित रामनारायण उपाध्याय मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद् के गठन वर्ष से ही परिषद् की सामान्य सभा और कार्यकारिणी समिति के सदस्य रहे। वे परिषद् की पत्रिका चौमासा के सम्पादन सलाहकार भी थे। उनके निधन से संस्कृति जगत को गहरी क्षति हुई है।

चौमासा का यह अंक स्वर्गीय रामनारायण उपाध्याय की साधना कीर्ति को प्रणाम पूर्वक समर्पित है।

— सम्पादक

इस अंक में–

बौद्ध सिद्ध : सरहपाद / डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी / **पृष्ठ** / 7
इतिहास और लोक साक्ष्य / डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त / **पृष्ठ** / 12
जनकवि ईसुरी– प्रासंगिकता के नये संदर्भ / प्रो. कान्तिकुमार जैन / **पृष्ठ** / 16
दण्डार और भवाड़ा / मालती शर्मा / **पृष्ठ** / 19
निमाड़ी पहेली साहित्य / रमेशचन्द्र तोमर 'निमाड़ी' / **पृष्ठ** / 23
छत्तीसगढ़ी फाग गीत / निरंजन महावर / **पृष्ठ** / 33
ब्रज के बारहमासी गीत / सर्वोत्तम त्रिवेदी 'लघु' / **पृष्ठ** / 48
लोकजीवन के बाल गीत / डॉ. प्रताप सिंह चन्देल / **पृष्ठ** / 78
बुन्देली बालगीत / रामप्रकाश गुप्ता / **पृष्ठ** / 83
मालवांचल के पंथवारी गीत / डॉ. शशि निगम / **पृष्ठ** / 86
बुन्देली लोकजीवन की गारियाँ / गुप्तेश्वर द्वारका गुप्त / **पृष्ठ** / 99
बुन्देली लोकगीतों में नारी भाव व्यंजना / डॉ. (श्रीमती) गायत्री बाजपेयी / **पृष्ठ** / 103
कार्तिक स्नान / डॉ. ओमप्रकाश चौबे / **पृष्ठ** / 114
नर्मदा का नाभि स्थल / डॉ. श्रीराम परिहार / **पृष्ठ** / 118
झगड़े की फागें / डॉ. ओमप्रकाश चौबे/ डॉ. सुषमा शुक्ल / **पृष्ठ** / 121
उड़ीसा की जनजातीय मिथकथाएँ / अनुवाद / निरंजन महावर / **पृष्ठ** / 125
मिथ्स ऑफ मिडिल इण्डिया / अनुवाद / डॉ. सुरेश मिश्र / **पृष्ठ** / 130
रूसी लोक कथा– टीनी-टिनी / अनुवाद / प्रकाश परिहार / **पृष्ठ**/ 145
आयोजन– **राष्ट्रीय रामलीला मेला** / डॉ. छेदीलाल काँस्यकार / **पृष्ठ** / 159
आयोजन– **भारत के हृदय प्रदेश में अन्तर्राष्ट्रीय रामायण मेला** / आनन्द सिन्हा / **पृष्ठ** / 164
पुस्तक समीक्षा– **वाचिक परम्परा का अमर संग्रह 'अमर सागर'** / डॉ. देवसिंह पोखरिया / **पृष्ठ** / 167
पुस्तक समीक्षा– **कबीर स्वरूप अफ़ज़ल साहब** / गोमती प्रसाद विकल / **पृष्ठ** / 170

बौद्ध सिद्ध : सरहपाद

डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी

बौद्ध प्रस्थान में ही नयान आचरण प्रधान साधना थी—जहाँ वासना का दमन होता था। शील, समाधि और प्रज्ञा—जैसे त्रिरत्न की साधना से वासना का तेल सूख जाता और चित्त—दीप की बाती बुझ जाती है—निर्वाण हो जाता है। महायान में वासना का दमन नहीं, शोधन होता था। महायान पारमितानय की साधना करता था—यद्यपि उसमें भावीयान के मंत्रनय का बीज भी विद्यमान था। यही मंत्रनय का बीज वज्रयान में अपनी समस्त सम्भावनाओं के साथ विकसित हुआ। मंत्रनय का लक्ष्य है—वज्रयोग की सिद्धि। इसका साधना बिन्दु—साधना है। नैरात्म्यवादी इस बौद्ध मार्ग में चित्त ही सर्वस्व है जिसके दो रूप हैं- संवृत चित्त और बोधि चित्त। बोधिचित्त ही परमार्थ चित्त है। उसी की प्राप्ति वज्र-सिद्धि है। संवृत चित्त चंचल शुक्र है—परमार्थ में वही विशिष्ट साधना से वज्रोपम हो जाता है। गगनोपम हो जाने से वह उष्णीष चक्र में प्रतिष्ठित हो जाता है- फिर निर्माण—चक्र (निम्नतम) हो या उष्णीष चक्र—सर्वत्र समभाव से स्थिर हो जाता है—

शून्यताकरूणाभिन्नं बोधिचित्तं तदुच्यते

यह द्वन्द्वातीत समरस 'महासुह' दशा है। यह सिद्ध सरहपाद ही हैं जिन्होंने त्रिशरण में 'गुरूं शरणं गच्छामि' का चौथा चरण जोड़ा। क्षरणशील शुक्र ही संवृत चित्त है जिसे महामुद्रा के संसर्ग से क्षुब्ध कर अवधूती मार्ग में संचरित किया जाता है और शोधित होकर उष्णीष चक्र में प्रतिष्ठित हो जाता है। मल का पूर्ण शोधन तो शक्तिमार्ग में ही होता है और शक्ति—मार्ग तंत्र—मार्ग है। कहा गया है—

जयति सुखराज एकः कारणरहितः सदोदितः जगताम्।
यस्य च निगदन समये वचनदरिद्रो वभूव सर्वज्ञः॥

यह सुखराज (महासुह) अद्वैत है- उसका कोई कारण नहीं है- वह सदा उदित है। वह सर्वोत्कृष्ट रूप से वर्तमान है। उसके विषय में कुछ कहते हुए सर्वज्ञ की भी वाणी विरत हो जाती है। इस आशय को व्यक्त करते हुए सरहपाद के कतिपय दोहे दिये जा रहे हैं—

मूल दोहा— अलिओधम्म महासुह पइसई।
लवणो जिमि पाणीहि विलिज्जह॥2॥

इस धारा के अनुसार परमार्थतः न आत्मा जैसी कोई वस्तु है और न ही धर्म जैसी। ज्ञानगोचर (आत्मा और धर्म) सभी वैसे ही अलीक हैं जैसे स्वप्न-दृष्ट ज्ञेय पदार्थ। स्वप्न में जिस प्रकार चेतना ही आकार धारणकर प्रतीतिगोचर होती है उसी प्रकार जागृत में भी चेतना ही नाना रूपाकारों में प्रतीत होती है। परमार्थतः चित्त ही सत् है—ज्ञेय आत्मा (जीव, जन्तु प्राणी,मनुष्य) तथा धर्म (रूप, वेदना, संज्ञा तथा संस्कार आदि) विषय मात्र अलीक हैं। महायान दर्शन में ऐसा ही माना गया है।

उत्तरार्ध की उपमा अभिजात साहित्य से ली गई है। उपनिषदों में परमार्थ सत् ब्रह्म और व्यावहारिक ज्ञेय पदार्थों के बीच यही उपमा दी गई है। छान्दोग्य उपनिषद में उद्दालक आरूणि श्वेतकेतु से कहता है कि नमक को पानी में डाल दो और कल फिर उसे मेरे पास लाना। श्वेतकेतु दूसरे दिन पानी लाता है—पर नमक का वहाँ अता-पता नहीं रहता। आरूणि कहता है पानी को चखकर देखो और फिर बताओ। श्वेतकेतु कहता है—सारा पानी नमकीन हो गया है, परन्तु नमक अलग से कहीं दिखाई नहीं पड़ता। श्वेतकेतु कहता है कि परमार्थ सत् ऐसा ही है। यह सर्वत्र विद्यमान है—पर दृष्टिगोचर नहीं होता। वृहदारण्यक में भी परमार्थ सत् के लिए यही उपमा दी गई है।

व्यवहार में ज्ञानगोचर समस्त पदार्थ परमार्थ महासुख में उसी प्रकार विलीन हो जाता है जिस प्रकार नमक पानी में विलीन हो जाता है।

सरह भणइ जिण गुणगण एत्तवि।
कडव पत्था एहुसो एहु परमत्थवि॥

इन पंक्तियों में रहस्यमयी गुत्थियाँ भरी पड़ी हैं। इन पंक्तियों का सामान्य अर्थ इस प्रकार है— 'सरह कहता है कि जिन (जयी) के अमित गुणगण हैं। मार्ग इस प्रकार का है और वास्तव में अन्तिम सत्य इस प्रकार है।' चित्त के दो रूप हैं—निम्न अथवा संवृत तथा उच्च अथवा पारमार्थिक (बोधी-चित्त) सांवृतिक या अपारमार्थिक बद्धदशा में यह मन पवन या मनो पवन के वशीभूत होकर निरन्तर गतिशील रहता है—चक्कर काटता रहता है परन्तु जब योगी अपनी पारमार्थिक यात्रा में गतिशील रहता है तब यह वात्या-चक्र टूट जाता है—तब चित्त इस मण्डल चक्र से छुटकारा पा जाता है और 'शून्यता की चरम स्थिति आ जाती है। इस दोहे का यही आशय जान पड़ता है। प्रो. शहीदुल्ला ने इसकी व्याख्या अन्यथा की है—परन्तु श्री प्रबोधचन्द बागची की अभिमत व्याख्या यही है।

चित्त विगह अचित्त उएसहि।
कडव सद्गुरू वअणे फुड़ पड़िहासहि॥

यहाँ तक कि अन्ततः चित्त भी निश्शेष हो जाता है और अचित् अस्तित्व में आ जाता है। श्री सद्गुरू के वचनोपदेश से वास्तविक स्थिति समुल्लसित हो उठती है।

जावण अप्पा जाणिज्जइ तावण सिस्स करेइ।
अन्धं अंध कहाव तिमि वेण वि कूव पड़ेइ॥

जब तक स्वयं पारमार्थिक स्थिति को न जान लें—तब तक शिष्य न बनाये। अंधा यदि अंधे का नेतृत्व करेगा—तो दोनों कूप में चले जायेंगे।

जव्वें मण अत्थमण जाइ तणु तुट्टइ बन्धण।
तव्वे समरस सहजे वज्जह णड सुद्दण बह्मण॥

जिस क्षण में मन अस्तमित हो जाता है उस क्षण में सारे बन्धन निःशेष हो जाते हैं—तब 'समरस सहज' की स्थिति आ जाती है। तब साधक में शूद्र और ब्राह्मण का भेद नहीं रह जाता। उसके लिए सारा लोक एक जातिबद्ध हो जाता है। यही 'सहज' भाव में स्थिति है।

अरे पुत्तो वोज्झु रसरसण सुसष्ठिअ अवेज्ज।
वक्कवण पढ़न्तैहि जगहि ण जाणिउ सोज्झ॥

अरे पुत्र! रस-रसायन साधन काल में स्फुटतर शुद्धि को न जानते हुए जैसे साधक नष्ट हो जाता है वैसे ही रागादि की शुद्धि को ठीक से न जानने पर नष्ट हो जाता है। राग के कारण अभीष्ट धर्मादि में जो प्रवृत्ति होती है वह अतत्वात्मक होने से अविद्या ही है। अतः यह लोक इस मनोदशा में जो व्याख्यान देता या अनुशीलन करता है—वह सब निष्फल होता है। कारण, वह संसार के स्वरूप के विषय में ठीक-ठीक कुछ जानता नहीं। पर जो जानता है उसके विषय में इस तरह से कहा गया है—

अरे पुत्तो तत्तो विचित्त रस कहण ण सक्कइ वत्थु।
कप्परहिअ सुह-ठाणु वर जगु उअज्जइ तत्थु॥

हे पुत्र! जिसने उस तत्व का चिन्तन ठीक-ठीक कर लिया है—वह उसके आस्वाद की वाणी का विषय नहीं बन सकता। ये

संसार की वस्तुएँ जैसी नील-पीत आदि आकार की हैं—क्या वह स्व-सवेद्य 'सहज' वैसा है वह तत्व विकल्परहित है—सुख स्थान है—श्रेष्ठ भवतत्व है—वहाँ भव-निर्माण भेदरहित है। इसे स्वभाव-सिद्ध होने के कारण ध्यान आदि किसी साधन से नहीं पाया जाता। यह अभिमान से नहीं, श्री गुरू परिज्ञान मात्र से उपलब्ध होता है। वही बात निम्नलिखित दोहे से भी कही जा रही है—

बुद्धि विणासइ मज मरइ जहि (तुट्टइ) अहिमाण।
सो माआमअ परमकलुतहिं किम्बज्झइ झाण॥

इस 'सहज' की उपलब्धि हो जाने पर श्री सद्गुरू द्वारा उसके व्यक्त हो जाने पर बुद्धि विनष्ट हो जाती है—निःशेष हो जाती है—मन मर जाता है—मिथ्याभिमान—पुद्गल और धर्म-विषयक—समाप्त हो जाता है। उस समय मायामय परम कला भी अकिञ्चत्कर हो जाती है। मनः परिकल्पना की गति बन्द हो जाती है—फिर ध्यान-बन्धन से क्या लेना-देना?

गुरू उपएसें अमिअ-रसु धावहि ण पीअउ जेहि।
बुहु सत्थत्थ मरूत्थलिहिं तिसिए मरिअउ तेहि॥

जिन कापुरूषों ने महावेग से दौड़कर गुरू-उपदेश-अमृत का पान नहीं किया—वे मरूस्थल में भटकते हुए तृषातं सार्थवाह की तरह विनष्ट हो जाते हैं—कालचक्र में पिस जाते हैं।

पण्डिअ सअल सत्य बक्खाणइ।
देहहिं बुद्ध वसन्त न जानइ॥
अवणागमण ण तेण विखण्डअ।
तोहि णिलज्ज भणइ हउ पण्डिअ॥

पण्डित लोग नाना प्रकार के शास्त्रों पर व्याख्यान देते रहते हैं। उनका लक्ष्य तत्व-बोध नहीं, अपितु जय-पराजय रहता है, द्रव्यार्जन रहता है। देहस्थ बुद्ध को सद्गुरू उपदेश से विमुख ये पण्डित नहीं जानते। जिसने गुरू-प्रदत्त आम्नाय की—रहस्यमय परम्परा को नहीं जाना, वे स्वयं नष्ट होते हैं और दूसरों को भी नष्ट करते हैं। ऐसे लोग संसार के आवागमन को निरस्त नहीं कर पाते—फिर भी ये निर्लज्ज अपने को पण्डित ही समझते हैं। ये पण्डित नहीं, मूर्ख हैं।

विसअ-विसुद्धें णउ रभइ केवल सुंण चरेइ।
उड्डी बोहिअ काउ जिम पलुट्टिअ तहवि पड़ेइ॥

जो सद्गुरू की आज्ञा से विशुद्ध बन्धनकारी विषयों में नहीं रमता,अपितु निरर्थक शून्य में भटकता रहता है,उसकी वही स्थिति होती है जो उस कौए की जो जहाज से हटकर निरवलम्ब समुद्र में भटकता रहता है और अन्ततः फिर वहीं लौट आता है। पुनः इसी अभिप्राय को व्यक्त करते हुए कहते हैं—

विसआसत्ति म बन्ध कुरू अरे बढ़ सरहें बुत्त।
मीण पअङ्गम करि भमर पेक्खह हरिणह जुत्त॥

सरह कहते हैं कि पाँचों ज्ञानेन्द्रियों को खींचकर मृत्यु के गाल में झोंकने वाले विषयों के प्रति आसक्ति न करो। देखो, मीन, पतङ्ग, हाथी, भ्रमर और हरिण—ये प्राणी एक-एक विषय —रस,रूप, स्पर्श, गन्ध तथा शब्द के चक्कर में पड़कर अपना नाश कर लेते हैं।

कासु कहिज्जइ को सुणइ एत्थु कज्जसु लीण।
टुटु सुरङ्गम धूलि जिम हिअ-जाअ हिअहिं लीण॥

वज्र-मार्ग बड़ा दुरूह मार्ग है—किससे कहा जाय—कौन सुपात्र है जो इसे सुने? कौन है जो इसे ठीक से ग्रहण कर सहज पद को पा सके? इस कार्य में लीन कोई निपुण दिखाई नहीं पड़ता। ऐसे पुरूषपुङ्गव विरल ही हैं। जैसे किसी दुर्ग का भंजन करने के लिए सुरङ्ग बनाई जाय—तो उस सुरङ्ग के पास सब कोई नहीं जा सकते—सुरूङ्क -सुरङ्ग मर्मज्ञ ही जा सकता है—वही उसकी धूल और मिट्टी का सामना कर सकता है। अपात्र स्वल्पहृदय होते हैं—सुपात्र दृढ़तर हृदय वाले होते हैं—सुरङ्ग की धूलि स्वल्पहृदय को बर्दाश्त नहीं हो सकती—पर दृढ़तर हृदय वाले उसे पचा लेते हैं। यही स्थिति इस वज्र-मार्ग की है जो संसार-दुर्ग के नाश के लिए तैयार किया गया है। उस पर सर्व-सामान्य नहीं चल सकता।

जत्त वि पइसइ जलहि जलु तत्तइ समरस होइ।
दोष गुणाअर चित्त तहा बढ़ परिवक्ख ण कोई॥

जिस प्रकार समुद्र के जल में दूसरा जल प्रविष्ट हो तो वह समरस हो जाता है उसी प्रकार जो साधक सिद्ध हो चुके हैं—परिज्ञानी और महर्द्धिक हैं—उनके लिए संसार के दोष-समूह प्रतिपक्ष नहीं बनते—वे उन्हें नहीं बाँध पाते। शब्द, स्पर्श, रूप, रस तथा गन्ध—इनका आकर्षण दोष है। परन्तु श्री सद्गुरू के उपदेश से जिनको बुद्धि प्राप्त हो चुकी है—उनके लिए ये विषय, विषय (बन्धनकारी) रह ही नहीं पाते।

मुक्क्इ चित्तगएन्द करू एत्थ विअप्प णु पुच्छ।
गअण गिरिणई जल पिअउ तहि तड़ बसइ सइच्छ॥

पहले चित्त गजेन्द्र को मुक्त किया जाय। इसमें किसी प्रकार

का संशय मत उठाना। फिर वह गगन, गिरि, नदी का जलपान करे और वहाँ स्वेच्छापूर्वक वास करे। यह चित्त गजेन्द्र पंच-स्कन्ध स्वरूप है—रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार तथा विज्ञान। यह चित्त गजेन्द्र-सा विषय रूपाकार है—पर वही जब शून्य में प्रतिष्ठित हो जाता है—तब वहाँ क्लेशादि रूपावरण का कोई चिह्न लक्षित नहीं होता। चित्त करूणा की साधना के शून्य में प्रतिष्ठित हो जाता है। सरहपाद के दोहों में शून्य तरूवर में करूणा रूपी फूलों का खिलना दिखाया गया है। जब साधक के मन में परमार्थ वृत्ति जगती है—तभी करूणा के फूल खिलते हैं—

सुण्ण तरूवर फल्लिअउ करूणा विहि विचित्त।
अण्णा मोक्ष परत्त फलु एहु सोक्ख परूचित्त॥

विविध विचित्र करूणा के फूलों से 'शून्य' तरूवर प्रफुल्लित हुआ है। यह लोकोत्तर फल है। यह चित्त ही परम महासुख स्थल बन जाता है।

अद्वय चित्त तरूअरह गउ तिहु वर्ण वित्थार।
करूणा फुल्ली फल धरइ णाउ परत्त उआर॥

शून्यता और करूणा, प्रज्ञा और उपाय, कमल और कुलिश जब अद्वय भाव में प्रतिष्ठित हो जाते हैं—जहाँ भव और निर्वाण का भेद जाता रहता है, तब उसी का सर्वत्र विस्तार हो जाता है। यही अद्वय चित्त तरूवर है—उसमें करूणा के फूल खिलते हैं और अनुत्तर फल लगता है। यही तथता है। बौद्ध चिन्ताधारा जिस अमूर्त दर्शन पर हावी रही उसमें तथता को महत्वपूर्ण स्थान मिला। तथता अपने मूल रूप में शून्यता के समकक्ष रही है। अश्वघोष कहता है कि तथता न तो भाव है, न अभाव और न ही भावाभाव का निषेध। मतलब , किसी एकान्त शब्द से इसे नहीं कहा जा सकता । इसी को सरहपाद इस प्रकार कहते हैं—

भवहि एक्खइ खएहिणिवज्जइ। भावरहिअ पुणु कहिंउवज्जइ॥
वेइ निवज्जइ जो दअज्जइ। अच्छहि सिरिगुरू णाहिं कहिज्जइ॥

इस भावाभाव से जो विलग हो जाता है उसी में समस्त संसार विलीन हो जाता है। तथता प्राप्ति का यह एक आवश्यक नियम-सा है कि चित्त इसको प्राप्त करने के लिए निश्चल-सा हो जाय।

भावाभावे जो पछिण्णउ। तहि जग तिअ सहाव विलीणउ।
जव्वे नहिं मण णिच्चल थाक्कइ। तव्वें भवनिर्व्वाणहिं भुक्कइ॥

और भी सरह कहता है—

झाणहीण पवज्जें रहिअउ।
गही वसत्तें भाज्जें सहि अउ॥
(जइ) मिडि विसअ रमत्ते ण मुच्चअ।
सरह भणइ परिआण कि रूच्चअ
जइ पच्चक्ख कि झाणे की अइ।
अहव झाण अन्धार साधिअअ॥
सरह भणइ भइ कड्डिय राव।
सहज सहाउ णउ भावाभाव॥
जाल्लइ उपज्जइ ताल्लइ वाज्जइ।
ताल्लइ परम महासुइ सिज्झइ॥
सरह भणइ महु (कि) वकरमि।
पसु लोअण बुज्झइ की करभि॥

रूक्ष ध्यान या जागतिक आनन्दोपादान का न्यास या त्याग करने वाले संन्यास को परे रखकर, घर में ही स्वकीया के संग जीवन निर्वाह करने और समस्त विषयादिक का उपभोग या सेवन पूरी तरह (मिड़ि-दृढ़तापूर्वक एवं पूर्णरूपेण) करते हुए ही साधक मुक्त होता है। इसके समक्ष उस परिज्ञान-ज्ञान के रूक्ष क्षेत्र की भला क्या बिसात? अर्थात् जब यह सहज उपलब्ध सुगम और सरल मार्ग ही पार नहीं किया जा सका—तो वह कष्टपूर्ण साधना होने से रही। इसे ध्यान-धारणा में आबद्ध पशु (माया-लिप्त लोग) नहीं जान पायेंगे। वस्तुतः जिन प्रवृत्तियों और संस्कारों को लेकर तुम्हारा जन्म हुआ है—उसी को लेकर मरण भी निश्चित है। नाश और निर्माण में अन्य, अन्यथा और अतिरिक्त तत्वों की कोई सत्ता नहीं। जो प्रत्यक्ष है—सहज है—उसमें ध्यानादि से क्या लेना-देना? यदि ध्यान का कोई समुचित विषय है ही नहीं, तो यह ध्यान अन्धकार की साधना-मात्र है। सहज में न भाव है न अभाव—पर इसे पशु-प्रकृति के लोग समझ ही नहीं पाते—क्या किया जाय? (सहज सिद्ध साधना एवं सर्जना)

जहि मण पवन न संचरइ रवि ससि नाहिं पवेस।
तहि बढ़ चित्त विसाम करू सरहें कहिअ उएसु॥

इस अवाड् मनोगोचर, चतुष्कोटी विनिर्मुक्त,भावाभाव विवर्जित 'सहज' में मन एवं पवन का संचार नहीं होता। वहाँ रवि एवं शशि का प्रवेश या द्वन्द्व असम्भव है। इसी सहज स्थिति में चित्त को विश्राम देने का उपदेश सरहपाद ने दिया है। सरहपाद के कतिपय

दोहों में 'सहज' की व्याख्या को गीतोक्त 'आत्मा' की व्याख्या के आलोक में देखा जा सकता है।

संकपास तोखिउ गुरू वअणें। न सुगइ सोणिउ दीसइ न अणे।
पवन बहत्ते णहु सो हल्लई। मलन जलत्ते न सो उज्झइ।
घणि वरसत्तै णहु सोम्भिइ। नउ वज्जइ णउ खअहि पइस्सइ॥

सरह मानते हैं कि सहजोन्मुखी साधना के लिए गुरू की अनिवार्यता है—वही शंका-पाश को नष्ट कर सकता है। यह सहज श्रवण से अश्रव्य, दृष्टि से अदृश्य, पवन से अस्पृश्य और अकम्य, अग्नि से अदाह्य, घनवर्षण से न भीगने वाला और समरस तथा आनन्दमय बताया गया है।

अपने रचि रचि भवनिर्वाणा। मिछँ लोअ बन्धावए अपणा॥
अम्हें णजाणहुं अचित्त जोइ। जाममरण भव कइसण होइ॥
जइसों जाममरणवि तइसों। जीवन्ते मइलें साहिं विशेषो॥
जा एथु जाममरणे विसङ् का। सो काउ रस रसनिष्कङ् खा॥
जे सचराचर तिअस भमत्ति। ते अजरामर किम्यि न होत्ति॥
जामे काम कि कामे जाम। सरह भणनि अचिन्त सो धाम॥

संसार से बन्धन और मुक्ति—इन दो विकल्पों को रच-रचकर कपोल-कल्पना कर लोग व्यर्थ ही अपने को चक्कर में डालते हैं। मैं तो परमात्मलीन-अचिन्त्य योग-सिद्ध हो चुका हूँ—हमारी तो समझ में ही नहीं आता कि जन्म-मरण लक्षित संसार का स्वरूप कैसा और किस तरह का है? मेरे लिए तो जैसा जन्म वैसा ही मरण—कारण, मैं तो जीवित रहते ही मुक्त हूँ—अब जीवन क्या और मृत्यु क्या? मुझे तो दोनों में कुछ विशेष प्रतीत नहीं हो रहा है। जिसको जन्म-मरण में विकल्प रहता है वही रस-रसायनादि के द्वारा योग-साधन की इच्छा करता है। जो लोग चराचर लोक में, मृत्यु भुवन या स्वर्ग लोक में भ्रमण करते रहने की बात करते हैं—उन्हें अजर-अमर नहीं माना जा सकता है। मुक्त तो वही है जिसकी आत्मा नित्य अविनाशी आनन्द में लीन हो। सरह कहता है कि वह इस विवाद में नहीं पड़ेगा—उसका तो एक ही धाम है—अनुत्तर।

इतिहास और लोकसाक्ष्य

डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त

किसी भी अंचल या जनपद का इतिहास उसके निवासियों का इतिहास होता है, उस पर शासन करने वाले राजाओं-महाराजाओं या नवाबों का नहीं। इतिहासकार द्वारा राजा-महाराजा के युद्धों, विदेशी संबंधों, राज्य में किये गये कार्यों, निर्माणों और सुधारों का क्रमबद्ध वर्णन महत्वपूर्ण समझा जाता था और उससे ही एक विशिष्ट दृष्टि निर्मित हो जाती थी, जिससे वहाँ की जनता की आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक स्थिति का विवरण नियंत्रित होता था। इस तरह इतिहास के केन्द्र में सत्ता ही प्रधान रही, जबकि इतिहासकार की दृष्टि जनता पर केन्द्रित होना चाहिए। इतिहास के केन्द्र में जनता की प्रधानता जरूरी है और अगर राजा-महाराजा का भी इतिहास लिखना है, तो वह भी जनकेन्द्रित दृष्टि से लिखा जाना उचित है।

यही जनकेन्द्रित दृष्टि इतिहास के प्रमाणों या साक्ष्यों के लिए प्रेरक है। शिलालेख, सनदें, ताम्रपत्र आदि अधिकतर राजाओं-महाराजाओं और उनके सामन्तों द्वारा उन्हीं के पक्ष में लिखवाये प्रमाण या साक्ष्य हैं और उन्हीं को इतिहासकार प्रामाणिक मानता है। लोकसाक्ष्यों को अप्रामाणिक कहकर उपेक्षित कर दिया जाता है। गहराई से देखा जाय तो लोकसाक्ष्यों में स्वार्थ की प्रवृत्ति नहीं होती, जबकि राजा या सामन्त अपने यश के लिए या किसी दूसरे स्वार्थवश शिला या कागज पर लिखवाकर कई प्रमाण खड़े कर देते हैं। वस्तुतः इतिहासकार को तटस्थ रहकर किसी भी साक्ष्य पर विचार करना चाहिए। सत्ता द्वारा स्थापित साक्ष्यों के उद्देश्य को भी दृष्टि में रखने की जरूरत है।

लोकसाक्ष्य कई प्रकार के होते हैं, लेकिन वर्गीकरण की दृष्टि से उन्हें निम्न वर्गों में रखा जा सकता है :—

(अ) मौखिक परम्परा में जीवित— जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक मौखिक रूप में प्रचलित रहते हैं जैसे किंवदंतियाँ, लोक कहावतें, लोक कथाएँ, मिथ, लोकनाट्य, लोकगीत आदि।

(ब) लिखित परम्परा में सुरक्षित— सनद, पटौ, पत्र, ग्रंथ आदि जो तत्कालीन तथ्यों का उल्लेख या वर्णन करते हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी सुरक्षित रहते हैं।

(स) उत्कीर्ण— प्रस्तर और काष्ठ तथा ताम्रादि पर खोदे हुए लेख, लोकमूर्तियाँ आदि।

(द) चित्रांकित— दीवालों, गुहाओं, कागजों, कपड़े, चमड़े आदि पर अंकित लोकचित्र।

इन वर्गों में संकेतित लोकसाक्ष्यों की विशेषता यह है कि वे लोक में प्रचलित होते हैं। उनकी रचना भले ही किसी साधारण व्यक्ति के द्वारा हुई हो, पर वे लोक द्वारा स्वीकृत होकर लोक मान्य बन जाते हैं। दूसरी विशेषता है कि वे हर प्रकार के भेदभाव से दूर निरपेक्ष या पक्षपातविहीन होते हैं। इन दोनों विशेषताओं के कारण एक प्रजातांत्रिक देश में उनका महत्व और भी बढ़ जाता है। एक विशेष बात यह भी है कि लोकसाक्ष्य लोकजीवन से जुड़े होने से अधिक उपयोगी और प्रामाणिक सिद्ध होते हैं। राजा द्वारा निर्मित या स्थापित साक्ष्य अतिरिक्त दबाव के कारण उसके राज्यकाल में ही मान्य रहता है, बाद में लोक से उसका कोई संबंध नहीं रहता। यह बात अलग है कि उसमें कोई आकर्षण या चमत्कार हो जो लोक को बाँध सके।

मैं यहाँ हर वर्ग के कुछ ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ जो बुंदेलखण्ड के इतिहास में अपनी अहम् भूमिका के कारण आज भी विख्यात हैं और जिन्होंने लोकसंस्कृति के इतिहास को रचा है। प्रसिद्ध इतिहासकारों के समक्ष इन लोकसाक्ष्यों को उपस्थित करते हुए मैं उनकी शक्ति और प्रभाव के द्वारा उनके दुर्लभ व्यक्तित्व की पहचान कराना चाहता हूँ ताकि बुंदेलखण्ड का इतिहास उन्हें और उन जैसों को अपनाकर अपने सही स्वरूप में अवतरित हो सके।

मौखिक परम्परा में तो कई लोक साक्ष्य ऐसे हैं जो आज भी अपनी प्रभाव क्षमता के कारण अमर हैं। कारसदेव की गाथा में चरागाही संस्कृति का यथार्थ चित्र उभरा है जो चंदेलकालीन अहीर, गड़रियों और गूजरों की संस्कृति रही है। इसी तरह आल्हा की गाथा में चंदेलकालीन लोक का इतिहास छिपा है। तत्कालीन वीरतामूलक प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व, बदला लेने और स्वाभिमानी हठ की मानसिकता का चित्रण तथा नारी के मूक या मुखर आमंत्रण पर अपहरण करने के संघर्ष की अभिव्यक्ति तत्कालीन लोक की चित्तवृत्ति का लोक साक्ष्य है। वत्सराज के रूपकषटकम् में नारी-अपहरण का उदाहरण मिलता है। इस युग में यह समस्या लोककथा और खेल तक पहुँच गयी थी। 'सुअटा' नामक कुमारी कन्याओं के खेल में भूत या राक्षस अथवा दानव कही जाने वाली मूर्ति या भित्तिचित्र स्कन्द का विकृत रूप है। कुमारियाँ अपहरण से रक्षा के लिए अनिष्टकारी ग्रहों के समुच्चय के प्रतीक स्कंद की पूजा करती हैं और मनवांछित पति पाने के लिए गौरी की।

एक उदाहरण जैतपुर के राजा पारीछत का है जिन्होंने 1857 ई. के बहुत पहले सन् 1840-42 में अंग्रेजों से युद्ध किया था। आजादी की लड़ाई के लिए उन्होंने सं. 1893 वि. (1836 ई.) की होली-उपरान्त पहले मंगल की वासन्ती संध्या पर चरखारी में बुढ़वामंगल का आयोजन किया था, जिसमें उन्हें ही नेतृत्व का दायित्व सौंपा गया था। एक उक्ति इसके प्रमाण में लोकप्रचलित है— 'सबरे राजा जुरे चरखारी बुढ़वामंगल कीन। पुन सब जेई आड़ गढ़िया में, पारीछत कों मुहरा दीन॥' यह खबर अंग्रेजों तक पहुँची और कैथा की छावनी ने जैतपुर पर धावा बोल दिया। कई जगह युद्ध हुए। एक लोकगीत कहता है—

पैली न्याँव धँधवा भई, दूजी री कछारन माँह।
तीजी मानिक चौक में, जहँ जंग नची तलवार॥

धँधवा, कछारों और मानिक चौक में भयंकर युद्ध हुए। इतिहास भले ही आनाकानी करे, पर यह लोकगीत प्रस्तर अभिलेख से भी कीमती है। लोककवि राजाश्रित चारण नहीं है जो सिर्फ राजा की प्रशस्ति करे। वह तो लोक का इतिहास लिखता है और वह इतिहास जिसे इतिहास भी नहीं जानता। युद्धों में पारीछत की पराजय हुई और जैतपुर पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। विवश होकर पारीछत बगौरा की डाँग (जंगल) चले गये। फिर यद्ध की तैयारी और अंग्रेजों की फौज से युद्ध। पारीछत गुरिल्ला या छापामार हमलों का सहारा लेते थे, अतएव कई युद्ध हुए। लाहौर को जाने वाली अंग्रेजी फौज भी नौगाँव से डाँग की तरफ मुड़ गयी। कई बार राजा जीते, कई बार हारे। आखिरकार जंगलों और पहाड़ों में भागते फिरे, ताकि आजादी के लिए फिर जूझ सकें। इस वर्णन का साक्षी है 'पारीछत कौ कटक', जो द्विज किशोर रचित एक लोक प्रबंध है और जिसकी हस्तलिखित प्रति की, अंतिम पुष्पिका इस प्रकार है— 'इते श्री राजा पारीछत जू कौ कटक दुसरो संपूरन समापता भादों बदी 2 संवतु 1971 मुकाम छत्रपुर महलन के दुवरै मोदी के पछीत लिषते पं. दुबे भईयालाल...॥' पुष्पिका के अनुसार प्रतिलिपि-काल सं. 1971 (1914 ई.) है। इस लिखित लोकसाक्ष्य की कुछ पंक्तियाँ देखें—

1. *कर कूँच जैतपुर सैं बगौरा पै मेले।*
चौगान पकर गये मंत्र अच्छौ खेले।

बगसीस भई ज्वानन खाँ पगड़ी सेले।
सब राजा दगा दै गये नृप लड़े अकेले॥

2. *एक कोद अरजंट गओ एक कोद जरनैल।*
डाँग बगौरा की घनी भागत मिलै न गैल॥
नृप पारीछत के लरे गओ निस्चर कौ तेज।
जात हतो लाहौर खाँ अटक रहो अंगरेज॥

3. *सब राजा रानी भये, पर पारीछत भूप।*
जात हती हिंदुवान की, राखो सब कौ रूप॥

4. *काऊ नें सैर भाखे काऊ नें लावनी।*
अब कै हल्ला में फुँकी जात छावनी॥

5. *दो सारे कवि तान बिगुल बाँसुरी वालौ।*

पहले उदाहरण में बगौरा के युद्ध की तैयारी का वर्णन है, तो दूसरे में अंग्रेजों की पराजय का। यह भी बताया गया है कि अंग्रेजी फौज लाहौर जा रही थी, पर यहाँ उलझ कर रह गयी। तीसरे में पारीछत को देश की प्रतिष्ठा का रक्षक कहा गया है और चौथे में सैर तथा लावनी के राष्ट्रीय लोककाव्य की शक्ति का आभास है। पाँचवे में लोककवि द्वारा मारे गये दो दुश्मनों का उल्लेख है। स्पष्ट है कि कभी कविता से छावनी फुँकी है और कभी कवि के हाथों से।

लोक प्रचलित उक्तियों में कहीं पारीछत की वीरता का गान है और कहीं उनकी परिस्थिति का। एक-एक उदाहरण देखें—

1. *फिरंगियन की सेना गरद मिल जाय।*
पारीछत कौ तेगा कतल कर जाय॥
भागे फिरंगी महोबे को जायँ॥
पारीछत राजा खदेड़त जायँ॥

2. *महुआ भूँजे खपरिया में।*
पारीछत ने धमके दुफरिया में॥

लिखित परम्परा का एक उदाहरण अभी दे चुका हूँ। बुंदेलखण्ड की कटककाव्य-धारा में उपेक्षित ऐतिहासिक युद्धों का वर्णन है। छोटे आकार के युद्धकाव्य इतिहास के उपेक्षित अध्यायों के आलेख हैं, भले ही उनका नामकरण रासो या रायसो अथवा कटक या समौ कुछ भी हो। उदाहरण के लिए 'बाघाइट कौ रायसौ' इतिहास की एक महत्वपूर्ण गुत्थी सुलझाता है। ओरछा और दतिया के राज्य एक ही घराने के थे और सदैव परस्पर प्रेम से रहे, किन्तु अपने-अपने जमीदारों का पक्ष लेकर संघर्ष में फँस गये। दतिया नरेश पारीछत ने बाघाट के दीवान गंधर्वसिंह के विरूद्ध अपनी सेना भेजकर उसे पराजित किया, जिसका प्रमाण पोलिटिकल सुपरिण्टेडेण्ट, बाँदा के 4 मई एवं 16 मई, 1816 ई. के पत्रों में मिलता है। इस छोटी ऐतिहासिक घटना का महत्व 1857 ई. की क्रान्ति की पृष्ठभूमि के रूप में आँका जा सकता है, क्योंकि तज्जन्य वैमनस्य के कारण ही ओरछा ने अंग्रेजों का विरोध किया था एवं दतिया ने उनका पक्ष लिया था। राज्यों के परस्पर युद्ध और झगड़े ही स्वतंत्रता-संग्राम की असफलता के प्रमुख कारण थे।

उत्कीर्ण लोक साक्ष्यों में सबसे सटीक उदाहरण सती स्तम्भों का है और उसे डॉ. हीरालाल जैसे इतिहासकारों ने अपनाया है। प्रस्तर स्तम्भों पर लोकमूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं और सबसे ऊपर दोनों कोनों की ओर सूर्य और चन्द्र अंकित हैं। एक इतिहासकार विद्वान सूर्य-चन्द्र के अभिप्राय को ठीक से नहीं समझ सके और उन्होंने उसे चंदेलों की उत्पत्ति से जोड़ दिया। उन्होंने लिखा- 'इस कथा की प्रसिद्धि कुछ पाषाण स्तंभों से भी प्रकट होती है। इनमें परस्पर हाथ पकड़े हुए स्त्री-पुरूष के दो चित्र अंकित हैं। दाहिनी ओर चन्द्र तथा सूर्य के चित्र हैं। किन्तु सूर्य और चन्द्र साथ-साथ उदय नहीं होते। सूर्य-चन्द्र का एक साथ अंकन संभवतः हेमवती कथा की ओर निर्देश करता है, क्योंकि उस कथा में यह उल्लेख है कि ग्रीष्म ऋतु में जब सूर्य की किरणें प्रखरतम हो रही थीं, तब भगवान चन्द्र हेमवती के सम्मुख आये।' (जे.ए.एस.बी.,1877 पृ. 234-35 एवं 1868 पृ. 186) वस्तुतः यह अभिप्राय लोकचित्रों और काष्ठ पर बनायी आकृतियों में भी प्रयुक्त होता है और लोककला की पहचान बन गया है। एरण का सती स्तम्भ सबसे प्राचीन पाँचवीं शती का है, जिसमें सेनापति गोपराज के हूणों के विरूद्ध लड़ने और मारे जाने का साक्ष्य मिलता है। बम्हनी गाँव (जिला दमोह) में एक सती स्तम्भ पर लेख है कि 'परमभट्टारक राजाधिराज वली (?) त्रयोपेत कालंजराधिपति श्रीमद हंमीरवर्म्भदेव विजय राज्ये संवत् 1365 समये महाराजपुत्र श्री बाघदेव भुञ्ज्यति अस्मिने काले वर्तमाने ब्राह्मणी ग्रामे', जिससे इतिहासकार ने स्पष्ट कर दिया है कि कुम्हारी इलाके में सिंगौरगढ़ के राजा बाघदेव का राज्य था और वह कालंजर के चंदेलनरेश हम्मीरदेव का माण्डलिक था। तत्कालीन नाटककार वत्सराज के रूपकषटकम् में सती का प्रमाण मिलता है। इस अंचल में सती स्तम्भों की भरमार है जिनके सर्वेक्षण से इतिहास को कुछ नये तथ्य मिलेंगे।

तोमरकालीन ग्रंथों में अखाड़ों की चर्चा आई है। उनकी एक

समृद्ध परम्परा पूरे बुंदेलखण्ड में रही है। आचार्य केशव ने तो अखाड़े को यानी कि संगीत, कविता, नृत्यादि कलाओं के अखाड़े को राजनीति का लक्ष्य बना दिया था— 'कियो अखारो राज को, सासन सब संगीत'। ओरछा के अखाड़े ने रीतिकाव्य को जन्म दिया था। लेकिन इसी अखाड़े की एक विनोदपूर्ण पंक्ति ने पन्ना नरेश अमानसिंह को अकोड़ी की गढ़ी पर आक्रमण करने को विवश कर दिया। फल यह हुआ कि उनके बहनोई प्रानसिंह मारे गये और उनकी बहिन के आँचर में बहनोई का सिर गिरकर ऐसे हँसा जैसे वह भाई-बहिन के रिश्ते का उपहास कर रहा हो। दूसरी तरफ ओरछानरेश हरदौल ने देवर-भाभी के आदर्श रिश्ते की स्थापना के लिए विषपान कर लिया था, जिसके साक्षी हैं हर गाँव-नगर में पुजते हरदौल के चबूतरे। क्या अखाड़े और चबूतरे इतिहास की वस्तु नहीं है? मेरी समझ में बुंदेलखण्ड का मध्ययुगीन इतिहास इन जैसे लोकसाक्ष्यों के बिना अपूर्ण रहेगा।

महोबा के मनियाँदेव को प्रसिद्ध इतिहासकार वी.ए. स्मिथ ने मनियाँदेवी माना है और उसके आधार पर चंदेलों की उत्पत्ति आदिवासी गोंड़ या? भर से सिद्ध कर दी है। परन्तु स्मिथ का मत इसलिए मान्य नहीं है कि मनियाँदेव मणिभद्र यक्षदेवता हैं। उन्हें (चंदेलों को) हिन्दुआइज्ड गोंड कहना उचित नहीं है। लोकमूर्तियों और लोकचित्रों का अपना ऐतिहासिक महत्व है। दमोह जिले के रोंड़ गाँव में सून नदी के किनारे प्रस्तर पर अश्वारोही का चित्र अंकित है और लिखा है 'श्री बाघदेवस्य दागी बैजू संवत् 1359', जिससे बाघदेव के शासन का पता चलता है। मृण्मय मूर्तियों से तत्कालीन संस्कृति का चित्र मुखर हो जाता है।

उक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि लोकसाक्ष्य किसी भी अंचल के इतिहास-लेखन में सहायक होता है। संस्कृति का इतिहास लोकसाक्ष्यों की अनुपस्थिति में नहीं लिखा जा सकता। जन-जन या लोक की संस्कृति और इतिहास ही सही इतिहास है और वह लोकसाक्ष्यों के बिना अपूर्ण है। इतिहास और संस्कृति की समस्याएँ लोकसाक्ष्यों से सुलझायी जा सकती हैं। इसलिए विद्वानों से मेरा अनुरोध है कि वे लोकसाक्ष्यों को उपेक्षा की दृष्टि से न देखकर उन्हें प्रेमपूर्वक अपनाएँ। इससे हमारा इतिहास-लेखन हर पक्ष के लिए उपयोगी होगा और प्रजातन्त्र की अपेक्षाएँ पूरी करेगा।

जनकवि ईसुरी– प्रासंगिकता के नये संदर्भ

प्रो. कान्तिकुमार जैन

समीक्षकों द्वारा किसी भी कवि के संबंध में एक ही बात बारम्बार दुहराई जाने से उस कवि की एक छवि बन जाती है। पाठक भी कवि की उसी छवि को प्यार करने लगते हैं। उस स्थापित छवि से हटकर कवि के काव्य में कोई बात दिखती भी है तो समीक्षक उस पार्श्व से बचकर निकल जाना चाहते हैं और पाठक भी मुख्यधारा से हटकर बहने वाली इन प्रणालियों से भींगने का चाव नहीं रखते। ऐसा ही कुछ बुंदेलखण्ड के जनकवि ईसुरी के साथ हुआ है। यह बात सैकड़ों बार दुहरायी गयी है कि ईसुरी फगवारा थे और ऐन्द्रिक सौंदर्य और माँसल यौवन के चित्रण के बिना उनका काव्य एक कदम भी आगे नहीं बढ़ पाता। बुंदेलखण्ड के गाँव में नर-नारी के बीच पनपने वाले अकुण्ठ और अदम्य प्रेम का जैसा चित्रण उन्होंने किया, वैसा विद्यापति को छोड़कर और कोई दूसरा हिन्दी कवि नहीं कर पाया। सुंदरी और आकर्षक रजऊ ईसुरी काव्य की धुरी है और इसी धुरी के आसपास ईसुरी का जीवन विचरता है, प्रकृति डोलती है,तीज त्यौहार चक्कर लगाते हैं और सुबह शाम होती है। रजऊ को लेकर ईसुरी के जीवनकाल में कम गलतफहमी नहीं हुई थी। मरने के बाद भी इस गलतफहमी में कोई कमी नहीं आई है। अभी भी ईसुरी की चर्चा चलते ही पनघट पर पानी भरती पनिहारनें, अपने प्रेमी से अभिसार के लिए निकली प्रेमिकाएँ,मेले में जाने के लिए बनाव श्रँगार करती तरूणियाँ और विरह में व्याकुल प्रेमी-प्रेमिकाएँ अपनी सारी चेष्टाओं और भंगिमाओं के साथ सामने आने लगती हैं। ईसुरी रजऊ के सौंदर्य से, उसके प्रेम से आहत, उसके प्रेम की सामाजिक वर्जना से लांक्षित प्रेमी थे-इसमें कोई संदेह नहीं। उनकी रजऊ विद्यापति की रामा और घनानंद की सुजान की तरह उनके काव्य की धुरी थी किन्तु ईसुरी कोई गैर जिम्मेदार, आवारा, फगवारा नहीं थे। ईसुरी कोर्ट कचहरी के काम निपटाते थे, बड़े-बड़े हाकिम हुक्कामों से मिलते-जुलते थे। वे कई जमींदारों के कारिंदा थे। उनकी काव्य प्रतिभा से रीझकर छतरपुर नरेश ने उन्हें राजकवि बनाना चाहा था। ईसुरी अपने समाज से परिचित थे और अपने समय की उनको अच्छी पहचान थी। लोग उनसे बराबर मिलने आते थे और सामान्य जन के दुःखदर्द से उनकी आँखें गीली होती थीं। यही नहीं, अंग्रेजों के अन्याय-अत्याचारों पर वे अपना विरोध प्रगट करने से नहीं चूकते थे। जब झाँसी से मानिकपुर रेल्वे लाईन बनाने के लिए लकड़ी के स्लीपरों की आवश्यकता हुई तो अंग्रेज बहादुर ने झाँसी मानिकपुर के जंगलों से महुए के हजारों पेड़ कटवा दिये। महुआ बुंदेलखण्ड की निर्धन जनता का मुख्य भोजन है। महुआ कटने से झाँसी मानिकपुर क्षेत्र में भुखमरी की नौबत आ गयी। ईसुरी ने अपना विरोध दर्ज कराया–

इनपे लगे कुलरियाँ घालन।
भैया मानस पालन।
इन्हैं काटबौ नइ चइयत तौं, काट देत जो कालन॥
ऐसे रूख भूँख के लाने, लगवा दए नंद लालन॥
जे कर देत नई सी 'ईसुर' मरी मराई खालन॥

अरे भाई! इन पर कुल्हाड़ी मत चलाओ। महुए के ये पेड़ तो मनुष्यों का पालन करने वाले हैं। हमारा समय तो इन्हीं के सहारे कटता है। इनको नहीं काटना चाहिए। महुआ जैसे वृक्ष तो भूख से रक्षा के लिए ईश्वर की देन है। मरणासन्न लोगों में, ईसुरी कहते हैं, ये नवजीवन का संचार करते हैं।

ईसुरी फलदार वृक्ष के ही संरक्षक, अनुशंसक नहीं हैं। वृक्ष मात्र के प्रति वे आत्मीयता का अनुभव करते हैं। वे नीम के पेड़ को आशीर्वाद देते हुए कहते हैं–

सीतल एइ नीम की छइयाँ।
घामो व्याप्त नईयाँ
धरती जे छू-छू जावें, है लालौई डरइयाँ॥
फिर करबू आराम लौटके, अपने जियरा खइयाँ॥
एसोइ हरौ बनो रय 'ईसुर' हमरे जियत गुसईयाँ॥

यह नीम की छाया बड़ी शीतल है। इसकी छाया में घाम नहीं लगता । इसकी हरी-भरी डालियाँ पृथ्वी को छू-छू लेती हैं। जब मैं वापस लौटकर आऊँगा तो मन की शान्ति के लिए इसी नीम के नीचे विश्राम करूँगा। ईसुरी चाहते हैं कि उनके जीवनकाल में यह नीम का वृक्ष ऐसा ही हरा-भरा बना रहे।

पर्यावरण के प्रति ईसुरी की चिन्ता लोक संस्कृति में और लोकमंगल में उनके गहरे विश्वास की सूचक है। ईसुरी परिवार में बहुत बच्चों के पक्ष में नहीं हैं। बड़े परिवार की झंझटों से ईसुरी परिचित हैं। जो बहू हर साल बच्चे की माँ बनती है, उसे बुंदेलखण्ड में 'बरसान' कहते हैं। इस बरसान आयोजन से बहू का सौंदर्य तो नष्ट होता ही है,व्यावहारिक कठिनाइयाँ भी कम नहीं होती हैं। धोबिन कपड़े धोने से मना करती है और बरेठन प्रसूति के कपड़े साफ नहीं करना चाहती। खबास भी नांही करने लगता है। खाने की कमी पड़ती है सो अलग। ईसुरी के शब्दों में–

पर गई लरकन की रगदाई
बऊ बरसान कहाई
धोबन ज्वाप देत धोंबे खों, अब नइँ होत धुआई॥
सोरे धोत बसोरन चिक गई, नांहि करत है नाई॥
कैसी करें रंज के मारे घर में आफत आई॥
आँगन सो घर हो गओ 'ईसुर' माँगन लगे खबाई॥

इतिहास के पृष्ठों पर बुन्देलखण्ड के कई अकालों की भयावहता और विभीषिका अंकित है। बुंदेलखण्ड में पड़ने वाले अकालों से भी ईसुरी की संवेदना आहत होती है। अकाल के दिनों में ईसुरी सामान्यजन को कच्चे बेरों पर जीवित रहते देखकर दुःखी होते हैं। घर में दो-दो दिन चूल्हे नहीं जलते। विकलांग और अभिजात सभी अकाल से त्रस्त हैं। एक अकाल ऐसा भी पड़ा जिसमें न गेहूँ-पिसी हुई और न महुआ ही बचा। स्त्रियों के आभूषण बिक गये। ले देकर स्त्रियों का बिछुआ ही बचा। ईसुरी इस दर्द का, इस असहनीय दुर्भाग्य का चित्रण इस प्रकार करते हैं–

आसौं होस सबई के भूले
कइयक काँखे कूल्हे
कच्चे बेर बचे हैं नइयाँ, कंगीरन ने रूले॥
दो-दो दिन के फाँके पर गए, परचत नइयाँ चूल्हे॥
मरे जात भूकन के मारे, अंदरा, कनमा, लूले॥
मारे-मारे फिरत 'ईसुरी' बड़े-बड़े दिन दूले॥
....
आसों लै गओ साल करौंटा
करौ खाव सब खौंटा
गोऊँ-पिसीखों गिरूआ लग गयौ, महुअन लग गयो लौंका॥
ककना दौरी सब घर खायो, रै गओ फकत अनोटा॥
कहत 'ईसुरी' बाँधे रहियो, जबर गाँठ को घोंटा॥

ईसुरी रीतिकाल के समसामयिक कवि हैं। हिन्दी के रीतिकालीन कवियों ने अकालों का चित्रण नहीं किया है। ईसुरी एक सजग कवि हैं और इन अकालों से लड़ने के लिए यह कहकर जनता के आत्मविश्वास में दृढ़ता भरते हैं– कहत ईसुरी बाँधे रहियो जबर गाँठ को घोंटा। ईसुरी अपने आसपास के सामाजिक जीवन में बहुत गहरी पैठ रखने वाले कवि हैं। बनी बनाई खेती बिगड़ जाये तो वे दुःखी होते हैं। जो नयी फसल बोते हैं और 'कैश क्राप' बोकर पैसे खड़े करने की तदबीर जानते हैं– ईसुरी उनकी पीठ ठोकते हैं–

उनके दूर दलद्दुर भिनकें
बैलइती जिन जिन कें
ऐसी भई बढ़ानी नइयाँ, ढ़ोई रात कें दिन कें॥
बम्बई चलौ, चलौ कलकत्ता, गिरे करोड़न गिनकें॥
सन् अठारह सौ छप्पन मइया बुवे पटेते रिन के॥
जनम जनम के रिन चुकवा दए, परी फदाफी उनकें॥
बड़े अभागी आसों 'ईसुर' तिली नइजा जिनकें॥

जनजीवन को प्रभावित करने वाले नये परिवर्तनों पर भी ईसुरी नजर रखते हैं। देश में रेलगाड़ी चलने लगी है। यात्रियों को यहाँ वहाँ जाने में सुविधा हो गयी है। यह तो बड़ी प्रसन्नता की बात है। किन्तु यदि गाँठ में पैसा न हो तो क्या रेल, क्या जहाज?

अपनी मुलक बादसा रेलें।
पवन से आगे मेलें।
जी टेसन कौ जौन कायदा, जौन मिनट जा मेलै॥
मँहु हो उतरन चढ़त मुसाफर, होत सिमिट के भेले॥
जाँ चाऔ ता जाओ 'ईसुरी' पैसा होय अकेले॥

बुंदेली के ईसुरी की ही तरह बिहार के लोक कवि ने बड़ी व्यथा से कहा था—

रेलया न बैरी जहजवा न बैरी।
उई बैरी पईसवा हो।

ईसुरी की कुछ नई फागों का भी पता चला है। इन फागों में ईसुरी रूप और रस के आराधक ही नहीं, जनता की व्यथा-संताप के भी कवि के रूप में प्रत्यक्ष होते हैं।

ईसुरी अध्यात्म को भी नहीं भूलते। जीवन के अंतिम दिनों में वे आध्यात्मिक हो गये थे। राग और रंग का कवि वार्धक्य में यदि ईश्वर को स्मरण करने लगे तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। उत्साह,प्रेम,रंग और रूप के हमारे दौर के'दिनकर' और 'अंचल' जैसे कवि 'हारे को हरीनाम'और 'मधु केवल मधुसूदन में' लिखने लगे हों तो निकट आ रही मृत्यु का अंधियारा 'ईसुरी' को ईश्वर के चरणों की याद दिलाये तो क्या आश्चर्य? ईसुरी ने अपना इतिवृत्त भी कविता में लिखा है। वे अपनी भाषा की मोहिनी से परिचित थे। वे जानते हैं कि उनकी 'इन फागन पे फाग न आवें कैयक करो अनोई।' गालिब ने जिस आत्मविश्वास से लिखा था— 'कहते हैं कि गालिब का है अंदाजे बयाँ और' वैसा ही आत्मविश्वास ईसुरी को अपनी वाक्शक्ति पर है। ईसुरी अपनी दुर्निवार सौंदर्य लिप्सा, अपने अकुण्ठ श्रृंगारातिरेक, अपने सहज माँसल रूप चित्रण में 'बच्चन', 'अंचल', नरेन्द्र शर्मा और 'सुमन' के पूर्ववर्ती दिखाई पड़ते हैं। जिस प्रकृतवाद (नेचरल्ज़्म) की चर्चा हिन्दी कविता के संदर्भ में छायावाद के अवसान के बाद सुनाई पड़ी, उसकी पहली और स्पष्ट पगचाप ईसुरी में सुनाई पड़ती है। यह रीतिकाल के अवसान के दिन थे। अभी भारतेन्दु के आने में देर थी। ईसुरी गवई गाँव के कवि थे। हिन्दी के मूर्धन्य कवियों से उनका परिचय न के बराबर था। पर जादू तो वह जो सिर पर चढ़कर बोले।

ईसुरी हिन्दी काव्य की मुख्यधारा से कटे हुए कवि माने जाते हैं। ब्रजभाषा चार-पाँच सौ वर्षों तक हिन्दी कविता की मुख्यधारा की वाहिका रही। बुंदेली को यह सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। बुंदेली के इस रससिद्ध कवि का जन्म सन् 1824 में हुआ था और मृत्यु 1909में। आधुनिक हिन्दी कविता के रससिद्ध कवि बच्चन ईसुरी को नहीं भूलते। वे अपनी कविता पर ईसुरी की छाया स्वीकार करते हैं। 'मधुशाला' पर जब उमर खैय्याम और फ्रिट्जेराल्ड के प्रभाव का सभी दिशाओं से विज्ञापन किया जा रहा हो, बच्चन जी की यह स्वीकारोक्ति कि उनकी 'जो असंभव है उसी पर आँख मेरी,चाहती होना अमर,मृत राख मेरी' अथवा 'और जलूँ उस ठौर जहाँ पर कभी रही हो मधुशाला' जैसी पंक्तियों पर ईसुरी की 'यारो इतनो जस कर लीजो, चिता अंत न दीजो' का प्रभाव है, ईसुरी की महिमा की स्वीकारोक्ति है। ईसुरी को हमें फिर से नये संदर्भों में पढ़ने, समझने और परखने की आवश्यकता है। आधुनिक हिन्दी कविता की प्रकृतिवादी प्रवृत्तियों का जब इतिहास लिखा जायेगा और उसे आधुनिकता के द्वार तक पहुँचाने वाले कवियों की प्रावीण्य सूची तैयार की जायेगी तब ईसुरी को भूलना या छोड़ना उनके साथ बड़ा अन्याय होगा।

दण्डार और भवाड़ा

मालती शर्मा

भारतीय लोकनृत्यों की उत्पति की अनेकानेक दंतकथाएँ हैं। हमारे पुराण और नाट्यशास्त्र नृत्य नाट्यों का उद्‌गम शिव पार्वती से मानते हैं। शिव ताँडव नृत्य के और पार्वती लास्य की गुरू हैं।

गोंड आदिवासी मानते हैं कि उन्हें नृत्य करने की प्रेरणा उनके देवता ने मोर का रूप धारण करके अपने नृत्य से दी है। तभी से वे मोर जैसी कलंगी लगाकर और मोर के पंखों जैसे रंग-बिरंगे वस्त्र पहनकर नाचने लगे हैं।

बैगा आदिवासियों में भी एक रोचक कहानी प्रचलित है। वे कहते हैं कि एक बार ऐसा हुआ कि खिली चाँदनी रात में उनके पूर्वजों ने एक अद्‌भुत नृत्य देखा। देखते क्या हैं कि तालाब के किनारे पर बाघ नगाड़ा बजा रहा है, चीता दुंदुभी और उसकी ताल पर मोर पंख फैलाकर, मस्त होकर नाच रहा है। उन्होंने तब वह नृत्य सीखा और अपने कबीले को सिखाया इस तरह नृत्य का प्रचलन हुआ।

विश्व की लोकवार्ता में नृत्य नाट्य अच्छी फसल, युद्ध शिकार, भूत पिशाच बाधा भगाने के साथ रोग, महामारी अनिष्ट टालने के अनुष्ठानों से जुड़ा है। नृत्य नाट्य का प्रमुख हेतु विभिन्न देवी देवताओं को, शक्तियों को प्रसन्न करना है। नाचते-नाचते ये नर्तक देवरूप हो जाते हैं। उनमें देवता प्रवेश कर जाते हैं तो आदिवासी उनसे प्रश्न पूछ युद्ध में विजय, अच्छी फसल और रोग नाश की भविष्यवाणियाँ प्राप्त करते हैं। नृत्य नाट्य अपना देहाभिमान भूलकर परा दशा प्राप्त करने का देवता का सामीप्य पाने का साधन है। विज्ञान भैरव कहता है :—

भ्रान्त्वा भ्रान्त्वा शरीरेण सहसा भुवि पातनात्।
क्षोभ, शक्ति बिरामेण परा संजायते दशा॥ —विज्ञान भैरव श्लोक॥57॥

अर्थ है नृत्य में गोलाकार घूमते-घूमते हुए, नृत्य करते हुए जब शरीर भूमि पर गिर जाता है तो उस समय अन्तःकरण की क्षोभ शक्तियाँ विराम पाती हैं और परादशा प्राप्त होती है।

ये तो सिद्धांत मुनिमानस की उपज हैं। आदिवासियों के नृत्यों का उद्‌गम सहज उल्लास और स्फूर्ति के प्रस्फुटन से हुआ। प्रकृति के विविध रूप, हावभाव और पशुपक्षियों के क्रीड़ा कौतुकों के अनुकरण से हुआ होगा। ग्रीक दार्शनिक अरस्तू ने नाट्यों-नृत्यों का मूलाधार अनुकरण माना है। ये नृत्य नाट्य उनके सामूहिक उल्लास की, हर्ष की सहज अभिव्यक्ति हैं। इनका उद्‌देश्य प्रकृति के महाभूत धरती माता की पूजा, वनश्री की आद्य शक्ति आराधना अवश्य रहा है।

आदिवासी नृत्यों की कुछ अपनी विशेषताएँ हैं जो इन्हें अन्य नृत्यों से पृथक करती हैं :—

ये सामुदायिक होते हैं या युगल सामूहिक। ये नृत्य-नाट्य किसी विशिष्ट जाति क्षेत्र और कबीले के अपने-अपने होते हैं। ये ऋतु परिवर्तन और फसलों के उत्सव से जुड़े होते हैं। इन नृत्यों की शिक्षा किसी गुरू से नहीं लेनी पड़ती। पारम्परिक रूप से ये देखते-देखते और नाचते-नाचते अपने आप आ जाते हैं। इन नृत्यों-नाट्यों में बाप-बेटा और पोता साथ-साथ नाचते हैं। कुछ विशिष्ट अनुष्ठानिक रूपों को छोड़कर इनमें अपनी आन्तरिक स्फूर्ति और उल्लास से कोई भी शामिल हो सकता है। इनमें अधिकतर नाट्य-नृत्य और गीत घुले मिले रहते हैं।

पाश्चात्य लोकवार्ताओं की नृत्य सम्बन्धी अवधारणाएँ भी इन्हीं से मिलती-जुलती हैं।

महाराष्ट्र के भिल्ल माड़िया और ठाकुरों में शिकार नृत्य प्रचलित है। पश्चिमी घाट के आदिवासियों के नृत्य अधिकतर धार्मिक स्वरूपों के हैं। ये पहाड़ों के देव और पूर्वजों के आवाहन के लिए किये जाते हैं। 'देवखके' तथा ईदल पूजा इसी प्रकार के नृत्य हैं।

गोंडों का नृत्य 'भिवसन पूजा' लिंगाल देव को प्रसन्न करने के लिए किया जाता है। करसाड तथा मरमीनाच मृतात्माओं के लिये किया जाता है।

'दंडार' महाराष्ट्र के यवतमाल नांदेड़ तथा चन्द्रपुर जिलों के गोंड तथा कोलमा आदिवासियों का पारम्परिक नृत्य है। भिल्ल आदिवासियों का 'डिंडण' यदि होली पर होता है तो 'दंडार' दीवाली पर।

वैसे आदिवासियों की अवधारणा के अनुसार दंडार एक प्रकार का 'मुजरा नृत्य' है, जो बड़ों की प्रसन्नता के लिए किया जाता है। अत्यंत वृद्ध दंडारी श्री सोनबाजी झिवराजी न्याहाटे ने बताया कि दंडार को 'मुजरा नृत्य' सीधे-सीधे तो नहीं कहा जा सकता किंतु नृत्य के अन्तिम दिन भाई दूज को दंडार नर्तक गाँव में प्रत्येक घर के द्वार पर नृत्य करते हैं और इनाम माँगते हैं। गाँवों में आज भी जुहार करने, सलाम करने जाने की प्रथा है। इस संदर्भ में दंडार का ध्येय वरिष्ठों की प्रसन्नता भी है इससे इन्कार नहीं किया जा सकता।

कोलमा आदिवासियों का दंडार दो प्रकार का होता है— कोयाभोगी दंडार, कोतालभोगी दंडार।

कोतालभोगी दंडार राज गोंडों के सम्मान में किया जाता है। कोयाभोगी दंडार गाँव के प्रमुखों के सम्मान में होता है। इस नृत्य को करने के बाद नर्तकों को इनाम दिया जाना जरूरी है। गोंडों के दंडार के तीन प्रकार हैं— छोटा दंडार, बड़ा दंडार और चौताली दंडार।

छोटे दंडार में घेरा छोटा होता है। इसे 'गोल साड़ी का दंडार' भी कहते हैं। तात्पर्य है नर्तकों का घेरा साड़ी की घुमेर जितना होता है। बड़े दंडार का घेरा बड़ा होता है। चौताली दंडार एक लाइन का होता है।

दंडार नृत्य की उत्पत्ति लिंगाल देवता की पूजा से हुई। यह देवता दूर पहाड़ों में निवास करता है। मूलतः लिंगाल कभी पहाड़ ही था। यह कल्पना संभव भी लगती है क्योंकि आदिवासियों का पहाड़ों से अत्यंत निकट का रिश्ता है।

लेकिन आजकल कोलामा और गोंड दोनों ही आदिवासी जातियों में 'लिंगाल' का अर्थ श्रीकृष्ण रूढ़ हो गया है। ऐसी भी जनश्रुति है कि लिंगाल देव की इस नृत्य पूजा दंडार की शुरूआत भिवसन देव ने की है। कहीं-कहीं दंडार को 'कृष्ण की रामलीला' का प्रतीक माना जाता है।

दंडार नृत्य की शुरूआत विधिवत 'स्थापना पूजा' से होती है। इस स्थापना पूजा में कुल कुटुम्ब के अनुसार पाँच या सात गोबर के कंडे थापे जाते हैं, उन्हें पूजा जाता है। इसे पाँच पाँडवों की पूजा स्थापना कहा जाता है।

दीवाली से दंडार की शुरूआत होती है और भाई दूज को समाप्ति। स्थापना पूजा के बाद तरुण दंडार नर्तक नृत्यवेश अर्थात् साड़ियाँ पहनते हैं। ये नृत्यवेश वे दंडार की समाप्ति तक उतार नहीं सकते। तब गाँव के मुखिया महाजन के घर से दंडार की शुरूआत होती है। वहाँ से नर्तक गाँव-गाँव घूमकर नृत्य करते हैं, चंदा और इनाम एकत्रित करते हैं। इसे 'कारभाटी' भी कहा जाता है।

अधिकतर इस नृत्य में ढोल, डफ, बान्स या पाउल नामक बाँसुरी का प्रयोग होता है। गाँव से बाहर जाते समय दंडारी डफ बजाते हैं। इसमें चोंडक, झाँझ, ढोलक और 'तिद्रबुवी' नामक वाद्य का प्रयोग होता है। नृत्य में पहला नमन मारूती को, दूसरा नमस्कार बिरसन देव को, तीसरा प्रणाम बड़ा देव को और चौथा नमन गणपति देव को किया जाता है। यह क्रम बना कैसे यह कहना कठिन है।

दंडार, नृत्य की चालों अथवा कहें तो पद्धतियों को 'काडया' 'कडया' या 'कोला' कहा जाता है। इस नृत्य में एक विशिष्ट क्रम में इक्कीस तालें आती हैं। किन्तु आज दंडार की सारी इक्कीस तालें प्राप्त नहीं होतीं। नर्तक महाराष्ट्र के लोकनाट्य तमाशा और सिनेमा के अनुकरण पर उसी तरह के हावभाव दिखाने लगे हैं, वैसे ही पद संचालन करने लगे हैं। लेकिन दंडार नृत्य की इक्कीस तालें हैं इस पर सभी जानकार और शोधक एकमत हैं। आज जो तालें दंडार में नाची जाती हैं उनमें भी चार तालों का विवरण ही नहीं मिलता। अतः वर्तमान स्थिति में दंडार की जो तालें नर्तक नाचते हैं वे केवल बारह ही हैं।

प्रथम ताल 'भीमाल कोला' है। यह 'भिवसन' देवता की ताल है। इस नाच में 'तिद्रवुवी' ढोलकी और शहनाई बजती है। इस ताल का विशिष्ट पग संचालन कतारबद्ध होता है। यह पग-संचालन केवल कोलमाओं के प्रमुख देवता भिवसन की पूजा के समय किया जाता है। दंडार में नर्तक भीमालकोला नाम देकर साधारण नाच ही नाचते हैं। शेष 11 तालों के नाम इस प्रकार हैं— चंडकाई कोला, ढेमसा कोला, साकी कोला, बेलुंग कोला, कुही कोला, उरूप कोला, झलका कोला, झोला कोला, मोहरम कोला और हुडे कोला।

मिरची कोला, चैकचंदन कोला और कुट्टी कोला इन तीन तालों को कैसे नाचा जाता है, इसकी जानकारी नहीं मिलती।

उपर्युक्त तालों में तीसरा ताल 'ढेमसा कोला' भी पृथक नृत्य है और यह अनुष्ठानिक नृत्य है। इस नृत्य में कोढाल नामक मुखौटा आवश्यक होता है। यह मुखौटा रोग, शोक, अरिष्ट और अनिष्ट टालने के लिए ये जब घेरे हों तो इनसे मुक्ति पाने के लिए किया जाता है। ऐसा विश्वास है कि कोढाल मुखौटे में समाहित आत्मा इस नृत्य से जागृत होती है और रोगों से अरिष्ट से रक्षा करती है। इसलिए यह नृत्य विवाह पर भी किया जाता है।

कुट्टी कोला ताल भी एक कठिन ताल है। इसमें शारीरिक कलाबाजी अधिक रहती है। नर्तक एक-दूसरे के ऊपर खड़े होकर नाचते हैं। कठिन अभ्यास और खतरा होने से यह ताल भी अब नहीं नाची जाती।

इतना सब होते हुए भी दंडार मन के उल्लास की विविध लहरें व्यक्त करने वाला अपनी तरह का नृत्य है। इसके साथ समानान्तर रूप में दंडार गायन भी है। दंडार गायन में कथाएँ रहती हैं। महाराष्ट्र के आदिवासियों के दंडार नृत्य में यदि भावाभिव्यक्ति का माध्यम ताल और नृत्य है तो 'भवाड़ा' में यह अभिव्यक्ति ताल और मुखौटों से होती है। दंडार की अपेक्षा भवाड़ा की ओर अध्येताओं का ध्यान अधिक गया है। इस पर वृत्त चित्र भी बने हैं।

भवाड़ा आदिवासियों का मूल नृत्य नाट्य है। यह मुख्यतः वारली आदिवासियों का नृत्य है। वारली के अतिरिक्त कोकण और डिंगण भील भी इसे नाचते हैं। इसे बोहड़ा, भोवाड़ा, बोड़ा भी कहते हैं।

भवाड़ा में मुखौटों की प्रमुखता है। यह आदिवासियों का पितृपूजा नृत्य है और मुखौटे पहनकर ही नाचा जाता है। भवाड़ा में नाच के मुखौटे रामायण महाभारतकालीन विभिन्न पात्रों के देवी-देवताओं के, यहाँ तक कि एकादशी, द्वादशी, मकर संक्रांति जैसी तिथियों के भी रहते हैं। कौरव, पाँडव और रावण के मुखौटे खूब बड़े होते हैं। ये मुखौटे लकड़ी, मिट्टी, कागज की कुट्टी, धान की पयाल के बनते हैं।

यद्यपि भवाड़ा सामुदायिक और पारंपरिक नृत्य है लेकिन परम्परागत रूप से विशिष्ट मुखौटे जैसे गणेश, अर्जुन, भीम, संतोषी माता इत्यादि नाचने का सम्मान और अधिकार किसी एक निश्चित कुल का ही होता है। भवाड़ा नर्तक भवाड़ा नृत्य इतनी श्रद्धा से करते हैं जैसे पूजा कर रहे हों। यह श्रद्धा भाव मुखौटों के कारण है। हर परिवार अपने लिए निश्चित मुखौटा कागज कुट्टी और धान की पयाल से अपने हाथ से बनाता है। उन्हें सँवारता सजाता है। पहले तो प्रतिवर्ष नये मुखौटे बनाकर पुराने विसर्जित कर दिये जाते थे। आजकल यह चलन समाप्त हो रहा है। आजकल तो कागज के बने मुखौटे किराये पर भी ले लिये जाते हैं।

भवाड़ा वरली आदिवासियों का मनौती नृत्य है। कोई भी श्रद्धालु व्यक्ति गाँव के सम्मुख भवाड़ा की मनौती मानता है। मनोकामना पूरी होने पर भवाड़ा किया जाता है। यदि मनौती पूरे गाँव की हो तो तीन वर्ष तक भवाड़ा किया जाता है। भवाड़ा तीन दिन होता है। पहले दिन भवाड़ा की घोषणा होती है। मशालें जलती हैं और इस दिन एक मुखौटे की झाँकी निकाली जाती है। दूसरे दिन के नृत्य-नाट्य में काफी मुखौटे लगाये जाते हैं। सारे मुखौटे जब एक ओर से आते हैं तो एक व्यक्ति जिसे सूत्रधार कहा जा सकता है मुखौटाधारियों का परिचय कराता जाता है—

'हे कोण आले? खंडोबा आले' (ये कौन आये हैं? ये खंडोबा आये है) 'अब ये कौन आये हैं? ये पाँडव राज आये हैं।' इस प्रकार सभी की प्रविष्टि के साथ कहा जाता है। ये मुखौटाधारी पात्र अपने-अपने मुखौटे के अनुरूप नृत्य के साथ जैसे युद्ध वगैरह हो तो वैसा अभिनय भी करते हैं। तीसरे दिन भवाड़ा के सारे पात्र मुखौटे लगाकर नाचते हैं। तब नृत्य अधिक दर्शनीय हो उठता है। भवाड़ा नृत्य-नाट्य की समाप्ति चौबीस भुजावाली भवानी माता के मुखौटे से होती है। किन्तु आज आदिवासी क्षेत्रों में भवाड़ा नृत्य नाट्य की परम्परा धीरे-धीरे विलुप्त हो रही है।

वारली चित्रकला पर शोध करने के दौरान डॉ. सुजाता बजाज वारली आदिवासियों के बीच रहीं। उन्होंने मुझे बताया कि आज नर्तक ये नहीं जानते कि वे भवाड़ा क्यों नाच रहे हैं? भवाड़ा के प्राचीन गीत और संवादों का आज पता नहीं लगता है। युवकों का ध्येय तो अब फिल्म वालों के लिए नाचकर कुछ पैसा कमा लेना भर हो गया है। फिर भी महाराष्ट्र के आदिवासियों की कला विश्व में अभी भी शोध का विषय है, जिसमें खोज की संभावनाएँ छुपी हैं। इस पर अभी बहुत कम काम हुआ है।

निमाड़ी पहेली साहित्य

रमेशचंद्र तोमर 'निमाड़ी'

मध्यप्रदेश की लोकभाषाओं में निमाड़ी का अपना अनूठा स्थान है। खण्डवा, खरगौन और धार जिले के धरमपुरी, मनावर और कुक्षी, हरदा-होशंगाबाद के सीमान्त भागों में निमाड़ी बोली जाती है। निमाड़ी साहित्य में लोकगीत,लोकगाथाएँ,लोक कथाएँ,पहेलियाँ अत्यंत सशक्त ज्ञानवर्धक एवं मनोरंजक हैं। हिन्दी साहित्य में पहेली के नाम से परिचित निमाड़ी साहित्य में ताड़ने वाली वार्ताएँ के नाम से जानी जाती है। संस्कृत में इसे प्रहेलिका नाम दिया गया है।

पहेलियाँ बालकों के मनोरंजन, ज्ञानवर्धन एवं तर्कशक्ति का विकास करने वाली होती हैं। निमाड़ के गाँवों में माता-पिता, दादा-दादी, नाना-नानी बालकों की जिज्ञासा जगाने हेतु ताड़ने वाली वार्ताएँ कहते हैं। जब बालक उसका समुचित उत्तर नहीं दे पाता तो माता-पिता, दादा-दादी उनसे पूछते हैं– 'थारी अक्कल फूटी' तात्पर्य यह है कि क्या तुम उत्तर बताने में असमर्थ हो तब दादा-दादी, नाना-नानी उसका सही उत्तर बच्चों को कुछ इस प्रकार बतलाते हैं कि पहेली और उसका उत्तर सदा के लिए उसे याद रह जाय।

रक्षाबंधन का पर्व भाई-बहन के पवित्र स्नेह का प्रतीक है। अपने भाई को बहन राखी बाँधने जा रही है। पहेली में जिज्ञासा है। बहन अपने पैर कहाँ रखती है?

धरती की आरती चाँद सूरीज का दिया।
भाई की बईण पूजण चली पॉय कॉय पऽ दिया॥

इसका उत्तर है– हवा

किसी लड़की के माता-पिता काम करने गये हैं। कोई व्यक्ति आकर उस लड़की से पूछता है– तुम्हारे माता-पिता कहाँ गये हैं?तुम क्या कर रही हो। लड़की ने पहेली में उत्तर दिया– म्हारो बाप सरग को पाणी वालनऽ गयोज, म्हारी माय एक-एक का दो-दो करनऽ गईज

'न, हाँऊ सोन्ना क चाँदी में ढ़ालई रईज' लड़की का पिता तो कवेलू चालने छप्पर छाने गया था। लड़की की माता अरहर (तुवर) की दाल बनाने गयी थी और लड़की स्वयं धान से चावल बना रही थी।

एक औरत अपने पड़ोसी के घर एक वस्तु माँगने के लिए गयी थी, पड़ोसी के घर मेहमान बैठे थे और औरत को संकोच हुआ तो उसने पहेली में बड़ी चतुराई से वस्तु की माँग की है–

जल मऽ उपज,जल मऽ निपज जल मऽ छाई प्रेमलता।
छत्तीस गोरी को सायबो सासु जी दिजो मोय॥

उसे नमक चाहिए था,नमक समुद्र के पानी में पैदा होता है और उसके बिना छत्तीस प्रकार के पकवानों में स्वाद नहीं आता है। इसलिए उसे छत्तीस गोरी का सायबा कहा गया। पड़ोसन ने नमक दे दिया, मेहमान देखते रहे और वह अपनी इच्छित वस्तु लेकर चली गई। पहेलियाँ हास्य और व्यंग्य का भी एक साधन है

पान लावजे फूल लावजे अरू लावजे काकड़ी।
म्हारा पैसा पछा लावजे अरू लावजे लाकड़ी॥

–पान लाना, फूल लाना और उसके साथ में ककड़ी भी लाना तथा ककड़ी के साथ ही लकड़ी भी लाना, पैसा एक भी खर्च नहीं करना, मेरे पैसे भी पूरे वापस लाना। उत्तर है–अकाव का वृक्ष जिसमें पत्ते, फूल, फल (ककड़ी जैसा) और लकड़ी भी उपलब्ध होती है और पैसे भी वापस मिल जाते हैं।

सिरपुर मऽ ढूँढा पड्या चिमटापुर मऽ पकड़ा गया।
हतनापुर में न्याव हुआ नकनापुर में मारा गया॥

–सिरे में लगा कि कुछ चल रहा है खोजबीन हुई, हाथ की चिमटी से पकड़कर उसे बाहर निकाला गया और हाथ पर रखा गया और देखा–अरे! यह तो 'जूँ' है, तत्काल उसे नाखून से मार दिया। उत्तरः 'जूँ'।

लाकड़ा को बोकड़ो काचो आटो खाय।
धीरऽ सी मारो जोर सी गग्गाय॥

–मृदंग लकड़ी से बनी होती है। उस पर बकरे का चमड़ा चढ़ा होता है, बजाने से पहले उस पर कच्चा आटा लगाया जाता है। ताल बजाने वाला बजाता तो धीरे से लेकिन आवाज जोर की होती है। उत्तर–मृदंग।

जबरयो सो कुवो, झबकती वाड़ी।
ढोर ढंकर पाणी पे, पंछी से पाणी नी पेवाय।

–कुँए में खूब पानी भरा है। बाड़ी में गाय, भैंस पानी पी रही हैं। लेकिन पक्षियों से पानी नहीं पिया जाता है। भावार्थ यह है कि यहाँ पर गाय भैंस के दूध की बात कही जा रही है। गाय भैंस को दूध आता है और उसके बछड़े दूध पीते हैं। गाय के शरीर की तुलना कुँए से की गई है। पक्षियों को दूध नहीं आता, अतः वे पानी पीने में असमर्थ हैं। अतः पक्षियों के बच्चे अन्नकण खाते हैं और अपना पेट पालते हैं। उत्तर–माँ का दूध।

चार भाई अक्कड़ बक्कड़
दो भाई सूखा लक्कड़

चार भाई तो तरोताजा हैं। और दो भाई सूखी लकड़ी के समान हैं। उत्तर–गाय के चार थन और दो सींग।

नानी सी होलगी डाबरयो सो पेट
कॉ जाज होलगी राजाजी का देश।
आवसे राणाजी, फोड़से पेट,
बच्चा हुसे देश-देश।

–होलगी (एक पक्षी का नाम) छोटी सी होती है। जिसका उदर भी छोटा सा होता है। हे होलगी तू कहाँ जा रही है। आयेंगे राणा जी तेरा पेट फोड़कर भक्षण करेंगे मुख के रास्ते तू कहीं और पहुँच जायेगी या दूसरे देश चली जायेगी। उत्तर–संजोरी (गुजिया)।

आकाश मऽ मारयो बोकड़ो, पाताल उतारी खाल
हाय,हाय रे लाल, तेरी छाती में बाल।

–आकाश में बकरे को मारा गया है। जिसकी चमड़ी (खाल) पाताल अर्थात् धरती पर उतारी गई है और वाह रे लाल तुम्हारी छाती में बाल है। उत्तर–पका हुआ आम।

नीलइ गोटी, हिन्दलऽ बठी। ल रे सगा थारी बेटी॥

–हरी-हरी गोरी की तरह जो हवा के झूले पर झूल रही है। हे सगे समधियों। लो तुम्हारी बेटी को लो,ले जाओ। उत्तर–कच्ची

केरी जो पेड़ पर लटकी है।

जवानी मऽ झूलो झूल बुढ़ापा मऽ बजार जाय॥

जवानी में झूला झूलती है फिर प्रसूति की तरह सोती है और बुढ़ापा आने पर बाजार में बिकने जाती है। उत्तर—आम।

चार भाई हट्टा कट्टा, उनका माथा पर दुई-दुई गट्टा॥

—चार भाई बलवान है, लेकिन उनके सिर पर दो-दो लट्ठे (लकड़ी के टुकड़े) हैं। उत्तर—चारपाई के चार पैर।

चार भाई मिलु-मिलु करऽ, पण मिली नी पावऽ॥

—चार भाई एक साथ हैं। मिलने को कहते हैं। पर मिल नहीं पाते हैं। उत्तर—चारपाई के चार पैर।

चार भाई चौरंग्या फूल पणऽ एक रंग्या।

—चार भाई चार प्रकार के हैं,लेकिन उनके फूल एक समान खिलते हैं। उत्तर—गाय, भैंस के चार थन।

माय को बबु नी, बेटी को बबु॥

—माँ के स्तन ही नहीं है और बेटी के स्तन हैं। उत्तर—मिट्टी की हड़िया और ढ़क्कन।

माय कुवारी न बेटी पनेली॥

—माँ बिना विवाह की है और बेटी विवाहित है। उत्तर—झाड़ू। झाड़ू छिन्द के पेड़ से बनती है। छिन्द के पेड़ का विवाह नहीं होता है। जब नयी झाड़ू घर में लाते हैं उसको उपयोग में लाने से पहले कुमकुम से पूजा करके कपड़ा ओढ़ाकर उसे खम्बे के आसपास सात बार फेरे लगवाकर उसका विवाह सम्पन्न करते हैं, तब काम में लेते हैं।

बाप जंगल मऽ, माय पतंग मऽ बेटा-बेटी रंगत मऽ।

—पिता जंगल में है। माता पंगती में बैठती है और लड़के लड़कियाँ रूखड़े (घूरे) पर हैं। उत्तर—पलाश का पेड़ जंगल में खड़ा रहता है। उसके पत्तों से बनाई जाने वाली पत्तल घूरे पर फेंक दी जाती है। वहीं पलाश के फूल प्रकृति में रंगत बिखेरते हैं।

बाप बठन्या करऽ छोरो थिगल्या भरऽ।
नात्या पोत्या दौड़ लगाव॥

—पिता बैठा रहता है। पुत्र चलना सीख रहा है और उसके पुत्र-पुत्रियाँ घर आँगन में दौड़ लगाते हैं। उत्तर—मटका, डोल, गिलास और लोटे।

थारी माय को गोल गोल।
न थारा बाप को लम्बो लम्बो॥

—तेरी माता का टीका तो गोल है और पिता का टीका लम्बा है। उत्तर—कुमकुम का तिलक, टीका।

नानी सी झारी मऽ बत्तीस लाडु

—छोटे से बर्तन में बत्तीस लड्डू हैं। उत्तर—दाँत।

नानी सी बयड़ी प टल्लू मिया नाचऽ।

—छोटी सी पहाड़ी पर टिल्लू मियाँ नाचता है। उत्तर—उस्तरा।

नानी सी बाई चली बजार। ओका पोर्या पारई एक हजार॥

—छोटी सी अलमस्त सी स्त्री बाजार जा रही है जिसके हजार बच्चे हैं। उत्तर—मिर्ची।

नानी सी डब्बी मऽ रम्भा बाई नाच।

—छोटी डिबिया में एक रम्भा जैसी अलमस्त स्त्री नाच रही है। उत्तर—जीभ।

नानी सी लाड़ी ओकऽ पेरई साड़ी।
करी लियो काम, पटकी दी आड़ी॥

—छोटी सी दुल्हन को साड़ी पहनाई काम निकलने के बाद जमीन पर सुला दिया। उत्तर—चिलम और स्यापी।

नानी सी डब्बी म हाय-हा का बीज।

—छोटी सी डिबिया में हाय-हाय करने के बीज हैं। उत्तर—मिर्ची।

नानी सी गाय तुरूक-तुरूक जाय।
देखजो ओ माय म्हारा गऊ नी खाय॥

—छोटी गाय धीमी चाल से जा रही है। हे भाई जरा ध्यान

रखना मेरे गेहूँ ना खाने पाये। उत्तर—धंधोरिया (घुन)

नानी सी छड़ी भुई म गड़ी। रूमझूम करती मयल चढ़ी॥
धवलई खड़ी भुई म पड़ी। रूमझुम करती मयल चढ़ी॥

—छोटी सी सफेद खड़ी (सफेद मिट्टी) जैसी है। जो रूनझुन की आवाज से महल तक जा बैठी। उत्तर—जुवार

काली गाय काँटा खाय, पाणी क देखी नऽ भड़की जाय॥

—काले रंग की गाय है जो काँटे तक का भक्षण कर जाती है, लेकिन पानी के पास जाकर भड़क जाती है। उत्तर—चमड़े के जूते।

काली थी करजाली थी,
काले बन में रहती थी।
लाल पानी पीती थी॥

—काले रंग की तेज धार वाली स्त्री है जो काले वनखंड में रहती है, जो समय आने पर लाल पानी पीती है। उत्तर—तलवार।

काली नदी कलुटा पाणी, डूब मरी चन्द्रावती राणी।

—काली नदी में काला सा पानी, उसमें चन्द्रावती रानी डूबकर मर गई। उत्तर—कढ़ाई का तेल, संजौरी या पूरी बनती है।

कालो माथणो भोरो पाणी, तेका मऽ नाच रम्भा राणी।

—काले मटके में भूरे रंग का पानी है जिसमें रम्भा जैसी अप्सरा नृत्य कर रही है। उत्तर—मथनी या रवई।

लाल माथणो कालो ढाकनो,
जो नी वार्ता ताड़ऽ ओ को बाप डाकणो।

—लाल रंग का मटका है, उस पर काले रंग का ढक्कन है, जो इस पहेली का उत्तर नहीं बतायेगा उसका पिता पेट्टू होगा। उत्तर—जुरंग अथवा रत्ती।

आलंती झूलन्ती, टेडी चले क्यों?
अकनी पे ढकनी, म तेरा बिच्छू काला क्यों?

—हवा के साथ झूलने वाली तेरी चाल टेढ़ी क्यों है। दोनों परत बराबर हैं पर बीज काला-काला क्यों है। उत्तर—इमली।

झाड़ ओका थामक थैया पान ओका थालई।
देखण म श्याम सुन्दर, बैठक ओकी कालई॥

—पेड़ उसका सुन्दर है। पत्ते उसके थाली के आकार के हैं। देखने में वह सुन्दर है, पर उसका निचला हिस्सा काला है। उत्तर—टेसू का फूल।

गोड़ थम्बा, पान लम्बा।
फल खायो पण बीज नी पायो॥

—उस वृक्ष का तना चिकना, सुडौल और खम्बे के आकार का है। उसके पत्ते काफी चिकने और लम्बे हैं। फल भी मीठा और स्वादिष्ट है। फल खाया लेकिन बीज का कहीं पता नहीं है। उत्तर—केला।

पच्चीस पैढ़ी, पचास घाट,
सिर पर घड़ा कम्मर पर हाथ।
कैसी चढूँ हऊँ औघड़ घाट॥

—पच्चीस सीढ़ियाँ हैं, पचास घाट हैं, सिर पर घड़ा है, कमर पर हाथ है, कैसे चढूँ। उत्तर—छिन्द का पेड़ और उसके फल।

घर मऽ ठोकी, अँगणा मऽ ठोकी,
ठोकम ठोक मचाई,घर वाला न।
असी ठोकी पर घर ठोकावा गई॥

—कुम्हार ठोककर पीटकर मटके बनाने के लिए मिट्टी तैयार करता है। मटके के छोटे रूप को पीटकर कुछ बड़ा करके आँगन में सूखने रखता है। थोड़ा सूखने के बाद उसे पुनः पीटकर बड़ा करता है। मटका बनने के बाद में बाजार में ले जाकर पीटकर ग्राहक को बताता है। ग्राहक भी मटके को बजाकर देखता है। तब खरीदता है। उत्तर—मिट्टी से निर्मित मटका।

वाको तेको बोबल्यो, ते पर बठ्यो होलगो।
जो नी वार्ता ताड़ऽ ओको बाप ढोलगो॥

—टेढ़े-मेढ़े आकार का बबूल का वृक्ष है, जिस पर एक छोटा सा पक्षी होलगा बैठा है। जो मेरी पहेली का अर्थ नहीं बतायेगा, उसका पिता ढोली होगा। उत्तर—सुपारी और सरोता।

दूर देश सी आयो जुवान, सिर पर टोपी चार कान।

—दूर देश से एक आदमी आया है। जिसके सिर पर टोपी है,

और उसके चार कान हैं। उत्तर—लौंग।

हाँऊ गोरी, म्हारो बेटो कालो।
मखऽ छोड़ी द म्हारा बेटा का खाई जा॥

—मैं गोरी हूँ, मेरा बेटा काला है। मुझे छोड़ दे मेरे बेटे को खा ले। उत्तर—इलाइची और छिलका।

हरी हासुबाई, काली कसुबाई।
धवला रामा जी नऽ लाल दामा जी॥

—हरे रंग की हसुबाई, काले रंग की कसुबाई हैं। सफेद रंग के रामा जी हैं, लाल रंग के दामा जी हैं। हरा पान, सफेद चूना, लाल कत्था, काले रंग के लौंग और सुपारी है।

आरकस बारकस, खैर को खूटो।
गाय छे मारकणी दूध छे मीठो॥

—इधर भी घर है, उधर भी घर है। उस जंगल में गाय रहती है,गाय मारने वाली है, लेकिन उसका दूध बहुत ही मीठा है। उत्तर—मधुमक्खी का छत्ता।

कवु तो कवाय नी, कवु बड़ो ठूँट।
कीड़ी क पानो छूटयो धावऽ बड़ो ऊँट॥

—आश्चर्यजनक बात है। कहते नहीं बनता है, फिर भी कह रहा हूँ। चीटी को दूध आ रहा है और ऊँट जैसा लम्बा जानवर चींटी के दूध को पी रहा है। उत्तर—तिल्ली और घाणा।

आल्या में गोपाल्यो, झिगड़या की झाँई।
बारा बरस मऽ कुँवर हुयो, ओको नाव काई॥

—वह बारह वर्ष में एक बार लगता है,जिसकी धूम सारी दुनिया में होती है। उसका नाम क्या है? उत्तर—सिंहस्थ अथवा कुंभ का मेला।

पटेल जाय मेर-मेर। पटलेण जाय हेर-हेर॥

—पटेल मेढ़-मेढ़ जा रहे हैं और पटेलन पैर रखते पीछे-पीछे आ रही है। उत्तर—सुई और धागा।

ऐत्तो बड़ो लम्बीराम, ऐत्ती बड़ी पूँछ।
भागी गयो लम्बीराम, पकड़ी ला ओकी पूँछ॥

—इतना बड़ा लम्बी राम है, इतनी बड़ी उसकी पूँछ है। भाग गया लम्बी राम पकड़कर लाओ उसकी पूँछ। उत्तर—सुई और धागा।

गाय चलती जाय, दूध पड़तो जाय।

—गाय चलती जा रही है और उसका दूध गिर रहा। उत्तर—चक्की याने घट्टी।

आरती मारती टाँगड़ा फँसाड़ती। भोरो-भोरा पाड़ती॥

—चक्की चलाते समय दोनों पैर चक्की के आसपास हैं, आलकी-पालकी मारकर चक्की नहीं पिसी जाती है। जब चक्की चलती है,तब भूरे रंग (सफेद) का आटा गिरता है। उत्तर—चक्की और घट्टी।

नानो सो पेर्या तल बतूल।
टोंगल्या ऐतरी धोती माथा पऽ फूल॥

—छोटा सा लड़का है, जो बहुत ही शैतान है उसकी घुटने तक धोती है और जिसके सिर पर फूल है। उत्तर—मुर्गा।

वाका तेका बालम तिखा घणा, हरी-हरी चरिया घास।
घम-घम घमकऽ, दादूर जसा चमकऽ॥

—टेढ़े-मेढ़े बालम बड़े ही तीखे स्वभाव के हैं। हरी-हरी घास खाते हैं। बिजली की तरह चमकदार हैं। उत्तर—दराता और हँसिया।

राजा मोहन सेठ की ऊँटड़ी, कान मिल न पूँछड़ी।

—राजा मोहन सेठ की ऊँटनी जिसके न तो कान है, ना ही पूँछ है। उत्तर—मेंढ़क।

धवलो घोड़ा नीलई पूँछ,
तूक नी आव तो थारा बाप कऽ पूछ॥

सफेद घोड़ा है, जिसकी पूछ हरे रंग की है। यदि तुम्हें इसका उत्तर नहीं आता हो तो तुम्हारे पिता से पूछ लो। उत्तर—प्याज।

सब भाई न को एक जुग।

—सभी भाईयों का एक दिल है, जो एकजुट है। उत्तर—लहसुन।

जा तो जा बिगर डेड को लिम्बू ला।

—जाने वाले तू जा रहा है, पर बिना डंठल का निम्बू लाना। उत्तर—अंडा।

जा तो जा पर म्हारी सूरत को आदमी ला।

—जाने वाले मेरी शक्ल सूरत का आदमी लाना। उत्तर—दर्पण या काँच।

जा तो जा पण मक देखी नऽ जा।

—जाने वाले जा तो रहा है, पर अपनी सूरत मुझमें देख के जा। उत्तर—काँच।

जा तो जा मकऽ दई तो जा।

—जाने वाले जा रहा है, मुझे बंद तो कर जा। उत्तर—दरवाजा या किवाड़।

वात करूँ तो ओकी म्हारी पड़ऽ छटी।
जाण वाला की सासू नऽ म्हारी सासू सग्गी माय बेटी।

—एक औरत और एक आदमी रास्ते से जा रहे थे। एक ने उस स्त्री से पूछा कि आगे जाने वाला तुम्हारा कौन लगता है? उसका तुम्हारा क्या रिश्ता है? स्त्री ने कहा कि बात करती हूँ तो इसकी मेरी दूरी बढ़ जायेगी, जाने वाले की सास और मेरी सास सगी माँ बेटियाँ हैं, आप अनुमान लगा लेना कि आगे जाने वाला कौन है? उत्तर—ससुर और बहू।

आँई सी गया ससरो जँवई, वँई सी आई माय बेटी।
वा ओका बाप कऽ मिली, नऽ वा ओका बाप कऽ मिली॥

—इधर से ससुर और दामाद गये, उधर से माँ और बेटी आयीं, दोनों अपने-अपने पिता को मिली। उत्तर—ससुर-दामाद, पत्नी (माँ) और बेटी।

माय बेटा दो, रोटा करया तीन। केत्ता,केत्ता वाट आया॥

—माँ बेटे दो हैं, रोटी तीन बनाई गयी हैं, कितनी-कितनी हिस्से में आई है। उत्तर—एक-एक रोटी।

एक कऽ मारी नऽ हजार को भेद लिया।

—चावल या दाल सीजती है, एक चावल को तपेली से निकाल कर देखा जाता है, कि पक गये या कच्चे हैं। चावल सीज गये होंगे तो एक चावल या दाल भेद बता देगा कि चावल सीज गये या नहीं। उत्तर—चावल।

टीटोड़ी की टाँय-टाँय। तीन मनुस नऽ दस पाय॥

—आश्चर्यजनक बात है, तीन मनुष्य हैं, उसके दस पैर हैं। चड़स अथवा मोट में दो बैल जुते होते हैं और चड़स चलाने वाला मिलकर तीन की संख्या दो बैल के आठ पैर और दो पैर मनुष्य के, दो पैर मिलकर दस पैर हो जाते हैं। उत्तर—मोट या चड़स।

पटेलण माय गाभणी, पटेल दाजी बोम दे।

—पटेल की पत्नी गर्भवती है और पटेल जोर-जोर से चिल्लाता है। उत्तर—मोट और उसका कणा।

एक राँड निसड़ी ओकऽ तीन नन घिसड़ी।

—एक बेशर्म औरत को तीन आदमियों ने घसीटा है। उत्तर—मोट या चड़स।

फर फंदा यो, सगड़ बम यो।
वो को फल यो न ओको बीज यो॥

—जो फुग्गे जैसा फूल जाता है, उसका वजन भी है, फल इतना बड़ा है कि उसका बीज एकदम छोटा है। उत्तर—कद्दू।

बईल बठी रय नऽ रास चलती जाय।

—बैल तो बैठा रहता है, लेकिन उसकी रस्सी चलती जा रही है। उत्तर—तरबूज और बेल।

बईल पाणी नी पे रास पाणी पे।

—बैल तो प्यासा है पर पानी नहीं पीता है,लेकिन उसकी रस्सी है, वह पानी पीती है। उत्तर—चिमनी।

सूखा तलाब म होलगा फड़-फड़।

—सूखे हुए तालाब में होलगा नामक पक्षी फड़फड़ा रहा है। उत्तर—मक्का—जुवार की धानी (फूली)।

अत्तीस नाड़ा बत्तीस नाड़ा, बिगर बइल का जोत्या गाड़ा।

—तीस बत्तीस रस्से हैं, फिर भी बिना बैलों के गाड़ी हाँकी जा रही है। उत्तर—नाव।

अत्तीस डोंगर, बत्तीस डोंगर, डोंगर में दरवाजा।
आयेगी छैल छबीली खोलेगी दरवाजा॥

—तीस बत्तीस दरवाजे हैं, जो सभी बंद है। नखराली औरत आयेगी तब दरवाजा खोलेगी। उत्तर—ताला कूची (चाबी)।

वाकी तेकी नद्दी थारा सी भी नी कुदाय,
न म्हारा सी कुदाय।

—एक टेढ़ी-मेढ़ी नदी है, जिसे ना मैं कूदकर पार कर सकता हूँ और ना ही तुम उसे कूदकर पार कर सकते हो। उत्तर—साँप।

गड्ड भर दूध थारा सी भी नी पेवाय, नी म्हारा सी पेवाय।

—एक लोटा दूध है,ना तो तुमसे पीया जायेगा, ना ही मुझसे पीया जायेगा। उत्तर—अकाव का दूध।

एक फकीर ओका पेट मऽ लकीर।

—एक फकीर उसके पेट पर लकीर है। उत्तर—गेहूँ।

यायण जी का घाघरा मऽ ब्याई जी को माथो।

—समधन के घाघरे में समधी का सिर है। उत्तर—मक्का और भुट्टा।

माटी को घोड़ो काली लगाम,
ओका पऽ बठयो गुलगुलो जवान।

—मिट्टी का घोड़ा है, उसे काली लगाम लगी है और उस पर गुलगुल करता जवान बैठा है। उत्तर—चूल्हा, तवा, रोटी।

ऊपर सी कयड़ो, भीतर सी नरम, जेकऽ दान करण को बड़ो धरम।

—ऊपर से सख्त व कठोर है, अन्दर से नर्म जिसको दान पुण्य करने से बड़ा पुण्य लगता है। उत्तर—नारियल।

गिड़गिड़ गुपूत, किलकिल कपूत।
काई थारा मन मऽ क म्हारा कान म॥

—गड़गड़ करने वाले तू अच्छा है या बुरा है, तेरे मन में क्या है? चुपके से मेरे कान में कह दे। उत्तर—नारियल।

कहे गजपति सुण रहे हलपति, धरणी धर किन्ने मारा।
चार खम्ब ऊप्पर छत्तर, छत्तर मऽ छाया, छाया मऽ नर।
नर का बगल मऽ नारी, नारी का मुँह मऽ नर॥
उन्ने मारा धरणी धर॥

—हे हलवाड़े! पृथ्वी पर रहने वाले सुअर को किसने मारा है। चार खम्बों के ऊपर छत है, उस पर छाया है। उस छाया में मनुष्य बैठा है, मनुष्य के बगल में एक नारी है, (गोफन) उस नारी के मुँह में एक पत्थर है, उसी पत्थर ने सुअर को मारा है। उत्तर—गोफन का पत्थर।

दो राणी न, कुण?

—उत्तर—(1) देवराणी (2) राजा का राणी। इन सभी में रानी शब्द का प्रयोग हुआ है। ये बिना मान-सम्मान के रानी बन गई है।

आठ अटगर, बारा बलगर। चार चऊक, दुई तोरण॥

—आठ थन किसके, बारह थन किसके, चार थन किसके, दो स्तन किसके हैं। उत्तर—आठ थन सुअरनी के हैं। कुतिया के बारह थन हैं। चार थन गाय के हैं या भैंस के। दो थन बकरी के हैं।

एक पोरयो रखोड़ा मऽ लोटऽ।

—एक लड़का राख में लोटता है। उत्तर—बाटी या बाफले।

एक पोरयो वागड् मऽ माथो भरऽ।

—एक लड़का बागड़ में सिर देता है। उत्तर—डोलिया।

एक नारी पलंग पऽ सूती। सूती-सूती अपने पति पर मूती॥
उसका पति अति सुख पावे। पंडित होय तो अर्थ बतावे॥

—एक सती नारी पलंग पर सोये-सोये अपने पति पर मूत्र त्याग करती है। उसका पति आनंदित होता है। पंडित हो तो अर्थ बतावे। उत्तर—महादेव जी के ऊपर की जलाधारी।

भइसी बठी पाणी मऽ पूँछ बड़वानी मऽ।

—भैंस तो पानी में बैठी है और उसकी पूँछ बड़वानी गई है। उत्तर—बिजली।

दुई भइसी का मुंडा मऽ एक टौटो।

—दो भैंसों के मुँह में एक डंठल है। उत्तर—बैलगाड़ी के चाक और आखा।

नानी सी डब्बी, डबडब कर।

—छोटी सी डिबिया पानी से भरी है। उत्तर—आँख।

रतन तलई, पाँच पलई।
जो नी वार्ता ताड़ऽ ओको बाप कसई॥

—रतन तलाई के आसपास पाँच पेड़ हैं, जो इसका उत्तर नहीं देगा उसका पिता नीची जाति का होगा। उत्तर— हथेली, चार अँगुलियाँ, और अँगूठा मिलकर पाँच की संख्या हो जाती है।

माय झापड़ई, बेटी वाकड़ई, जेका पोर्या पारी काला भुस।

—माता के केश बिखरे हैं, बेटी टेढ़ी-मेढ़ी है और उसके बच्चे काले हैं। उत्तर—इमली।

हाथ म छे पण हथेली म नी।

—हाथ में है पर हथेली में नहीं है। उत्तर—बाल।

नाना सा पोर्या क पट दिन आपटयो।

—छोटे से बच्चे को फट से पटक दिया। उत्तर—सेमुड़।

सब लोग भागी गया, भोंगलई राँड क छोड़ी गया।

—सब लोग भाग गये और बिना कपड़े की स्त्री को कमरे में बंद कर गये है। उत्तर—मिट्टी की कोठी।

सब चीज को ढ़ाकणो, एक चीज को ढ़ाकणो नी।

—सभी वस्तुओं के ढक्कन हैं, संसार में ऐसी कौन सी वस्तु है, जिसका ढक्कन नहीं है। उत्तर—समुद्र या सागर।

सोन्ना की गड्डु, देखी-देखी नऽ रड्डु।

—सोने का लोटा है, जिसे देखकर रोना आता है। उत्तर—प्याज।

गोल मोल चकरी, पीला रंग पाई।
जल्दी सी क ओको नाव काई॥

—गोल-गोल चकरी के समान उसका आकार है, जो सोने से निर्मित है, जरा उसका नाम बताना वह वस्तु क्या है। उत्तर—नाक में पहनने की सोने की नथ।

वाकड़ी तेकड़ी बाई, ओका भीतर काई।

—टेढ़ी-मेढ़ी एक स्त्री है उस स्त्री के अंदर क्या है। उत्तर—इमली और उसके बीज।

माय ठोकाय, न बेटी फेकाय।

—माँ तो मार खाती है और बेटी को फेंक दी जाती है। उत्तर—तुअर और काठी।

पाँच माथा नऽ पन्द्रह पाय। चल तव एक साथ।

—पाँच सिर हैं, पन्द्रह पाँव हैं, जो सभी एक साथ चलते हैं। उत्तर—तिफन सिंगाड़ तथा बोने वाले।

तक-तक बगल्यो, पाणी म को बगल्यो।
धरयो हाथ म न चल साथ म॥

—धीमे-धीमे चलने वाले पानी में रहने वाले बगुले को रखो हाथ में जो साथ में चलता है। उत्तर—लालटेन या कंडील।

चार चक्र चलऽ, दुई भक चलऽ।
आगऽ नाग चलऽ पाछऽ गोप चलऽ॥

—चार भारी पहिये (चाक) चलते हैं, दो भक्र अर्थात् टुकड़े करने वाले (दाँत) चलते हैं। आगे नाग जा रहा है, पीछे गोप (कनखजूरा) चल रही है। उत्तर—हाथी (उसके विभिन्न अंगों को पहेली में कहा गया है)

उप्पर सी पट्ट, ओको सरी लाल चट्ट।

—ऊपर से टपककर गिर पड़ा है, उसके शरीर का रंग लाल हो गया है। उत्तर—जामुन का फल।

एक नार आसी भरकोला।
वका सौ-सौ डोला॥

—एक अलमस्त स्त्री है, जिसकी सौ आँखें हैं। उत्तर—आटा छन्नी।

चाचा का दुई कान, चाची का कान नी,
चाची चतुर सुजान, चाचा कऽ कई नी आवऽ॥

—चाची के दो कान हैं और चाचा के कान नहीं है, चाची चतुर है, चाचा कुछ नहीं जानते हैं। उत्तर—कढ़ाई और तवा।

दिन मऽ भरेली, नऽ रात कऽ खाली।

—दिन में भरी रहती है, लेकिन रात को खाली रहती है। उत्तर—घटौची या मॉची।

नानी सी दड़ी, दग्गड़ सी लड़ी।

—छोटी सी है लेकिन उसमें पत्थर सी कठोरता है और लड़ने की शक्ति है। उत्तर—सुपारी।

एक कटोरी रूप्या,
थारा सी भी नी गिणाय,
नऽ म्हारा सी गिणाय।

—एक कटोरी में रूपये रखे हैं, लेकिन उन्हें न तो तुम गिन सकते हो और ना मैं। उत्तर—तारों का समूह।

साकड़ी सी सेरी सोन्ना की ढेरी।

—एक सकरी सी गली में सोने का ढेर लगा है। उत्तर—चूल्हे में रखे अंगारे।

सब लोग भागी गया घर म सोन्नो डाटी गया।

—सब लोग भाग गये और घर में सोना छिपा गये हैं। उत्तर—चूल्हे में अंगारे या आग।

सब लोगी भागी गया घर मऽ उड़दीया बगलई गया।

—सब लोग भाग गये हैं, घर में उड़द बिखेर गये हैं। उत्तर—मक्खियाँ।

पाड़छी (पहेली का एक प्रकार)

विवाह में समधी और समधिन में गीतों की पहेली निवाली का चलन है। भोजन करते समय समधिन समधियों की बुद्धि परीक्षा लेती है। ऐसी बूझने वाली पहेलियों को निमाड़ी में 'पाड़छी' या पारसी कहते हैं। जो गीत रूप में गाई जाती है। पाड़छी की परम्परा अब प्रायः लुप्त हो रही है।

सारंग ले सारंग चली, कर सारंग री ओट।
झीना हो सारंग देखिया॥
सारंग कर गई चोट गाड़ा मारूजी।
कहो नी यायजी म्हारी पाड़छी॥
नहीं तो हारो घर की नार गाड़ा मारूजी।
चातुर होय तो कई दिजो॥
मूरख भसाभस खाय गाड़ा मारूजी॥

—एक स्त्री हाथ में दीपक लेकर जा रही है, हवा चलने लगी तो स्त्री ने दीपक को अपने पल्ले से ढाँक लिया। साड़ी झीनी थी इसलिए हवा ने दीपक बुझा दिया। समधी जी आप चतुर हो तो पहेली का अर्थ बता दीजिए, नहीं बता सके तो अपनी पत्नी को हार जाइये, आप मूर्ख होंगे तो उत्तर नहीं देंगे और भसाभस खाते रहेंगे। समधी चतुर थे उन्होंने सारंग शब्द के चार अर्थ बता दिये। (1) स्त्री (2) दीपक (3) साड़ी का पल्ला और (4) हवा।

नारी मरी नऽ नर कटिया
नर की भई फिर नारी गाड़ा मारूजी॥
वो ही नारी ने नर मारिया
सुरता करो नऽ विचार गाड़ा मारूजी॥
कहो नी यायजी म्हारी पारसी,
नहीं तो गदड़ा रा गुवाल गाड़ा मारूजी॥

—एक भैंस मर गई, उस मरी भैंस के सींगों को काटा गया। सींग (पुरूष वाची है) फिर उस पुरूष रूपी सींग से कांगसी रूपी नारी का निर्माण किया गया है। कांगसी रूपी नारी सिर में जूँ और लीक मारती है। कहिये ब्याई जी या मेरी पारसी का उत्तर नहीं बता सकते हो तो गधों को चराने जाईये। उत्तर—कांगसी।

मुट्ठी भर सिरो लचलचो
ऐचाय ते मयसर का हाट गाड़ा मारूजी।
चातुर होय तो कई दीजो,
नहीं तो खेड़ा रा हनुमान गाड़ा मारूजी॥

—एक मुट्ठी में आ जाये इतना हलवा है, जो मुलायम है और वह महेश्वर के बाजार में बिकता है। कहिये समधी जी क्या चीज है। समधी ने उत्तर दिया—रेशम।

डॉवा जो कवला की नागेणी।
नमी-नमी झोला खाय गाड़ा मारूजी।
कहो नी यायजी म्हारी पारसी।
नहीं तो हारो घर की नार गाड़ा मारूजी।

—दाहिने हिस्से की ओर एक नागिन बैठी है, जो बार-बार झूल रही है। झकोले खा रही है, हे समधी जी! क्या वस्तु है? वह बताईये समधी ने उत्तर दिया—नाक की नथ।

बारा जो माथा को बोकड़ो
सेरी गली रमवा जाय गाड़ा मारूजी।
कहो नी यायजी म्हारी पारसी
नहीं तो गदड़ा का गुवाल गाड़ा मारूजी॥

—आश्चर्यजनक बात है। एक बारह सिर का बकरा है जो गलियों में घूम रहा है। वह क्या है समधी जी बताईये, समधी चतुर थे उन्होंने उत्तर दिया—पाँव में बजने वाले बिछिया।

धूर गाजऽ धरती थरहरऽ
नदिया जाय भरपूर गाड़ा मारूजी।
दोय नारी नऽ नर जलमिया
सुरता करो नी विचार गाड़ा मारूजी।
कहो नी यायजी म्हारी पारसी
मूरख भसाभस खाय गाड़ा मारूजी॥

—ध्रुव (दक्षिण) दिशा से गरज के साथ पानी की बदली उठी गड़गड़ाहट से पृथ्वी कम्पायमान हो गई। नदियों में पानी भरपूर आ गया, ऐसे में दो नारियों ने मिलकर एक नर बच्चे को जन्म दिया। श्रोता विचार करो कि वह क्या है। उत्तर—सीप से मोती उत्पन्न हुआ।

ऊँची गोरी लगऽ पातली
जमना न्हावण जाय गाड़ा मारूजी।
चातुर होय तो कई दिजो
नई तो हारो घर की नार गाड़ा मारूजी॥

—एक पतली सी कामिनी स्त्री है, जो यमुना स्नान करने जा रही है। उस स्त्री का क्या नाम है? समधी जी बताईये। समधी ने उत्तर दिया—अम्बाड़ी।

अग्गड़ दग्गड़ को लोयड़ो
बिना सींग की गाय।
बिना दूध का वाछरू, सेरी गली रमवा हो जाय।
कहो नी यायजी म्हारी पारसी
नहीं तो हारो घर की नार गाड़ा मारूजी।
चातुर होय तो कई दिजो,
नहीं तो खेड़ा का हनुमान गाड़ा मारूजी॥

—कंकर पत्थर तक का भक्षण करने वाली बिना सींगों की एक गाय है। उसके बच्चे बिना दूध पीये बड़े हो गये हैं और वे गलियों में घूम रहे हैं। बताईये समधी जी वह क्या है। समधी ने उत्तर दिया—मुर्गी और उसके बच्चे।

निमाड़ी लोक समाज में पहेलियों का अक्षय भंडार है, जरूरत है उसके संकलन और संरक्षण की। धीरे-धीरे लोक कला की मौखिक परम्परा की विभिन्न विधाएँ विलुप्त होती जा रही है। इस अक्षुण्य लोक धरोहर को बचाने का प्रयत्न किया जाना चाहिए। इस दिशा में मध्यप्रदेश आदिवासी लोककला परिषद् का प्रयास सराहनीय है, जो देश में एक उदाहरण है।

छत्तीसगढ़ी फाग गीत

निरंजन महावर

भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहाँ की जलवायु कृषि के अत्यधिक अनुकूल है। यहाँ की भूमि अत्यंत उर्वरा है। कृषि के लिए यहाँ वर्षा ऋतु एवं शरद ऋतु में अनुकूल वर्षा होती है। ग्रीष्म ऋतु में यहाँ चार माह तीव्र गर्मी पड़ती है जिसके परिणामस्वरूप मौसमी (मानसूनी) वायु द्वारा तीन-चार माह तक अच्छी वर्षा होती है। चार माह वर्षा ऋतु के होते हैं और चार माह शरद ऋतु के। यूँ ऋतु चक्र को भारत में छह भागों में विभक्त किया हुआ है। शरद और ग्रीष्म के बीच में वसन्त, ग्रीष्म और वर्षा ऋतु के मध्य में हेमन्त और वर्षा ऋतु और शरद ऋतु के मध्य में शिशिर ऋतु, इस प्रकार बना हुआ है हमारा फसल चक्र।

भारत भूमि के विशाल भू-भाग पर वर्षा निर्मित जंगल हैं। बड़ी-बड़ी और ऊँची-ऊँची पर्वत श्रेणियाँ हैं और विशाल नदियाँ हैं। इन नदियों ने वनों एवं पर्वतों से उपजाऊ मिट्टी लाकर सपाट मैदानी भागों में फैलाई है। नदियों द्वारा लाई गई मिट्टी से निर्मित ये मैदानी भाग अत्यन्त उर्वर है। भारतीयों ने इन मैदानी क्षेत्रों को प्राचीनकाल से ही पहचान लिया था और इसीलिए हिमालय से निकलकर अरब समुद्र में गिरने वाली नदियों सतलज, व्यास, रावी, चिनाब और झेलम के मैदानी क्षेत्र का नामकरण पंजाब के रूप में किया था और हिमालय पर्वत से ही निकलने वाली नदियों गंगा और यमुना के मैदानी क्षेत्र को दो आबा नाम दिया था। प्राचीनकाल से ये दोनों क्षेत्र अत्यन्त उपजाऊ थे और यहाँ घास के हरे-भरे चरोत्तर थे। इन घास के चरोत्तरों के आकर्षण में ही मध्य एशिया के अनेक पशुपालक कबीलों का भारत में आगमन हुआ। भारत में इन कबीलों के आने का क्रम लगभग दो-ढ़ाई हजार वर्षों तक निरन्तर चलता रहा। बाहर से आने वाले ऐसे सभी कबीले यहीं बस गये। भारत का हिन्दुस्तान नामकरण भी यहाँ की प्रमुख नदी सिंधु के नाम पर ही पड़ा है। 'स' को अरबी उच्चारण में 'ह' बोला जाता है। सिन्धु का ही अपभ्रंश हिन्दू है और सिन्धु नदी का स्थान अर्थात् हिन्दुस्तान या हिन्दोस्तान।

भारत के त्यौहारों के महत्व को समझने के लिए यहाँ के ऋतु चक्र व फसल चक्र को समझने की आवश्यकता है। भारत के त्यौहारों का ऋतु एवं फसल चक्रों से गहरा और प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। कार्तिक अमावस्या को पड़ने वाला दीपावली का त्यौहार खरीफ की फसल का

पर्व है और फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा को पड़ने वाला होली पर्व रबी की फसल का। दोनों त्यौहारों को मनाने का आरंभ मूल रूप से फसलों से जुड़ा हुआ है परन्तु कालान्तर में उनके साथ में कुछ मिथकीय घटनाएँ भी जुड़ती चलीं गईं।

होली पर्व के साथ होलिका दहन का मिथक जुड़ गया और उसने एक धार्मिक स्वरूप ग्रहण कर लिया। प्राचीन समय में होली को वसन्तोत्सव के रूप में मनाने का वर्णन प्राचीन भारतीय साहित्य में मिलता है। फाल्गुन मास में गेहूँ, चना तथा अन्य दलहनी फसलें, सरसों तथा अन्य तिलहनी फसलें तैयार होकर किसानों के खलियानों में पहुँच जाती हैं। प्रकृति भी अत्यन्त मनोरम होती है। वृक्षों में पतझर के पश्चात् नये पत्ते आ जाते हैं और वे फूलों से लद जाते हैं। वसन्त का मौसम भी खूब ही सुहावना होता है, न अधिक सर्दी और न अधिक गर्मी। प्रकृति की इस सम्पन्नता से कामदेव भी प्रसन्न रहते हैं। होली का पर्व वास्तव में वसन्त तथा रबी फसलों के उल्लास के समारोहण का पर्व है।

वसन्त का होली त्यौहार वसन्त पंचमी से आरंभ होता है और होलिका दहन तथा उसके दूसरे दिन रंग पर्व अथवा धुलेंडी के दिन पूर्ण होता है। वसन्त पंचमी के दिन अंडी के वृक्ष की एक शाख को होलिका दहन के स्थान पर स्थापित किया जाता है जहाँ लोग अपने घर के कूड़े करकट, कण्डे और लकड़ी आदि को होलिका दहन तक लाकर जलाने हेतु एकत्र करते जाते हैं। वसन्त पंचमी के दिन से ही होली के नगाड़े बजने लगते हैं और लोगों पर वसन्त का नशा चढ़ने लगता है। रात्रि में लोग गाँव की चौपालों में, कस्बों के चबूतरों पर या किसी रसिक के प्रांगण में एकत्र होकर वसन्त का उल्लासपूर्वक स्वागत करते हुए गीत गाते हैं। वसन्त के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों को फाग गीत कहा जाता है। अबीर गुलाल लगाकर लोग नगाड़ों की थाप पर इन गीतों को गाते हैं। गायकों के दो दल बन जाते हैं—एक दल गीत का आरंभ करता है और दूसरा दल उसे दुहराता है और फिर दोनों ही दल उसे समवेत स्वर में पुनः गाते हैं। इन गीतों के साथ नगाड़े, ढोलक, टिमकी, ढप्प और मंजीरों का वाद्य के रूप में प्रयोग होता है। कभी-कभी मात्र नगाड़े का या नगाड़े और मंजीरे का ही प्रयोग होता है।

गायकों में फाग गाने के अवसर पर मस्ती छा जाती है और उनमें से एक-दो गायक उठकर नृत्य करने लगते हैं। गुलाल के रंग और भंग की तरंग में फाग गायन ज्यों-ज्यों रात्रि का समय बढ़ने लगता है त्यों-त्यों परवान चढ़ने लगता है। वसन्त के मौसम की सुहावनी रातों में फाग की स्वर लहरी और नगाड़ों की ध्वनि से आकर्षित होकर गायन स्थल की ओर लोग पहुँचने लगते हैं। देर रात्रि तक फाग गायन का कार्यक्रम चलता रहता है।

छत्तीसगढ़ी फाग गीतों में राधा कृष्ण के मध्य होली खेले जाने का लालित्यपूर्ण वर्णन प्रचुरता के साथ मिलता है। कुछ एक गीत राम के द्वारा अवध में होली खेले जाने से सम्बन्धित भी मिलते हैं परन्तु कृष्ण से सम्बन्धित गीतों जैसा भाव उन गीतों में कहाँ? दरअसल कृष्ण की गोपियों के साथ की गई बाल लीलाएँ भारतीय जनमानस में गहरे रूप में बैठी हुई है। राम का चरित जनमानस में मर्यादा पुरूषोत्तम के रूप में स्थापित है। भारतीय ललित के केन्द्र में तो कृष्ण का चरित्र ही प्रतिष्ठित है इसीलिए कृष्ण के चरित्र ने ही भारत के सर्वाधिक कलारूपों के उद्भव को प्रेरित किया है। छत्तीसगढ़ी फाग गीतों में भी कृष्ण, राधा, गोपियाँ, ब्रज का भक्तिमय वातावरण पूर्ण रूप से रच-बस गये हैं। कुछ फाग गीतों में आल्हा का भी उल्लेख मिलता है और कुछ एक फाग गीत आल्हा की तर्ज पर भी गाये जाते हैं। वास्तव में संपूर्ण उत्तर भारत के ग्रामीण अंचलों में आल्हा गायन बेहद प्रचलित है। आल्हा गायन की धुन लोकमानस में रच-बस गई है, इसलिए उसका प्रभाव अन्य गायन विधाओं पर भी पड़ा है। बुंदेलखंड में फाग गीतों में मात्र श्रृँगार रस के गीत नहीं गाये जाते, वरन् उनमें वीर रस के गीतों की भी भरमार है। वहाँ आपसी बैर-भाव के कारण 'खून की होली' खेलने का भी वर्णन वीर रस प्रधान फाग गीतों में खूब मिलता है। फाग गायन का आरंभ—उद्घोषणा के साथ होता है—

बजै नगाड़ा दसौं जोड़ी हाँ, राधा किशन खेलैं होरी
दुनों हाथ धरैं पिचकारी धरै पिचकारी धरै पिचकारी॥

रंग गुलाल सबै बोरी, हाँ राधा किशन खेलय होरी॥

होली खेलने की इस उद्घोषणा के साथ ही नगाड़े पर जोर-जोर से थाप पड़ने लगती है और फिर देव सुमरनी के पद गाये जाते हैं—

(1)

चला हाँ रे पहिले, सुमिरों गणपति को ना
जिनकी पारवती हैं माय, रे पहिले सुमिरों गणपति हो
चला हाँ रे गजानन, सब देवन में अगुवा है
सो पूजवँ ध्यान लगाय, रे पहिले सुमिरँव गणपति

गणपति वंदना के उपरान्त गुरू और सरस्वती की वंदना भी आवश्यक है। गुरू भूले अक्षर याद दिलाते हैं वहीं सरस्वती कंठ में विराजमान होती हैं। उनकी सहायता के बिना गायन कैसे संभव हो सकता है। अतः वंदना का पद इनकी स्तुति में गाया जाता है–

(2)

पहिली सुमिरौं गनपति गौरा
दूसर मा महादेव! फिर लेवँव गुरू के नाम
कंठ बिराजे सरसती माता
भूले अच्छर देय बताय
जो अच्छर सुधि बिसरै हों
लेहौं गुरू के नाँव॥

छत्तीसगढ़ी फाग गीतों में 'चला हाँ रे' के साथ गीतों का आरंभ होता है और फिर टेक में भी 'चला हाँ रे' का प्रयोग करते हुए गाये जाने वाले पद को दुहराया जाता है।

(3)

चला हाँ रे बजै नगाड़ा दसौं जोड़ी
हाँ राधा किशन खेलैं होरी
दूनौं हाथ धरै पिचकारी
रंग गुलाल सबै बोरी॥ चला हाँ रे
हाँ राधा किशन खेलैं होरी॥
दुधवा दहिया ला बैच न पाइस
ओहू मा रंग दिहिन घोरी॥
चला हाँ रे राधा किशन खेलैं होरी॥
सब सखियन मिल पकड़ किशनलाल
वही रंग मारे रे बोरी॥
चला हाँ रे राधा किशन खेलय होरी॥
तब राधा मुसकाय कहिन हाँ
अऊ खेलिहौ-तू होरी॥
चला हाँ रे राधा किशन खेलैं होरी॥

भावार्थ– बजे नगाड़ा दसौं जोड़ी (दसो दिशाओं में)
हाँ राधा कृष्ण खेलें होली
दोनों हाथों में पिचकारी थामे हुए
रंग और गुलाल में सराबोर
राधा कृष्ण खेलें होली।
दूध दही को बेच नहीं पाई (होली के वातावरण में)
इसलिए उन्हीं में रंग घोल दिया है।
राधा कृष्ण होली खेल रहे हैं।
सब सखियों ने कृष्ण को पकड़कर
उसी रंग में डुबो दिया है।
राधा और कृष्ण होली खेल रहे हैं।
राधा ने मुस्कुराकर कहा
और खेलोगे तुम हमारे साथ होली।
राधा कृष्ण खेलें होली।

(4)

होली खेलय बिरिज मा कन्हैया
होली खेलय बिरिज मा...
काकर हाथ मा रंग कटोरा
काकर हाथ पिचकारी॥
राधा के हाथ मा रंग कटोरा।
कृष्ण के हाथ मा पिचकारी॥

भावार्थ– ब्रज में कन्हैया होली खेल रहे हैं
होली खेल रहे हैं ब्रज में...
किसके हाथ में रंग का कटोरा है
किसके हाथ में पिचकारी है
राधा के हाथ में रंग का कटोरा है
(और) कृष्ण के हाथ में पिचकारी है।

गीत क्रमांक (3) में राधा गोपियों के साथ मिलकर कृष्ण के साथ होली खेल रही हैं। दूध, दही में ही रंग घोलकर उसमें कृष्ण को डुबो दिया है और विनोदपूर्वक पूछ रही हैं और खेलोगे होली? गीत क्रमांक (4) में राधा के हाथ में रंग का कटोरा है और कृष्ण के हाथ में पिचकारी है। वे कटोरे से पिचकारी में रंग भर-भरकर राधा और गोपियों के साथ होली खेल रहे हैं।

(5)

चल हाँ रे राधिका तोरे दुलारी के कारन
मोर हो गयै कन्हैया चोर।
चल हाँ रे राधिका, कहिन के दुलारी बनी
और कहिन लागे डोर॥
चल हाँ रे राधिका...
चल हाँ रे मइया सोन के मोर दुलरी बनी
अऊ रेशम लागे डोर॥
चल हाँ रे राधिका...

भावार्थ– इस गीत में यशोदा मैया राधा से शिकायत कर रही हैं–

राधिका तुम्हारे दुलार के कारण
मेरा कन्हैया चोर हो गया है
राधिका तुम कैसी उसकी दुलारी बनी हो
और कैसा तुम्हारा बंधन है।
मैया सोने की मेरी डोर बनी है
और रेशम का मेरा बन्धन है।
राधिका तुम्हारे दुलार के कारण
मेरा कन्हैया चोर बन गया है।

(6)

नाचे नंद के कन्हैया फन पर
नाचे नंद के कन्हैया! हाँ रे हाँ...
पीताम्बर उड़ि उड़ि जात
फन पर नाचे नन्द के कन्हैया।
हाँ रे हाँ नाचे नंद के कन्हैया फन पर॥

भावार्थ– नाच रहे हैं नन्द के कन्हैया नाग के फन पर

नाच रहे हैं नन्द के कन्हैया!
उनका पीताम्बर उड़ रहा है
और वे नाग के फन पर नाच रहे हैं।

(7)

कैसे मिल गए गंगा मा जमुना
भागीरथे पाये नाम
जमुना तै कैसे मिल गये गंगा
कैसे मिल गये...॥

भावार्थ– हाँ रे हाँ गंगा में जमुना कैसे मिल गई

उन्हें भागीरथी नाम प्राप्त हुआ
यमुना से कैसे मिल गई गंगा
हाँ रे हाँ कैसे मिल गई गंगा में यमुना।

(8)

हाँ रे हाँ चला सखी री सांकुर खोल दे गोकुल के
अरे राधा पनियान जायस
सांकुर खोल दे गोकुल के
हाँ रे हाँ चला सखी री...॥

भावार्थ– सखी गोकुल के द्वार की साँकल खोल दो

अरे राधा पानी भरने जा रही है
साँकल खोल दो गोकुल की
चलो सखी साँकल खोल दो।

(9)

हाँ हाँ रे वृन्दावन श्याम दही लूटे...
काहे तोरे हार काहे नकबेसर
कौन गलियन मा लरटूटे
वृंदावन मा श्याम दधि लूटे॥
लपट झपट मा हरवा टूटगै
सिरके मटकी घलो फूटगै
बिन्दराबन मा श्याम दधि लूटे॥
बिन्दराबन हार गोकुल नकबेसर
बीच गली मा लर टूटे
हाँ हाँ रे बिन्दराबन श्याम दधि लूटे॥

भावार्थ– वृन्दावन में श्याम दही लूट रहे हैं...

कहाँ गया तुम्हारा हार कहाँ गयी तुम्हारी नकबेसर
किस गली में तुम्हारे मोतियों की लड़ टूटी है
वृन्दावन में श्याम दही लूट रहे हैं।
लपट झपटकर (मैंने) बचने का प्रयास किया तो हार टूट गया
सिर की मटकी भी फूट गई
वृन्दावन में श्याम दही लूट रहे हैं।
वृन्दावन में हार टूटा और गोकुल में नकबेसर टूटा
और गली के बीचों बीच मोतियों की लड़ टूटी
वृन्दावन में श्याम दही लूटे।

(10)

हाँ रे हाँ सखी री जल भरने को
अरे ठाड़े प्रभु घनश्याम सखी री
चली जावैं सखी जल भरने को
हाँ रे हाँ सखी री जल भरने को॥

भावार्थ– सखी जब मैं जल भरने गई

हे सखी! तब वहाँ प्रभु घनश्याम खड़े थे
चलो चलें सखी जल भरने को
सखी जल भरने को।

(11)

जमुना तट आज मची होरी।
हलधर गिरधर मदन मनोहर खेलत है जोरी जोरी।
जमुना तट आज मची होरी।
अबीर गुलाल कुमकुमाकेसर की कीच मचे खोरी खोरी
जमुना तट आज मची होरी...
मोर मुकुट मकराकृत कुण्डल सोहत है सुन्दर जोरी
जमुना तट आज मची होरी...
फेट गुलाल हाथ पिचकारी अबीर गुलाल भरे जोरी
जमुना तट आज मची होरी...
हिलमिल फाग परस्पर खेलत फेंकत है झोरी झोरी
जमुना तट आज मची होरी...
उड़त गुलाल लाल भये बादर कर मुरली रंग में होरी।
जमुना तट आज मची होरी।
सूरदास प्रभु रसिक शिरोमणि चितवन श्याम मोम ओरी
जमुना तट आज मची होरी...॥

भावार्थ– यमुना के तट पर आज होली मची है
वहाँ बलराम और कृष्ण
मदन मस्त होकर होली खेल रहे हैं।
वे जबरदस्ती होली खेल रहे हैं।
आज यमुना के तट पर होली मची है।
गली गली में अबीर गुलाल कुमकुम
केसर की कीचड़ मची हुई है।
मोरपंखों का मुकुट और मकर की
आकृति के कुंडल धारण किये हुए
इन दोनों भाइयों की जोड़ी बहुत सुन्दर लग रही है।
यमुना के तट पर आज बलराम
और कृष्ण दोनों ने होली मचा रखी है।
गुलाल अबीर आदि को घोल रखा है
और हाथों में पिचकारी है
यमुना तट पर आज होली मची है।
झोली भर भरकर गुलाल अबीर डाल रहे हैं और सबजन
हिलमिल कर होली खेल रहे हैं।
गुलाल उड़ रही है जिससे
बादलों का रंग भी लाल हो गया है और
(कृष्ण की) मुरली भी उसी रंग में रंग गई है।
यमुना तट आज मची होली
सूरदास कहते हैं कि प्रभु रसिकों के शिरोमणि हैं
जो श्याम वर्ण की मोम मूर्ति बन गये हैं।
यमुना तट आज मची होली॥

इस गीत के अन्त में कवि सूरदास का नाम आया है। संभवतः यह पद उनका ही हो और किंचित मात्र परिवर्तन के साथ उसे छत्तीसगढ़ी गायकों ने उसके लालित्य के कारण उसे अपना लिया हो। यह भी संभव है कि सूरदास की शैली में ही गीत की रचना की गई हो और उन्हें ही समर्पित करने की भावना से गीत के अंत में उनका नाम जोड़ दिया गया हो। वैसे भी छत्तीसगढ़ी फाग गीतों पर ब्रज भाषा का काफी प्रभाव दिखाई पड़ता है। भक्ति आंदोलन के प्रभाव स्वरूप संपूर्ण उत्तर भारत में कृष्ण भक्ति से सम्बन्धित साहित्य पर ब्रज भाषा का गहरा प्रभाव पड़ा है।

(12)

चित्रकूट में क्यों बसे रामजी
आनन्द है कोल किरात
रामजी चित्रकूट में क्यों बसे॥
आवत हैं बन मा भरतजी
संग में है माता साथ॥
भरतजी मिलने को अब आवत हैं
रामजी चित्रकूट में क्यों बसे॥

भावार्थ– हे रामजी! आप चित्रकूट में आकर क्यों बस गये
आपके यहाँ आने से कोल किरात जन आनन्दित हैं।
भरतजी वन में (आपसे भेंट करने) आ रहे हैं
उनके साथ में माताजी भी हैं।
भरतजी मिलने को आ रहे हैं
रामजी आप चित्रकूट में क्यों बसे।

(13)

अरे धूनी रमा के रम रै हौं
रस रैहौं रमा रै हौं
रम रैहौं तरिया पार
बाबा धूनी के रम रै हौ।

भावार्थ– अरे धूनी रमा के रमें रहो
रसिक बने रहो रमें रहो

तालाब के पार रमें रहो
बाबा की धूनी (अग्निकुंड) के पास रमे रहो॥

(14)

अरे जल्दी उतारो पार केवट
होवत है अब देर केवट
जल्दी पार उतारो ना॥

भावार्थ—अरे केवट! जल्दी पार उतारो
अब देर हो रही है
जल्दी पार उतारो।

यहाँ केवट अर्थात् प्रभु से भवसागर से पार उतारने का संकेत है।

(15)

मारो बाण तुम रावणला ओ रामजी
सीताजी व्याकुल होय रामजी
मारो बाण तुम रावणला
ओ रामजी॥

भावार्थ—हे रामजी! आप रावण को बाण मारो
सीताजी बहुत व्याकुल हो रही हैं
आप रावण को बाण मारो
हे रामजी!

(16)

अरे पनिया भरन नहीं देय हो
मोहनजी पनिया भरन नहिं देवें लाल॥
पनघट पर खड़े कन्हैया
घघरी पलोरन भिजोये चुनरी॥
अरे पनिया भरन नहीं देय हो
कहाँ छिपाये प्यारी राधा
राधा बिन होरी न होय॥
अरे पनिया भरन नहीं देय हो
मोहनजी पनिया भरन नहिं देवें लाल॥

भावार्थ—अरे! पानी भरने नहीं दे रहे हैं
मोहनजी पानी भरने नहीं दे रहे हैं लाल।
पनघट पर खड़े हैं कन्हैया
गगरी ढुबाने पर चुनरी भिगो रहे हैं
अरे पानी भरने नहीं दे रहे हैं मोहनजी
प्यारी राधा कहाँ छिपी हुई हैं
राधा के बिना होली कैसे खेलें
अरे पानी भरने नहीं दे रहे हैं
मोहनजी पानी भरने नहीं दे रहे हैं।

(17)

डारो राम गले जयमाला सीता के
जयमाला हरी का होंय सीता
डारो राम गले जयमाला
राम निकाल बन का पैहौ
दिये डारो भरत को राज कैकेयी॥
राम निकाल बन का पैहो।

भावार्थ—राम ने सीता के गले में जयमाला डाल दी
जयमाला डालने से सीता हरि की हो गई।
राम ने जयमाला गले में डाली
राम को वन में निकाल दिया।
कैकेयी ने भरत को राज दिला दिया
राम को वन में निकाल दिया।

(18)

गहिल बहे जलधारा नंदिया
आपन तरे औरों को तारे
तारे सब परिवारा
नंदिया गहिल बहे जल धारा
पुरइन पत्र रहे जल भीतर
जल मा करे पसारा
नंदिया गहिल बहे जलधारा॥

भावार्थ—गहरी बहे जलधारा नदिया की।
स्वयं तरे और औरों को भी तारे।
तारे संपूर्ण परिवार को।
नदिया की गहरी बहे जलधारा।
पुरइन पत्र (कलमपत्र) जल के भीतर रहते हैं।
जल में ही वे अपना प्रसार (फैलाव) करते हैं।

नदिया की गहरी बहे जलधारा।

(19)

अरे हाँ रे हाँ तनी राजा जनक द्वारे चाँदनी
जहाँ सीता स्वयंवर होय चाँदनी
तनी रहे राजा जनक द्वारे॥
अरे हाँ रे हाँ तनी राजा जनक द्वारे चाँदनी॥

भावार्थ– राजा जनक के द्वार पर चाँदनी तनी है।
वहाँ सीता का स्वयंवर हो रहा है प्रकाशमय वातावरण में।
तनी रहे राजा जनक के द्वार पर चाँदनी।
अरे हाँ रे हाँ तनी राजा जनक के द्वार पर चाँदनी।

यहाँ पूर्व में चाँदनी प्रांगण को ढँकने वाले मोटे वस्त्र के लिए प्रयुक्त हुआ है वहीं दूसरी लाइन में इस शब्द का प्रयोग प्रकाश के लिए हुआ है, जो उल्लासमय वातावरण को प्रकट कर रहा है।

(20)

हाँ हाँ रे हाँ रावण छोड़ दे आशा लंका के
गढ़ लंका चढ़े राजा राम
हाँ हाँ रे हाँ रावण छोड़ दे आशा लंका के॥
हाँ हाँ रे रावण पहिले द्वार अंगद ठाड़े
जेन सभा मा रोपे पाँव रावण।
छोड़ दे आशा लंका के॥
हाँ हाँ रे हाँ रावण छोड़ दे आशा लंका के॥
दूसर द्वार नील नल ठाड़े
जिन सागर बाँधे सेत रावण।
हाँ हाँ रे हाँ रावण छोड़ दे आशा लंका के॥
तीसर द्वार जामवन्त ठाड़े
जिन सभा मा हुकुम चलाये रावण।
छोड़ दे आशा लंका के
हाँ हाँ रे हाँ रावण छोड़ दे आशा लंका के॥
चौथे द्वार में हनुमान ठाड़े
जिन लंका जलाय दिये रावण।
छोड़ दे आशा लंका के।
हाँ हाँ रे हाँ रावण छोड़ दे आशा लंका के॥

भावार्थ– रावण लंका की आशा (बचने की) छोड़ दो।
गढ़ लंका पर राजा राम ने आक्रमण कर दिया है।
रावण तुम लंका के बचने की आशा छोड़ दो।
पहले द्वार पर अंगद खड़े हैं
जहाँ तुमने पैर जमाया था (अंगद प्रसंग)।
रावण तुम लंका के बचने की आशा त्याग दो।
दूसरे द्वार पर नील और नल खड़े हैं।
जिन्होंने समुद्र पर सेतु बांधा था।
रावण तुम लंका की आशा छोड़ दो।
तीसरे द्वार पर जामवन्त खड़े हैं।
उसी दरबार के द्वार पर जहाँ तुमने शासन किया है।
छोड़ दो लंका के बचने की आशा।
रावण छोड़ दो आशा लंका की।
चौथे द्वार पर हनुमान खड़े हैं।
जिन्होंने लंका को जलाया था।
छोड़ दो आशा लंका की।
रावण छोड़ दो आशा लंका की।

(21)

अरे हाँ रे हाँ जसोदा धीरे झुलाय पालना
तोरे कान्हा उचक न जाय।
जसोदा धीरे झुलाय पालना॥ हाँ रे हाँ जसोदा...
अरे हाँ रे हाँ जसोदा काहे के बने पालना॥ हाँ रे हाँ जसोदा...
अस काहेन लगी डोर
जसोदा धीरे से झुलाय पालना॥ हाँ रे हाँ जसोदा...
अरे हाँ रे हाँ जसोदा चंदन काठ बने पालना
अस रेशम लागे डोर।
जसोदा धीरे झुलाये पालना तोरे कान्हा उचक न जाय।
अरे हाँ रे हाँ जसोदा...॥

भावार्थ– जसोदा, पालना धीरे झुलाओ।
कहीं तुम्हारा कान्हा उछल न जाये।
तुम्हारा पालना काहे का बना है।
और उसकी डोर काहे की बनी है।
अरे हाँ रे हाँ जसोदा...।
जसोदा चंदन काष्ठ का पालना बना है।
और उसमें रेशम की बनी हुई डोर बँधी है।
जसोदा धीरे झुलाओ पालना।
तुम्हारा कान्हा कहीं उछल न जाये।

(22)

हाँ हाँ रे हाँ कबूतर आइ गिरे दरवाजे पर
तोला रसिया बान मारे रे कबूतर
आई गिरे दरवाजे पर।
हाँ हाँ रे हाँ कबूतर तोला रसिया बान मारे॥

भावार्थ– कबूतर आ गिरे दरवाजे पर।
तुम्हें रसिया ने बाण मारा रे कबूतर।
आकर गिरे दरवाजे पर।
कबूतर तुम्हें रसिया ने बाण मारा।

फाग में इस प्रकार के छोटे-छोटे श्रृँगारिक पदों को बार-बार धीमी गति से और फिर मध्यम और द्रुत गति से अनेक बार गाया जाता है। गाते वक्त गायक मंडली में से एक या दो गायक खड़े होकर पद को दुहराते हुए नृत्य करने लगते हैं। इस प्रकार से एक ही पद को अनेक बार लम्बे समय तक गाने की परंपरा है।

(23)

हाँ हाँ रे देवरा बाजत घुँघरू लेदेबे देवरा
महलों में झमाझम होय देवरा।
बाजत घुँघरू ले देबे
हाँ रे हाँ देवरा बाजत घुँघरू लेदेबे॥

भावार्थ– देवर बजने वाले घुँघरू ले देना।
फिर महलों में खूब झमाझम नाचेंगे।
बजने वाले घुँघरू ले देना।
देवर बजने वाले घुँघरू ले देना।

इस पद में देवर-भाभी के मधुर सम्बन्धों का वर्णन किया गया है। देवर-भाभी के मध्य होली खेलने का रिवाज संपूर्ण उत्तर भारत में प्रचलित है।

(24)

हाँ हाँ रे हाँ रावण
मोर कहे ते मानजा
झन करबे कुल के नास
मोर कहे ते मानजा रावण
हाँ हाँ रे हाँ रावण झन करबे कुल के नास॥

भावार्थ– रावण
मेरा कहना तू मान जा
अपने कुल का नाश मत कर
मेरा कहना तू मान जा रावण
रावण मत कर अपने कुल का नाश।

राम से सम्बन्धित फाग गीतों में रामकथा के अधिकाँश पद राम-रावण युद्ध, लंका दहन आदि प्रसंगों को लेकर रचित हैं। इन पदों में वैसा काव्यमय लालित्य नहीं है जैसा कृष्ण से सम्बन्धित फाग गीतों में मिलता है या अन्य श्रृँगारिक गीतों में। होली पर होलिका दहन का प्रतीक मनोवैज्ञानिक रूप से लंका दहन के साथ समानार्थी रूप से जुड़ जाता है, इसलिए इस प्रसंग का उल्लेख फाग गीतों में मिलता है।

(25)

मनमोहन नंदलाल नहीं आये बरसाने में।
बिन सहेली के बाजा दुलहिन बिना बरात
बिन पुरूष के तिरिया रोबे आधी रात।
हाँ रे हाँ मनमोहन नहीं आये बरसाने में॥
बिन पीपर के खैरवा, बिन ठाकुर के गाँव
वहाँ तनिक न बैठिये जे रुख में नहीं छाँव।
हाँ रे हाँ मन मोहन नहीं आये बरसाने में॥
बिन दीया के मंदिर बिन खंबा के ताल
बिन पिया के नारि पड़े रहे बेहाल॥
हाँ रे हाँ मनमोहन नहीं आये बरसाने में॥

भावार्थ– मनमोहन नंदलाल बरसाने नहीं आये।
बिना सहेली के बाजा बिना दुल्हिन के बारात।
बिना पति (पुरूष) के तिरिया रोवे सारी रात।
मनमोहन नहीं आये बरसाने में।
बिना पीपल को खैर और बिना स्वामी का गाँव।
ऐसी जगह पर न बैठें जहाँ वृक्ष की छाया तक न हो।
मनमोहन नहीं आये बरसाने में।
बिना दीपक का मन्दिर और बिना खंब का तालाब।
वे बिना प्रियतम की नारी के समान है।
जो बदहाल पड़ी रहती हैं।
मनमोहन नहीं आये बरसाने में।

बिना सहेली के बाजा का अर्थ है बिना अन्य साजिंदों के या

संगत के एक ही वाद्य को बजाने में कोई रस नहीं है। बिना दुल्हन के बारात भी निरर्थक है क्योंकि दुल्हन ही नहीं है तो बारात क्या खाक करेगी! पुरूष के वियोग में स्त्री आधी रात के समय रोयेगी नहीं तो क्या करेगी! बिना पीपल के मात्र खैर से कार्य नहीं सध सकता और बिना ठाकुर (स्वामी) के गाँव की रक्षा कौन करेगा। यहाँ ठाकुर मालगुजार या जागीरदार के लिए प्रयुक्त हुआ है। ऐसे वृक्ष के नीचे बैठना व्यर्थ है जिसकी छाया ही न मिले। बिना दीपक का मंदिर तो वीरान होता है और बिन खम्बे वाले तालाब में पानी नहीं ठहरता ऐसी मान्यता है। छत्तीसगढ़ में तालाब बनाने के उपरांत उसका विवाह आकाश से करवाने की प्रथा है। विवाह हेतु स्तंभ लग्न मण्डप के अभिप्राय के रूप में स्थापित किया जाता है। बिना स्तंभ के तालाब का विवाह सम्पन्न नहीं होता और बिना विवाह हुए या तो आकाश वर्षा ही नहीं करेगा और वर्षा हुई भी तो उस तालाब में पानी नहीं ठहरेगा। वास्तव में यह वर्षा सम्मोहक या जादू (Rain charm) है।

(26)

हाँ रे हाँ कैकेई सोच विचार के वर माँग
प्राण लेवत हस निकार कैकेई
सोच विचार के वर माँग॥
हाँ रे हाँ कैकेई...

भावार्थ– कैकेई सोच विचार के वरदान माँगो।
(वरदान माँगकर) तुम प्राण (दशरथ के) ले रही हो।
सोच विचार के वरदान माँगो।
कैकेई...।

(27)

सागर मा केवड़ा फूलि रहे
अरे फूलि रहे दुइचार केवड़ा
फूलि रहे सागर मा॥
अरे हाँ सागर मा केवड़ा फूलि रहे॥

भावार्थ– सागर में केवड़ा फूल रहा है।
अरे फूल रहे हैं दो चार केवड़े।
फूल रहे हैं सागर में।
अरे हाँ सागर में केवड़े फूल रहे हैं।

(28)

हाँ हाँ रे सखी गौरी पूजेन जाबो न
माताजी दिये हे पठाय सखी री
गौरी पूजेन जाबो ना
हाँ हाँ रे सखी गौरी पूजेन जाबो॥

भावार्थ– सखी, गौरी पूजने जायेंगे
माताजी ने भेज दिया है सखी री
गौरी पूजने जायेंगे।
सखी, गौरी पूजने जायेंगे॥

(29)

हाँ हाँ रे सखी री तोला बिहावन शिव आये
वर पाये भोलानाथ गौरी
तोला बिहावन शिव आये॥

भावार्थ– सखी, तुम्हे ब्याहने शिव आये।
तुम्हें भोलानाथ वर मिले हैं गौरी।
तुम्हें ब्याहने शिव आये।

(30)

गिरजा संग शंकर खेलैं होरी
अबीर गुलाल मलत मुख ऊपर
रंग छोड़त हैं चहुँ ओरी॥
हाँ रे हाँ गिरजा संग शंकर खेलैं होरी॥
नर सिर माला गरेबिच सोहत
भांग की लटकन वा झोरी।
हाँ रे हाँ गिरजा संग शंकर खेलैं होरी॥
भूत प्रेत नित नाचत गावत
मुख पर मले छये के रोरी॥
हाँ रे हाँ गिरजा संग शंकर खेलैं होरी॥
भक्तजन सदा सिर नांवत
बिनती करत कर जोरी॥
हाँ रे हाँ गिरजा संग शंकर खेलैं होरी॥

भावार्थ– गिरजा के साथ शंकर होली खेल रहे हैं।
अबीर गुलाल गिरजा के मुख पर मल रहे हैं

और चारों ओर रंग डाल रहे हैं।
गले में नर मुंडों की माला शोभायमान है
और भाँग की थैली लटका रखी है।
भूत प्रेत नित्य नाचते गाते हैं।
मुख पर रोली मल रखी है।
भक्त जन सदा सिर नंवाते हैं
और हाथ जोड़कर विनती करते हैं।
शंकर गिरजा के संग होली खेल रहे हैं॥

(31)

अरे हाँ रे हाँ काहे को इतराय कन्हैया
काहे को इतराय लाल।
जब से हरि जनम लियो है
बहुत ही दूध मचायो कन्हैया॥
अरे हाँ रे हाँ काहे को इतराय कन्हैया
फटी पुरानी कदरी के ओढ़इया
बन बन गाय चरइया।
अरे हाँ रे हाँ काहे को इतराय कन्हैया॥
घर घर जा तुम दही माखन लूटे
माखन चोरी करैया।
अरे हाँ रे हाँ काहे को इतराय कन्हैया॥
सखियन संग रास रचे तुम
सब के प्यास बुझैया।
अरे हाँ रे हाँ काहे को इतराय कन्हैया॥

भावार्थ– काहे को इतरा रहे हो कन्हैया।
काहे को इतरा रहे हो लाल।
जब से हरि तुमने जन्म लिया है
तुमने बहुत ही उत्पात मचाया है कन्हैया।
तुम फटी पुरानी कथरी के ओढ़ने वाले हो।
वन-वन में गाय चराने फिरने वाले
तुम क्यों इतना इतरा रहे हो।
तुमने घर-घर जाकर दही और मक्खन लूटा है।
माखन चोर कहलाते हो।
तुम इतना क्यों इतरा रहे हो कन्हैया।
तुमने सखियों के संग रास रचाया है।
तुम सब की प्यास बुझाने वाले हो।
तुम क्यों इतना इतरा रहे हो कन्हैया।

(32)

होरी खेलय गिरजा संग शिव भोला
अबीर गुलाल लाल भई देहिया
देखके सुफल भये मोर चोला।
हाँ रे हाँ होली खेलय गिरजा संग शिव भोला॥
बूढ़े बैल पे सवार होके
अबीर उड़ावत भर झोला।
हाँ रे हाँ होली खेलय गिरजा संग शिव भोला॥
भक्तराम कहै आज गाके
शिवदानी की जैजै बोला॥
अरे हाँ होली खेलय गिरजा संग शिव भोला॥

भावार्थ– होली खेल रहे हैं गिरजा के संग शिव भोला।
अबीर गुलाल से देह लाल हो गई है।
उन्हें होली खेलते देखकर मेरा जीवन सफल हो गया।
होली खेल रहे हैं गिरजा संग शिव भोला।
बूढ़े बैल (नंदी) पर सवार होकर
झोला भर-भर कर अबीर उड़ा रहे हैं।
होली खेल रहे हैं गिरजा संग शिव भोला।
भक्त राम आज गाकर कह रहे हैं
शिवदानी की जयजयकार कर रहे हैं।
होली खेल रहे हैं गिरजा के संग शिव भोला।

(33)

काहे मानेना मोरा श्याम सखी
बिन्दराबन की कुंज गलिन में
रहिया छेके घनश्याम सखी॥
अरे हाँ रे हाँ काहे मानेना मोरा श्याम सखी॥
ग्वाल बाल ले संगमा अपन
बिरिज मा घूमें श्याम सखी॥
अरे हाँ रे हाँ काहे मानेना मोरा श्याम सखी॥
नार पराइ तनिक ना चीन्हें
मोर बहियाँ पकड़ लिए थाम सखी॥
अरे हाँ रे हाँ काहे मानेना मोरा श्याम सखी॥

बिरिज की गोपी कहें मनमोहन से
हार गई की तमाम सखी॥
अरे हाँ रे हाँ काहे मानेना मोरा श्याम सखी॥

भावार्थ– क्यों नहीं मानता मेरा श्याम हे सखी।
वृन्दावन की कुंज गलियों में
राह चलते रोकते हैं घनश्याम हे सखी।
क्यों नहीं मानता मेरा श्याम हे सखी।
ग्वाल बालों को अपने साथ में लेकर
ब्रज में श्याम घूमते हैं हे सखी।
क्यों नहीं मानता मेरा श्याम हे सखी।
पराई नारी को जरा भी नहीं पहचानते
बाँहे पकड़ मुझे थाम लिया हे सखी।
क्यों नहीं मानता मेरा श्याम हे सखी।
ब्रज की गोपी मनमोहन से कहती हैं
वे सबकी सब उनसे हार गई हैं हे सखी।
काहे मानेना मोरा श्याम सखी।

(34)

केदली बन मा भौंरा रे बोलय
हाँ रे हाँ केदली बन मा।
कहाँ जनम लिये सिया जनुकिया
कहाँ जनम लिये राम।
केदली बन मा भौंरा रे बोलय
हाँ रे हाँ केदली बन मा।
राजा जनक घर सिया जनम लिये
अवधपुरी में राम।
केदली बन मा भौंरा रे बोलय
हाँ रे हाँ केदली बन मा॥

भावार्थ– कदली वन में भौंरा (भँवरा) रे बोले
कदली वन में।
कहाँ जन्म लिया सिया हे जनक सुता
कहाँ जन्म लिया हे राम।
कदली वन में भौंरा रे बोले
कदली वन में।
राजा जनक के घर सिया ने जन्म लिया
अवधपुरी में राम ने।
कदली वन में भौंरा रे बोले
कदली वन में।

(35)

होरी खेलै रघुबीरा सरजू नदी के तीरा
हाँ रे हाँ होली खेलै रघुबीरा लाल॥
काकर हाथे कनक पिचकारी
काकर हाथे अबीरा
हाँ रे हाँ होली खेलै रघुबीरा लाल
राम के हाथे कनक पिचकारी
सिया के हाथ अबीरा।
हाँ रे हाँ होली खेलय रघुबीरा लाल॥

भावार्थ– होली खेल रहे हैं रघुवीर सरयू नदी के तट पर।
होली खेल रहे रघुवीर लाल।
किसके हाथ में सोने की पिचकारी है।
किसके हाथ में अबीर।
होली खेले रघुवीर लाल।
राम के हाथों में सोने की पिचकारी
सिया के हाथ में अबीर।
होली खेलय रघुवीरा लाल।

(36)

मोरे अंग पे गुलाल न डालो लला
वारी उमर मोरी लड़कइया
मन में लो अपन विचार लला।
अरे हाँ रे हाँ मोरे अंग पे गुलाल न डालो लला॥
मैं दही बेचन घर से चली हूँ
सारी न मोरी बिगारो लला।
जो सुन पइहैं सास ननदिया
घर से न हमको निकालो लला।
हाँ रे हाँ मोरे अंग पे गुलाल न डालो लला॥
बार-बार तोरे पइयाँ परूँ मैं
घूँघट पट मत टारो लला।

हाँ रे हाँ मोरे अंग पे गुलाल न डालो लला॥
बिरिज ललना तोसे गाके कहै कि
चोली के बन्द मत फारो लला।
हाँ रे हाँ मोरे अंग पे गुलाल न डालो लला॥

भावार्थ– मेरे अंगों पर गुलाल न डालो हे लाल
मेरी उम्र अभी लड़कपन की है।
अपने मन इस बात का विचार कर लो लाल।
मेरे अंगों पर गुलाल न डालो॥
मैं दही बेचने घर से निकली हूँ।
मेरी साड़ी (रंग से) ना बिगाड़ो हे लाल।
यदि मेरी सास या ननद ने सुन लिया
ऐसे में मुझे घर से न निकलवाओ।
मेरे अंग पर गुलाल न डालो लाल।
बार-बार तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ
मेरे घूँघट के पट मत खुलवाओ हे लाल।
मेरे अंग पर गुलाल न डालो लाल।
ब्रज की ललना तुमसे गाकर कह रही है
मेरी चोली के बंद मत फाड़ो हे लाल।
मोरे अंग पे गुलाल न डालो लाल।

(37)

हाँ रे हाँ अवध मा राम खेलैं होरी
भरत सत्रुघन मिल फगुवा गावैं
लखन रहै रंग घोरी॥
हाँ रे हाँ अवध मा राम खेलैं होरी॥
अबीर गुलाल से रंग गई देहइया
निरखे जनक किशोरी।
हाँ रे हाँ अवध मा राम खेलैं होरी॥
पुरवासी सब खुशी मनावंय
श्यामल गौर लख जोरी।
हाँ रे हाँ अवध मा राम खेलैं होरी॥

भावार्थ– अवध में राम खेलें होली।
भरत शत्रुघ्न मिलकर फाग गा रहे हैं।
लक्ष्मण रंग घोल रहे हैं।
हाँ रे हाँ अवध में राम खेल रहे हैं होली।
अबीर गुलाल से देह रंग गई है।
जिन्हें जनक की किशोरी सीता देख रही हैं।
अवध में राम खेल रहे हैं होली।
अयोध्यावासी सब खुशी मना रहे हैं
राम का श्यामल रूप और सीता का गौरवर्णीय रूप देखकर।
अवध में राम होली खेल रहे हैं।

(38)

रहिया में करै तकरार कन्हैया हाँ रे हाँ
बिन्दाबन की कुंज गलिन में
दही माखन लिये है उतार कन्हैया।
रहिया में करै तकरार कन्हैया हाँ रे हाँ॥
कुछ खाये कुछ भुंइया गिराये
पाके बिरिज की नार कन्हैया।
रहिया में करै तकरार कन्हैया हाँ रे हाँ॥
लाज सरम तनिको न लागै
घूँघट के पट दिये फार कन्हैया।
रहिया में करे तकरार कन्हैया हाँ रे हाँ॥

भावार्थ– राह में करे तकरार कन्हैया।
वृन्दावन की कुंज गलियों में हमारे कन्हैया ने
दही और मक्खन उतार लिया है।
राह में करे तकरार कन्हैया।
कुछ खाते हैं कुछ भूमि पर गिरा रहे हैं।
ब्रज की नारी को पाकर कन्हैया ऐसा कर रहे हैं।
राह में करे तकरार कन्हैया।
उनको लाज शर्म भी नहीं आती
कन्हैया ने (हमारे) घूँघट के पट भी फाड़ डाले।
राह में करे तकरार कन्हैया।

(39)

चला हाँ रे आल्हा खेलैं फाग गढ़े समर मा
ब्रह्मा के रचे हे बिहाव
आल्हा खेलैं फाग गढ़ समर मा चला हाँ रे हाँ।
कवन महीना मँगनी आल्हा
कवन मा रचे बिहाव
आल्हा खेलैं फाग गढ़ समर मा
माघ महीना मँगनी आइस

फागुन मा रचै बिहाव
आल्हा खेलय होली गढ़ समरमा॥

भावार्थ–आल्हा खेल रहे हैं फाग गढ़ समर में।
ब्रह्मा ने उनके भाग्य में विवाह लिखा है
और आल्हा खेल रहे हैं फाग गढ़ समर में।
किस महीने में उनकी मँगनी होगी।
किस महीने में आल्हा का विवाह होगा।
आल्हा खेल रहे हैं फाग गढ़ समर में।
माघ महीने में मँगनी (सगाई) आई।
फागुन में विवाह रचाया गया।
आल्हा खेलें फाग गढ़ समर में।

इस गीत में आल्हा के शौर्य का बखान किया गया है। वे विवाह एवं घर गृहस्थी बसाने की अपेक्षा रणभूमि में दुश्मनों के साथ खूनी होली खेल रहे हैं।

(40)

होरी खेलन राम लखन आये
हाँ रे हाँ होरी खेलन राम लखन आये
लागे बसन्त मौरि गये आमा
चम्पा के सब रंग छाये
हाँ रे हाँ होरी खेलन राम लखन आये
राम लखन भरत सतरूघन संग सखा हनुमान आये
हाँ रे हाँ होरी खेलन राम लखन आये
फेंट गुलाल हाथ पिचकारी केशर कलश भर लाये
हाँ रे हाँ होरी खेलन राम लखन आये
तुलसीदास छवि देखि मगन भये चरण कमल चितलाये
हाँ रे हाँ होरी खेलन राम लखन आये॥

भावार्थ–होली खेलने के लिये राम लखन आये।
होली खेलने राम लखन आये।
बसन्त लगते ही आमों में बौर लग गया।
सर्वत्र चम्पई रंग की आभा फैल गई॥
होली खेलने राम लखन आये।
राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न के साथ
उनके सखा हनुमान भी आये।
होली खेलने राम लखन आये।
गुलाल फेंट कर हाथ में पिचकारी
और केशर का कलश भर लाये
राम लखन होली खेलने आये।
तुलसीदास इन सबको होली खेलता देखकर मगन हो गये
और उनके चरण कमलों में अपना चित्त लगा लिया।
राम लखन होली खेलने आये।

(41)

आयी फागुन के कैसन बहार सखी अरे हाँ रे हाँ
अगर अबीर लगा मुख ऊपर
प्रेम के रंग दिये डार सखी।
आयी फागुन के कैसन बहार सखी अरे हाँ रे हाँ॥
ग्वाल बाल मिल सब फगुवा गावैंय
बिन्दाबन के मझार सखी।
आयी फागुन के कैसन बहार सखी अरे हाँ रे हाँ॥
आम के डारा मा बोलय कोइलिया
आकर के भिनसार सखी।
आयी फागुन के कैसन बहार सखी अरे हाँ रे हाँ॥
सुन्दरलाल सुहावन मौसम
खिले बाग मा अनार सखी।
आयी फागुन के कैसन बहार सखी अरे हाँ रे हाँ॥

भावार्थ–आयी फागुन की कैसी बहार सखी।
अगर अबीर मुख पर लगा
प्रेम का रंग डाल दिया।
आयी फागुन की कैसी बहार सखी।
ग्वाल बाल सब मिलकर फाग गा रहे हैं।
वृन्दावन के बीच होली खेल रहे हैं।
आयी फागुन की कैसी बहार सखी।
प्रातःकाल होते ही हे सखी।
आम की डाल पर कोयलिया बोल रही है।
आयी फागुन की ऐसी बहार सखी।
लालिमा लिये हुए सुन्दर सुहावना मौसम है।
बाग में अनार के फूल खिले हैं।
आयी फागुन की कैसी बहार सखी अरे हाँ रे हाँ।

(42)

होरी खेलत हैं घनश्याम सखी
हाँ रे हाँ होरी खेलत है घनश्याम सखी॥टेक॥

ग्वाल बाल के संग अपन घूमें ब्रज में श्याम सखी।
हाँ रे हाँ होरी खेलत हैं घनश्याम सखी॥
अबीर गुलाल लिये हाथन मा
मलते मुख थाम सखी।
हाँ रे हाँ होरी खेलत हैं घनश्याम सखी
नार परायी तनिक न चीन्हय
पाके अकेली नन्द ग्राम सखी।
हाँ रे हाँ होरी खेलत हैं घनश्याम सखी॥
केतनो मना करूँ बात न मानय
मसके चोली सुबह शाम सखी
हाँ रे हाँ होरी खेलत हैं घनश्याम सखी॥
भक्तजन कहै बिरिज वनिता
नाहक किये बदनाम सखी॥

भावार्थ– होली खेल रहे हैं घनश्याम सखी।
होली खेल रहे हैं घनश्याम सखी।
ग्वाल बाल के संग स्वयं घूम रहे हैं श्याम सखी।
होली खेल रहे हैं घनश्याम सखी।
हाथों में अबीर गुलाल लिये हुए हैं।
सबको पकड़-पकड़ उनके मुख पर लगा रहे हैं हे सखी।
होली खेल रहे हैं घनश्याम हे सखी।
वे पायी नारी को भी नहीं पहचानते (छोड़ते)
नन्दगाँव में उन्हें अकेली पाकर
उनके मुख पर गुलाल मल देते हैं।
होली खेल रहे हैं नन्दलाल सखी।
कितना भी मना करूँ बात नहीं मानते
सुबह शाम चोली मसकते हैं हे सखी॥
होली खेल रहे हैं घनश्याम हे सखी।
भक्तजन कह रहे हैं कि ब्रज की स्त्रियाँ
नन्दलाल को नाहक ही बदनाम कर रही हैं॥

(43)

मृगनयनी नारि नवरतन रसिया
अतल सजा को लहका सहे
लाल पलंग पचरंग तकिया
मृगनयनी नारि नवरतन रसिया॥
पियंरी गौरी पियरी सारी
झमका सा मखमल रसिया
मृगनयनी नारि नवल रसिया॥
बाँह बड़ा बाजूबन्द सोहै
झलके आरसी अद्‌भुतिया
मृगनयनी नारि नवल रसिया॥
छोटी रे अंगुरी मा मुंदरी सोहै
लिए हमेल दिये छतिया
मृगनयनी नारि नवल रसिया॥
सूरदास हरि रूप निहारे
चरण कमल पर चित बसिया।
मृगनयनी नारि नवल रसिया॥

भावार्थ– मृगनयनों वाली नवरत्न सी रसिक है
उसका अत्यन्त श्रृँगार दमक रहा है।
उसका लाल रंग का पलंग
और पंचरंगी तकिया शोभायमान है।
स्वर्णवर्णी गौरी और उसकी पीतवर्ण की साड़ी
और उसके मखमली वस्त्र चमक दमक रहे हैं।
मृगनयनी नारी है कृष्ण (नवल) रसिया हैं।
बाँह पर भारी बाजूबन्द शोभायमान है
और दर्पण में उनका प्रतिबिम्ब अद्‌भुत सुंदर लग रहा है।
मृगनयनी नारी और कृष्ण रसिया हैं।
छोटी अँगुली में मुद्रिका शोभित है।
छातियों पर हमेल (सिक्कों की बनी माला) धारण किये है
सुन्दर मृगनयनी नारी और रसिक हैं कृष्ण।
सूरदास हरि का रूप निहार रहे हैं।
उनका चित्र चरण कमलों पर बसा है।
मृगनयनी सुन्दर नारी है और नवल (कृष्ण) रसिया हैं।

(44)

अरे हाँ रे हाँ बागे बगीचा के अवसर रंगागेहे
रंगागेहे अँगना के दुआर
गाँव-गाँव जागे हे होली के आगी
मोर तन उठे हे अंगार॥
अरे हाँ रे हाँ बागे बगीचा के अवसर रंगागेहे
रंगागेहे अंगना के दुआर॥

भावार्थ– बाग बगीचों की रंगीनी का मौसम आ गया है
वसन्त में बाग बगीचों में बहार आ गई है।
आँगन का द्वार भी रंग गया है
अर्थात् गाँव-गाँव में होलिका दहन हो रहा है।
मेरे तन में भी अंगारे धधक रहे हैं (कामोत्तेजना)
वसन्त में बाग-बगीचों में बहार आ गई है।
और आँगन का द्वार भी रंगीन हो उठा है॥

(45)

मन हरलियो रे मन हरलियो रे
छोटे से नंद के लाला।
छोटे से रुखवा कदम के
भुइयाँ लहसै डार
ऊपर में बइठे कन्हैया
मुखले मुरली बजाय।
छोटे से नन्द के लाला
सांकुर खींच गोकुल के राधा
पनिया भरन को जाय
बीच में ठाढ़े नन्द के लाला
अंग लिये लटकाय॥
छोटे से नन्द के लाला
मन हर लियो रे
हाँ रे हाँ मन हर लियो रे
छोटे से नन्द के लाला॥

भावार्थ– मन जीत लिया रे मन जीत लिया
छोटे से नन्द के लाला ने।
कदम के छोटे से वृक्ष की शाखा भूमि पर झुकी जा रही है
उस कदम वृक्ष पर कन्हैया बैठे हैं
और मुख से मुरली बजा रहे हैं।
द्वार की साँकल बन्दकर गोकुल की राधा
पानी भरने को जा रही है
बीच मार्ग में खड़े नन्दलाल ने
उन्हें अपने अंग से लिपटा लिया।
छोटे से नन्द के लाला ने मन जीत लिया रे
मन हर लियो रे
छोटे से नन्द के लाला ने।

रंग पंचमी तक फागुन त्यौहार चलता है। होली अथवा वसन्तोत्सव के पर्व के समापन एवं उसकी विदाई का अवसाद जनमानस के मन पर छा जाता है। लोग भारी मन से उसे विदाई देते हैं परन्तु उससे आश्वासन भी लेना नहीं भूलते कि उसकी पुनः वापसी कब होगी। फागुन का विदा गीत यहाँ उद्धृत है–

(46)

फागुन महाराज फागुन महाराज
अब के गये कब आबे
अरे कऊन महीना हरेली
अऊ कऊन महीना तीजा तिहार
अरे कऊन महीना के नवमी दसहरा
अरे कऊन महीना रे दियना जलाये
कऊन महीना रे फागुन
अब के गयेले कब आबे
सावन महीना मा हरेली
भादो तीजा के तिहार
कुँवार महीना नवमी दसहरा
कातिक मा दियना जलाय
फागुन महीना फागुन आये महाराज
अब के गयेले कब आबे॥

भावार्थ– फागुन महाराज फागुन महाराज
अब के गये कब आओगे।
अरे किस महीने में हरेली (अमावस्या)
और किस माह में तीज का पर्व आता है।
अरे किस माह में नवमी और दशहरा आते हैं।
अरे किस माह में दीपक जलाये जाते हैं।
किस महीने में फागुन
अब के गये कब आओगे।
सावन मास में हरेली
और भादौं में तीज का त्यौहार।
क्वाँर मास में नवमी व दशहरा
और कार्तिक में दीपक जलाये जाते हैं।
फागुन महीने में आप फागुन त्यौहार (होली) आये महाराज
अब के गये फिर कब आयेंगे।

ब्रज के बारहमासी गीत

सर्वोत्तम त्रिवेदी 'लघु'

लोकमानस में भरी हुई, लोकजीवन में प्राप्त गहन अनुभवों की रेखाएँ जब शब्दों का रूप लेकर लोक में कही सुनी या लिखी जाती हैं तो वे लोकवार्ता या लोककथा के नाम से विभूषित हो जाती हैं। अनुभव अथवा इतिहास की कथाएँ जब गेय हो जाती हैं, गीत बन जाती हैं, अर्थात् गायी जाने लगती हैं तो वे लोकगीत कहलाती हैं और लोकगीत यदि बहुत विस्तार प्राप्त करले तो कहलाता है लोकगाथा।

लोकगीत, जहाँ लोकमानस की सम्पूर्ण-अभिव्यक्ति है, पूरी आत्मकथा है वहीं लोकमुख की मीठी-मीठी वाणी भी होती हैं। इनमें सजी सँवरी शहरी भाषा न होकर क्षेत्रीय बोली और शैली (विधा/धुन/तर्ज) की प्रमुखता होती है।

ब्रज अंचल के लोकगीतों में रसिया की सबसे अधिक प्रधानता है। वहाँ, विशेष रूप से गाँवों में और कस्बों में एक सरल व सीधी लोकधुन 'बारहमासी' बहुत प्रचलित है। जिसमें लोक घटक के अपने भावों, अनुभवों की सरल सहज और सततता में अभिव्यक्ति करना बहुत सुगम होता है।

देश के अनेक क्षेत्रों में बारहमासी (बारहमाशा/बारमाशा/बारहमासे) लोकगीतों को गारी, दिवारी, दादरा, लावनी, फाग, भगत और रसिया फटका और बारहमासी आदि धुनों में गाया जाता है। इनमें बारहों मास (व कभी तेरह मास, अधिक मास लौंद सहित) का विवरण देते हुए लोक-गीतों या लोक-गाथाओं का गान किया जाता है।

ब्रज में बारहमासी के दो अर्थ हैं - एक- बारहमासी नाम वाली एक विशेष लोकधुन और दो- वे लोकगीत कि जिनमें किन्ही कथाओं को बारह (या तेरह) मासों में विभाजित करते हुए गाया जाये। बारहमासी धुन वाले लोकगीतों में कथा या गाथा को बारह मासों में बाँटकर भी गाया जाता है तो फिर बिना बाँटे हुए, इकसर्रा तरीके से भी।

मैथिली, बुंदेली व बंगला बारहमासी लोकगीतों में जहाँ विरह कथाओं का वर्णन अधिकतर हुआ वहाँ ब्रज बारहमासी लोकगीतों में

धर्म, इतिहास, हास्य, मनोरंजन आदि की तरह ही सामान्यतः हुआ है न कि कोई बहुलता से या विपुलता से। हिन्दी शब्दकोष में बारहमासी का अर्थ - 'वह गीता जिसमें बारह महीनों के विरह का वर्णन हो' है।

ब्रज बारहमासी लोकगीतों में कोमल-सरल लय, मधुरता और हृदय के भावों की प्रचुरता होती है। कहना चाहिए कि एक लोच होता है, जीवन्तता होती है और सहज-सुगम भावनाओं का इनमें समावेश होता है, प्रवेश होता है। बारहमासी की धुन वाले लोकगीतों में छन्द-व्याकरण या नीति-पिंगल के बंधन नहीं होते किन्तु अन्य धुनों तर्जों वाले बारहमासी गीतों में ये बंधन हो भी सकते हैं।

सौ वर्ष पूर्व लिखी गई बारहमासी भी उपलब्ध हुई जिससे वयोवृद्ध लोग अनुमान लगाते हैं कि यह कई सौ वर्षों से ब्रज भाषा में लिखी और गायी जाती रही है। साधारणतया ब्रज बारहमासी चैत से ही प्रारम्भ होती है अपवाद के रूप में अन्य माह से प्रारम्भ बारहमासी भी उपलब्ध है।

दंगलों, प्रतियोगिताओं या बारहमासी रचना हेतु शीघ्रता सहित अन्य कारणों से ऐसी बारहमासी भी मिलती है जिनमें प्रत्येक अन्तरा के प्रारंभ में क्रम से चैत वैशाख जेठ आदि का प्रयोग करने मात्र से ही उन्हें बारहमासी का रूप दे दिया है लेकिन इस लेख में उन्ही को सम्मिलित किया गया है कि जिसमें उस मास से संबंधित विवरण दिया गया है।

ब्रज बारहमासी लोकगीतों की प्रचुरता से यह निश्चित है कि इस क्षेत्र में इनकी संख्या हजारों में होगी। शहरों के बाद अब इनका प्रचलन कस्बों में कम जरूर हो गया है किन्तु गाँवों में ग्वालिये और अन्य सीधे अनपढ़ या सुधी गायक लोग, गौ-चरण के समय या रात्रि में चौपालों पर इनका गायन अभी बड़े ही मनोयोग और आनंद से करते हैं। मथुरा गोवर्धन और दिल्ली से पहले इनको पुस्तक रूप में प्रकाशित भी किया गया था।

ब्रज बारहमासी लोकगीतों के अन्य गुणों के साथ कोमलता और मधुरता ने इनकी अलग ही पहचान बना दी है।

अन्य लोकगीतों की तरह ही, इनके लेखकों का भी पूरा पता तो कम ही मिल पाता है तब भी इनके अंत में लगी 'छाप' से उनका कुछ अता-पता तो मिल ही जाता है।

सामान्यतया इन्हें पुरूषों द्वारा ही अधिक गाया जाता है तब भी राम-कृष्ण-तुलसीदास आदि धार्मिक-सामाजिक बारहमासी लोक-गीतों को मातृ-शक्ति भी पर्याप्त रूप से गाती रही है। चलचित्र (सिनेमा) के प्रभाव से शहरों में तो अब इनका चलन बन्द सा ही हो गया है।

अन्य विधाओं में बारहमासी लोकगीतों की प्रस्तुति से पूर्व सर्वप्रथम एक बारहमासी यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं जो 'बारहमासी' धुन का प्रतिनिधित्व करती है। लोकगायक श्री मौहरू सिंह जी सैनी जो रूपी, लोकगायक के पिता हैं, उनसे प्राप्त तुलसीदास की बारहमासी इस प्रकार है-

सुमर सिरी जगदीस ईस के चरनन सिर नाऊँ।
तुलसीदास की कथा, रूप कछु थोरे में गाऊँ॥
बिप्र की रत्नावली नारी। आपस में भारी भारी प्रेम,
नारि पति के प्रानन प्यारी॥
इश्क में ब्हौत रह्यौ फसकै। एक दिना बाकी नार,
चली गई पीहर कूँ नसकै॥
नर ने जुलम गुजारौ है।
तुलसीदास महाराज फेर ससुरार सिधारौ है॥1॥
आधी रात निखंड, करी चलिबे की तैयारी।
घटा उठी घनघोर, झुकी भादों की अँधियारी॥
काम के सता रहे भभका। रस्ता में नरिया परी,
रात में ना कोई नवका॥
न दीसै कहूँ किनारौ है। तुलसीदास महाराज..... ॥2॥
सुभर सिरी रघुवीर, ध्यान धर हिरदै में रबका।
नदिया में गयौ कूद, कियौ नायँ हिरदै में उबका॥
प्रभु धन माया है तेरी।
है गयौ पल्लीपार करी नायँ एक पलकी देरी॥
राम ने दियौ सहारौ है। तुलसीदास महाराज..... ॥3॥
है गयौ पल्लीपार, सुनौ अब आगै कौ झगड़ौ।
झारन में खुख रए पाम, रात में नायँ दीखै दगड़ौ॥
काम बस बिरमै अज्ञानी।
पंडित जी करै बिचार, काउ विध मिल जाय मिसरानी
हौत थक गयौ बिचारौ है। तुलसीदास महाराज..... ॥4॥
गयौ ससुर के द्वार, न कोई म्हौडे ते बोलै।
याऐ पाए लगे किंवार, बता साँकर कैसे खोलै॥
लगौ यामें भीतरे ते तारौ। किए अनेक उपाय,
सोच में ठाड़ौ अपढारौ॥
भरौ सरमन कौ भारौ है। तुलसीदास महाराज. ..... ॥5॥
चारौं लंग बरोबर डोलौ, फिर पीछै आयौ।

बड़ौ जहरिया नाग, लटकतौ मोरी में पायौ॥
जान गयौ डारी है रसरी। वाय पकरि चढ़ि गयौ,
कमर बेसरमी पै कसली॥
इश्क में भरै सरारौ है। तुलसीदास महाराज. ..... ॥6॥
सरप पकरि चढ़ि गयौ, अटा पै तनिक इसारे में।
उतमें बाकी नार, पढ़ै गीता चौबारे में॥
पलंग पै बैठी अलबेली। लगौ भजन में चित्त,
बड़े काउ सतगुर की चेली॥
पति जब खड़ौ निहारौ है। तुलसीदास महाराज..... ॥7॥
पति लियौ पहचान, नार नें धर दीनी पोथी।
लखौ हाल बेहाल, भीज रइ पानी में धोती॥
रची का है मेरे करतार। आ गए नंगे पाम, रात में ये मेरे भरतार॥
कहा ये काम तुम्हारौ है ! तुलसीदास महाराज. ..... ॥8॥
सुन नारी के बैन, उठी गुस्सा भारी तन में।
अपनी गलती सोच, समझ कै खडौ रह्यौ मन में॥
फेर यों बोलौ नारी ते। जो कछु बीतौ हाल, लगौ कहवै घरवारी ते॥
दोस कछु नायँ हमारौ है। तुलसीदास महाराज. ..... ॥9॥
मैंने अपनी लीनी जाय, चल्यौ जब मैं अपने घर ते।
तेरे मन में बेईमानी, फसी पीहर में काउ नर ते॥
चली आई जाते तू नस कै। भारी मारै मजा,
नार तू पीहर में बसकै॥
पति ते नेह बिसारौ है। तुलसीदास महाराज.....॥10॥
समझाए भरतार, नार नें दै-दै कैं घुरकी।
सुन नारी के बैन, उतर गई नैनन की सुरकी ॥
चले तुम आधी पै घर ते। जितनी मोते प्रीत,
प्रीत गर तुम हरते करते॥
स्वर्ग कौ मिलतौ द्वारौ है। तुलसीदास महाराज. ..... ॥11॥
अब एक मिनिट नायँ रूक्यौ, रही नायँ ठहरन की शक्ति।
तुलसीदास महाराज, करी फिर ईश्वर की भक्ति
बने फिर ऐसे तपधारी। मन में लीनी जान, मिलिंगे निच्चै बनवारी॥
सदा सन्तन प्रन पारौ है। तुलसीदास महाराज. ..... ॥12॥
भई प्रभु की कृपा, दई नारी ने जो शिक्षा।
करै प्रभु कौ भजन, पैट कूँ कर लावै भिक्षा॥
ज्ञान याने नारी तै पायौ।
तुलसीदास महाराज फेर वापिस व्हाँ ते आयौ॥
ज्ञान कौ भयौ उजारौ है। तुलसीदास महाराज. ..... ॥13॥
भूल-चूक करौ माफ, सबन ते अर्ज हमारी है।
शोभाराम द्विज कहै, खड़ी सिगरी सरदारी है॥
इश्क की ब्हौत बुरी फाँसी। बृजकिशोर द्विज कहै,
खत्म करदी बारहमासी॥
कृष्ण कौ दै जै कारौ है। तुलसीदास महाराज.....॥14॥

संसार के स्वामी भगवान श्री कृष्ण को याद करके, उनके पैरों में सिर झुकाता हूँ और तुलसीदास जी की कथा को (मैं) गाता हूँ। उस ब्राह्मण की रत्नावली पत्नी थी। उनमें आपस में बहुत प्रेम था। पत्नी, पति को प्राणों से भी अधिक प्रिय थी। तुलसीदास, रत्नावली के प्रेम में बहुत फँसे हुए थे तब एक दिन माँ के घर रत्नावली चली गई। इस तरह पत्नी ने पति पर बहुत ही अत्याचार किया है और तब तुलसीदास महाराज भी अपने ससुराल को चल दिये। ॥1॥

आधी रात की शान्ति में चलने की तैयारी कर दी। गहरी घटा उठ रही है। भादौं की अँधेरी काली-काली घटाएँ घिर आई हैं। उन्हें काम-वासना की गरमी (तपन) सता रही है। रास्तें में नदी पड़ी किंतु रात में न कोई नाव है और (नदी इतनी चौड़े पाट वाली है कि) नदी का दूसरा किनारा भी दिखाई नहीं देता।

श्री तुलसीदास, भगवान राम का सुमिरन करके और हृदय में भगवान राम का ध्यान धरकर नदी में कूद गये। उन्होंने हृदय में कोई भी शंका नहीं की है। वाह रे प्रभु तेरी माया धन्य है कि (अधिक देर नहीं लगी और) वे एक क्षण की देरी किये बिना ही (गंगा) उतर गए हैं क्योंकि उन्हें भगवान राम ने सहारा दिया है॥3॥

जब पल्ली यानि दूसरी पार ही पहुँच गये तो सुनो कि फिर किस बात की लड़ाई (अब क्या कठिनाई?) तो पैर बार-बार काँटों में, झड़ियों में फँस रहे हैं और रात में गढ़लीक भी दिखाई नहीं देती। काम के वश में होकर अज्ञानी तुलसीदास भ्रम में फँस गये हैं। वे विचार करते हैं कि किसी तरह उनकी पंडिताइन मिल जाय। वे बहुत थक गये हैं॥4॥

ससुराल पहुँचे तो वहाँ कोई बोलता नहीं। एकदम चुप्पी है। किवाड़ लगे हुए हैं तो बताओ साँकल खोलने की (अशिष्ट) व्यवस्था कैसे की जाय। उसमें भीतर से ताला लगा हुआ है। अनेक उपाय किये फिर स्वयं सोच में खड़े हो गए। संकोच कर लज्जा से भरे जा रहे हैं॥5॥

घर के चारों ओर बार-बार घूमे। अन्त में फिर पीछे की ओर

गये। (तो) वहाँ बड़ा विषैला काला नाग, मोरी में लटका हुआ पाया था। समझ में आया कि रस्सी डली हुई है और वे उसी को पकड़कर चढ़ गये क्योंकि जब बेशरमाई (धारण करने) का पक्का निश्चय कर लिया (तो फिर चिन्ता की बात ही क्या) है। वे तो आखिर प्रेम में सैं-सैं करते हुए (सराबोर हो रहे) थे॥6॥

जरा सी ही क्रिया से वे साँप को पकड़कर ऊपर चढ़कर चौबारे के सामने पहुँच गये हैं। वहाँ उनकी पत्नी गीता पढ़ रही है। वह अनोखी (सुन्दर) नारी पलंग पर बैठी है और किसी बड़े गुरू की शिष्या की तरह उसका मन, भजन में लगा हुआ है। उसने पति को खड़े देखा। ॥7॥

पति को पहचान कर (रत्नावली) ने पुस्तक (गीता) को रख दिया। पति का हाल देखा कि धोती पानी से भीग रही है। सोचने लगी कि कर्ता प्रभु ने यह क्या रचना की कि मेरे भरण पोषणकर्ता पति नंगे-उघाड़े ही पैदल चले आये हैं। (पूछने लगी) आपने यह कैसा काम किया है?॥8॥

पत्नी के वचन सुनकर उनके शरीर में गुस्से का भारी आवेश हो गया तो भी अपनी गलती का विचारकर, समझ (से धीरज रख) कर खड़े रहे और फिर पत्नी से, जो कुछ उनके साथ बीता वह सारी घटना सुनाई है। कहने लगे कि (अरी पत्नी रत्नावली! देख) इसमें हमारी कोई गलती नहीं है। ॥9॥

(तुलसीदास अपनी पत्नी से बोले) जब मैं अपने घर से चला था तो मैंने अपने मन में यह समझ लिया था कि तेरे मन में कोई बेईमानी है, तू अपने मैके में किसी मनुष्य से फँसी हुई है। इसी लिए तू छुपकर चली आई है और यहाँ पिता के घर में रहकर, बहुत आनंद प्राप्त कर रही है और तुमने पति से स्नेह को भुला दिया है। (इसीलिए) तुलसीदास ससुराल आया है। ॥10॥

(तब) रत्नावली ने अपने पति को डरा धमकाते हुए ताने देकर समझाया तो पत्नी के वचन सुनकर, उनके नेत्रों में बसी (काम वासना और जवानी की) ललाई उतर गई। (पत्नी बोली)- 'आप आधी रात को घर से निकल दिये। आपकी जितनी मुझसे प्रीति है, उतनी यदि भगवान से करते तो आपको स्वर्ग का दरवाजा मिल जाता।'॥11॥

अब (तुलसीदास) एक मिनिट भी नहीं रूके। उनकी ठहर पाने, खड़े रहने की ताकत (मानों) नहीं रही है। फिर तुलसीदास जी ने ईश्वर की भक्ति की। बड़े भारी तपस्या करने वाले बने गये। उन्होंने मन में विश्वास कर लिया कि प्रभु निश्चित ही मिलेंगे क्योंकि उन्होंने हमेशा सन्तों के प्रति (उनकी रक्षा का) अपना वचन निभाया है। ॥12॥

पत्नी ने जो सीख दी तो प्रभु की ऐसी कृपा हुई कि भोजन के लिए तो भीख माँगकर ले आते और (बाकी समय में) प्रभु का भजन (ध्यान) करते उन्होने पत्नी से ज्ञान (क्या) पाया कि वहाँ से वापस आ गये। ज्ञान ने (उनके जीवन में) प्रकाश कर दिया है॥13॥

(खोज का विषय है कि गायक व लेखक कौन हैं इस कथानक के किन्तु लगता है कि) सभी श्रोतागणों को सुनाकर गायक शोभाराम शर्मा भूल चूक के लिए क्षमा माँगते हुए (अपना मत प्रकट करते हुए) प्रार्थना कर, इश्क को बहुत बड़ी फाँसी बताते हैं और कृष्ण भगवान की जय का घोष करते हुए लेखक बृजकिशोर शर्मा इस बारहमासी लोकगीत की पूर्णता की घोषणा करते हैं। ॥14॥

कामाँ, अगमा- मोहल्ले के छन्द रसिया दंगल अखाड़े के उस्ताद् (गुरू) श्री पं. रामजीलाल शर्मा ने बारहमासी का यह रसिया सुनाया-

रुजगार बिना बड़ी ख्वारी। भई परदेसन की त्यारी ॥टेक॥
फागुन में तोय छोड़ चले, मन देवर ते बहला लीजो।
चैत में चिंता मत करियो, रघुवर ते ध्यान लगा लीजो॥
उतरत ही वैसाख, जेठ में परत दशहरा न्हा लीजो॥।
अषाढ़ महीना लगै भामिनी,
वर्षा होयगी भारी- भई परदेशन ..... ॥1॥

सावन में मन भावन कामिनी!, बाग झूलिबे कूँ जइयो।
भादौ रैन अँधेरी आवै, देख मतीना दहलइयो॥
पिया की बाली बोलै पपैया, नैन नीर मत भर लइयो॥।
क्वार कनागत लगै भामिनी! बामन नौत जिमारी।
गई परदेसन की . .....॥2॥

कातिक में दिन छोटे आमें, बात कहत कट जामिंगे।
अगहैन महीना आवै प्यारी, जाड़े तोय सतामिंगे॥
फूँस में सीरी चलै धुरैरा, याद तेरे हम आमिंगे॥।
माह महीना बसंत ऋतु को, घरइ बसंत मना री।

भई परदेशन की .....॥3॥

है पुरूषोत्तम मास तेरहवों, जानत हैं सब नर नारी।
बारहमासी पूर्ण भई, जे तेरे काजै हितकारी ॥
तेरहमास पूर्ण भए प्रीतम, आये घर मिल गई प्यारी ॥।
पुरूषोत्तम कवि लिखें नाजनी,
इच्छा पूर्ण हमारी- भई परदेशन की ..... ॥4॥

रोजी-राटी, काम-धन्धे के बिना बड़ी ही दुर्दशा और कठिनाई है इसलिए धन कमाने के लिए दूसरे गाँव या शहर जाने की तैयारी हो गई है। (पति समझाता है कि) मैं फागुन में तुझे छोड़कर जा रहा हूँ। होली का समय है इसलिए देवर से (हास-परिहास करके) मन को बहला लेना। चैत्र में चिन्ता न करके श्रीराम से मन लगा लेना (क्योंकि इसमें राम का जन्मदिन, रामनवमी आता है)। जैसे ही वैशाख उतरे, जेठ के महीने में गंगा दशहरा पर गंगा स्नान करना। अषाढ़ महीना लगते-लगते तो वर्षा बड़े जोर से आने लग ही जायेगी। परदेश जाने की तैयारी कर रहा हूँ।

मन को अच्छी लगने वाली, प्यारी! सावन के महीने में झूला-झूलने बागों में जाना। भादों में (कृष्ण जन्माष्टमी के आसपास) काली रात होती है, उन्हें देखकर डरना मत और उन दिनों पपीहा, पिया! पिया! की बोली बोलता है तब तू (मुझको स्मरण करके) अपनी आँखों में आँसू मत भर लाना। क्वार (लगते ही) कनागत यानि श्राद्धपक्ष प्रारंभ हो जाता है। (ध्यान रखना) ब्राह्मणों को निमंत्रित कर (आदर से) भोजन कराना। दूसरे गाँव-शहर जाने की तैयारी हो रही है।

(अनुप्रास आदि अलंकारों से सजी इस बारहमासी में आगे कहा है कि) कार्तिक में दिन छोटे होते हैं, बात करते-करते ही कट जायेंगे, अगहन महीना आयेगा तब तुझे ठंड अवश्य सतायेगी, कामुकता बढ़ायेगी। पौष में धीमी किन्तु ठंडी हवा चलती है तब तुझे हम जरूर याद आयेंगे। माह महीना में बसंत (पंचमी) ऋतु की दृष्टि से तू घर पर ही बसंत मनाना।

तेरहवाँ लौंद का महीना पुरूषोत्तम मास है यह तो सब नर नारी जानते ही हैं। बारहमास के लिए बताई हुई बातें पूरी हुईं जो तेरे भलाई के लिए हैं। कवि पुरूषोत्तम भगवान का स्मरण कर कहते हैं कि अब तेरहों मास पूर्ण हो गये। पति घर आये। प्यारी मिल गई। हे प्रिया! अब हमारी इच्छा पूरी हो।

राम की बारहमासी

चैत *अयोध्या में जन्में री राम। चन्दन सों लिपवाये री धाम॥*
गज मुतियन के चौक पुराय। साने के कलश दिये भरवाय॥

घर-घर मंदिर बजत बधाये। पठाये तैनें नारि,
बैरिन बन बालक मेरे॥ ॥1॥

वैशाख *मास ग्रीष्म ऋतु लागी।*
चलत पवन मानों बरसत आगी॥
जैसे जल बिना तड़फत मीन। सोगति हमारी कैकई कीन॥
दिए दुःख दारुन हैं रे। पठाये तैनें . ..... ॥2॥

जेठ *मास लू एँ लागत अंग। राम लखे न सीता माता संग॥*
रामचन्द्र पद कमल समान। पजरत सब धरन और आसमान॥
चलै मग कैसे रे। पठाये तैनें. ..... ॥3॥

अषाढ़ *मास घन गरजत घेर। रटत पपीया कूकत मोर॥*
कहत कौशिल्या अवधपुर धाम।
भीजत होंगे सिया लछमन राम॥
समझे चित नहिं है रे। पठाये तैनें. ..... ॥4॥

सावन *रिमझिम बरसै नीर। कैसे धरै कौशिल्या धीर॥*
छोटी-छोटी बूँदन बरसत नीर। भीजत होंगें सिया रघुवीर॥
झमक झर लाग्यौ है रे। पठाये तैनें. ..... ॥5॥

भादौं *में बरसै नीर अपार। घर अपने सब ही संसार ॥*
गुंजित कूजत फिरत भुजंग। राम लक्ष्मण और सीता संग ॥
रैन अंधियारी है रे । पठाये तैनें..... ॥6॥

लग्यौ सखीरी मास ***क्वार****। धरम करत सब ही संसार॥*
जो घर होते सिया लछमन राम। विप्र जिमाती, मैं देती दान॥
थार भर-भर मोती के रे। पठाये तैनें..... ॥7॥

लाग्यौ री सखी ***कार्तिक*** *मास। उठत कलेजा से दुःख की फाँस।*
घर-घर दीपक जारत नारी। मेरी अयोध्या निपट अँध्यारी॥
परी कैकई नारी कै रे। पठाये तैनें.....॥8॥

अगहन *में सखी करती सिंगार।*
वस्त्र सिमाती मैं सोने के तार॥
पट पीताम्बर सुघड़ बनाया। सिरपै जरी की सी पाग बँधाय॥
गले बिच माला इक गेरे। पठाये तैनें. ..... ॥9॥

लाग्यौरी सखी जो ***पौष*** *बिहार। रैन भई जैसे खाँड़े की धार॥*
कुश आसन कैसे पौठेंगे राम। कैसे करै वन में विश्राम॥
मो जन्म जरी के रे। पठाये तैनें. ..... ॥10॥

माघ *मास ऋतु फूले बसन्त। कैसे जिऊँ बिना भगवन्त॥*
मेरी अयोध्या के सिर मौर। ठाँड़े भरतजी ढोरत चौर॥
जाय जब बसंत धरा से रे। पठाये तैनें. ..... ॥11॥

फागुन रंग रच्यौ सब बंधु। चोबा चन्दन अतर सुगन्धु॥
ठाँड़े भरतजी घोर अबीर। कौन पै छिड़के बिना रघुवीर॥
मैं कैसें सबर करूँगी रे? पठाये तैनें. ..... ॥12॥

लौंद जो गावै बारहमासा। पावै बैकुण्ठ करिहैं वासा॥
कहत भवानी अवधपुरी धाम।
वन से आये सिया लछिमन राम॥
मिले कैकेई सों चरन परे।
पठाये तेनें नारि बैरन बन बालक मेरे॥13॥

चैत मास में अयोध्या में श्रीराम का जन्म हुआ है। अवधपुरी धाम को चन्दन से लिपवाया गया। गज मुक्ताओं से चौक पुराये गये और सोने के कलशे भरवाये गये। प्रत्येक घर और मंदिर में बधाई बज रहीं हैं, गायी जा रहीं हैं। (अरे यह क्या हुआ?) अरे (कैकई!) तुमने बैरिन बन कर मेरे बालक (राम लक्ष्मण) वन भिजवा दिये॥1॥

वैशाख महीने से गर्मी की ऋतु लग गई। हवा (तो) ऐसे चल रही हैं मानों आग बरस रही हो। जैसे पानी के बिना मछली तड़पती है, कैकैई ने हमारी वह गति कर दी है। अरे! बड़े ही भारी दुःख दिये हैं। रे अरी बैरिन! तुमने मेरे बालक जंगल भिजवा दिये हैं॥2॥

जेठ मास में तो लुएँ शरीर को छू रही हैं। (प्रजा विचार करती है कि) राम और लक्ष्मण के साथ सीता माता भी (गई) हैं। (भगवान) श्रीराम के चरण तो कमल के समान हैं। सारी धरती और आकाश जल रहा है। रास्ता कैसे चलते होंगे। अरे (कैकेई महारानी) तुमने बैरिन बनकर हमारे बच्चों को वन में भिजवा दिया है॥3॥

अषाढ़ मास में घन या बादल जोर-जोर से गरज रहे हैं। पपीहे पीऊ-पीऊ रट रहे हैं और मोर भी मेह आओ। मेह आओ ऐसे कूक रहे हैं। अयोध्या धाम में कौशल्या कहती हैं कि राम लक्ष्मण और सीता सब भीज रहे होंगे। मेरा मन समझता नहीं है। अरी तुमने बैरिन बनकर, मेरे बालक बीहड़ में भिजवा दिये हैं॥4॥

सावन में रिमझिम-रिमझिम मेह बरस रहा है। (कोई बताओ) कि कौशल्या माता (आखिर) कैसे धीरज रखे? छोटी-छोटी बूँदों के रूप में (आकाश और नेत्र दोनों से) जल बरसता है। उस आकाश के जल से (और हृदय में माँ को याद करके, अन्दर हृदय में झर रहे आँसुओं से भी) श्री रघुवीर प्रभु भीज रहे होंगे। झम-झम की आवाज करते हुए झड़ लग रहे हैं। (अरे वाहरी) कैकई तूने (जाने कब का बैर निकालकर) मेरे बालक बन भिजवा दिये हैं॥5॥

भादों में अपरम्पार अंबु बरस रहा है। सारा संसार (चुपचाप) अपने घर में बैठा है। भँवरे गूँज रहे हैं, कोयल कूज रही हैं और काले काले सर्प (बिलों के भीतर की गर्मी से अकुलाकर) बाहर (ठण्डी हवा में) घूम रहे हैं। राम और लक्ष्मण सीता जी के (आगे पीछे) साथ हैं। रात्रि अंधेरी है और तुमने मेरे बच्चे, (न जाने किस कारण से) बैरिन बनकर गहन वन में भिजवा दिये हैं।

क्वार का महीना लग गया सखी। (कनागत आ गये) संसार के लोग धरम (पुण्य/श्राद्ध) करते हैं। जो घर पर लक्ष्मण, पुत्रवधू सीता और राम होते तो मैं भी ब्राह्मण-भोज कराकर (उनके हाथों) दान देती। दान भी मोती के थाल भर-भरकर पर बैरिन तुमने तो मेरे बालक, विपिन में भिजवा (ही) दिए ॥7॥

हे सखी! **कार्तिक** मास लग गया। (जागती हूँ सुबह तो) जागते ही हृदय में दुःख की फाँस सी चुभती है। (दीपावली पर) संसार की नारियाँ घर-घर में दीप-दान कर रही हैं पर (मेरे मन की और सच की भौतिक) अयोध्या में तो गहरा अँधेरा है। यह कैकेई ने क्या किया रे! अरी भली मानस! बैरिन तुमने तो मेरे बालक ही जंगल भिजवा दिये ॥8॥

अगहन मास है सखी! मैं श्रृँगार करती, सजती सँवरती। सोने के तारों के वस्त्र सिलवाती। (ओ हो) (श्रीराम लक्ष्मण का) पटका, पीले वस्त्र, सुन्दर ढंग से पहनना और सिर पर जरी की रेशमी पाग बंधाना। गले में मालाएँ गेरे हुए मेरे बच्चों को, बैरिन! दुश्मन! तुमने बीहड़ वनों में (कि जहाँ राक्षस भी रहते हैं) भिजवा दिया ॥9॥

पौष भी सखी दुःख देने को ही लगा है जिसकी रात तो मानों तलवार की धार हो गयी हैं डाब के आसन पर राम कैसे सोयेंगे? (पलभर के लिए) विश्राम भी, वन में कैसे करेंगे? अरी कैकई! मुझ जन्म-जली के बालक तूने (क्यों) भिजवा दिये वन में। ॥10॥

माह के महीने में बसंत ऋतु फूल रही है। मैं भगवान राम के बिना कैसे जिऊँ। मेरी अयोध्या के सिर-मुकुट। भरतजी खड़े खड़े चँवर ढुलाते थे। जब धरती से यह बसंत चला जाय तभी धीरज हो (क्योंकि) बैरिन! तुमने मेरे बच्चे तो (आखिर) जंगल भिजवा दिये हैं ॥11॥

फागुन में सभी भाई बान्धवों ने रंग घोल रखा है। चोबा, चन्दन, इत्र आदि सुगन्ध (तैयार करती) हैं। भरतजी खड़े हैं॥ (किसी ने सौन मनाने के लिए) अबीर घोलकर रखा है किंतु बिना रघुकुल तिलक रघुवीर के किस पर छिड़कें? अरे मैं कैसे धीर धरूँ,

कैसे संतोष करूँ? बैरिन! तुमने मेरे बच्चे वन में भेज दिये ॥12॥

लौंद के महीने में जो (यह) बारहमासी (लोकगीत) गायेगा वह वैकुण्ठ जैसा लोक पायेगा और वहीं निवास करेगा। भवानी को तो अयोध्या ही धाम है जहाँ राम लक्ष्मण सीता वन से लौट आये हैं। (उनके मन में कोई गिला-शिकवा शिकायत या परेखा नहीं है। वे तो कैकेई के चरन में गिरकर फिर मिले हैं। (चौदह वर्ष के बाद मिलने का अपार सुख है। अब तुझसे कैसे कहूँ कि) बैरिन तुमने मेरे बच्चों को वन में भिजवा दिया था? ॥13॥

पुत्र वियोग में दुःख से भरी माँ कौशल्या के हृदय के भावों का वर्णन करती हुई यह बारहमासी भी विरह भाव वाली हो गई है।

कृष्ण की बारहमासी

*प्रथम महीना **आषाढ़** लाग्यौ, वर्षा ऋतु आई।*
प्रीतम हमारे श्याम सलौने पाती भिजवाई॥
कहौ वे कैसे नहिं आये?
ऐसे चतुर सुजान श्याम चेरी नें बिरमाये॥
डाल गल जादू की फाँसी।
श्री राधा गोपी त्याग करी घरवारी कुब्जा सी॥1॥

***सावन** में मन भावन, हम यों दामिन सी लागी।*
जब तो दिन-दिन प्रीत बढ़ाई, अब काहे त्यागी
सुनौ तुम उधौ मेरी सों।
लाज शरम कित गई, प्रीत जब कीन्हीं चैरी सों?
यही मोय आवत है हाँसी। श्री राधा गोपी.....॥2॥

***भादौं** रैन अँधेरी, बोली प्रीतम की प्यारी।*
अन्न न भावै, नींद न आवै, शरद गरम न्यारी
मिटावै संकट धौ को ऊधौ?
ऐसे कुटिल, कुजात; श्याम कों जानत हो सूधौ?
भार गयौ विरहा की गाँसी। श्री राधा गोपी....॥3॥

*लागत **क्वार** कनागत आये, सब कोई धरम करे।*
हम तो धरम करिंगी जब ही, प्रीतम नजर परै॥
मिलावै है कोई ऐसौ?
ले अक्रूर गयौ मथुरा को, कर दियौ जी कैसौ??
बुद्धि वा की अब कौने नासी? श्री राधा गोपी.....॥4॥

***कार्तिक** किये अधीर कृष्ण नें, सब के मन जानी॥*
आखिर जात अहीर कृष्ण नें कुबजा सनमानी
कंस की आखिर है चेरी।
याही ते दिन रैन आँख मेरी फरकत है डेरी॥
लगी मेरे जी कौ चौरासी। श्री राधा गोपी.....॥5॥

***अगहन** में घन चमकन लागी धड़कति है छाती।*
ऊधौ हाथ संदेसौ भेजौ, बाँचोरी पाती॥
लिखौ कछु तुम हू बालम कौं।
जो नायँ आऔ बेगि, ज़िअत नहिं पाओगे हमकों॥
हमारे जिय के सुख रासी। श्री राधा गोपी.....॥6॥

***पौष** मास गए मेरे प्रीतम प्रानन से प्यारे।*
भेजन लागे दूत, किए हम नैनन से न्यारे॥
हमें यह मदन सतावत है।
जिसके कारन देत संदेशौ, ऊंधौ लावत है॥
खबर मेरी लीजो अविनासी। श्री राधा गोपी.....॥7॥

***माघ** मास में डाह, पिया तुम*
छोड़ौ हम जानी। सोवत से उठ करों
बात, सब ऊधौ समझानी। ज्ञान की बातें
दरसाई। कृष्णाहि हेहु मिलाय, जाँय सब गोपी
मुरझाई। झूँठ सब ही के मन ग्यासी। श्री राधा गोपी.....॥8॥

***फागुन** फीकौ लगै रैन-दिन भोग रही विध में।*
पाती बाँचत खैम सखी एक यों बोली रिस में। लगे अब शाह,
करन चोरी। हमरे जीवन, खेल रहे हैं बांदी सँग होरी॥
खबर मेरी लीजो कैलाशी। श्री राधा गोपी. .....॥9॥

***चैत** चिंता जरैं बिरहनी गिरती कुआ में।*
कहियौ मदन गोपाल संग कुबजा कूँ ले आमें॥
कछू इन बातन कौ डरना।
हम गोपी दर्शन की प्यासी अर्ज यही करना॥
खबर मेरी लीजो ब्रजवासी। श्री राधा गोपी. ....॥10॥

*लागत ही **वैशाख** साख सबही के घर आई।*
ऊधौजी नें जाय कृष्ण को ऐसें समझाई॥
पैज तुम नाहक ये रोपी।
हाड़-माँस गर गए बावरी है गइ सब गोपी।
लेयँगी करवट हूँ कासी। श्री राधा गोपी. ...॥11॥

***जेठ** मास में मिलें कृष्ण जब गोपिन राधा सों।*
ब्रजवासिन आनंदभए, घूटे भवबाधा सौं। कृष्ण की यह बारहमासी।
पढ़े सुनै बैकुण्ठ सिधावै छूटै जमफाँसी॥
साँच यह मेरे मन भ्यासी। श्री राधा गोपी. ...॥12॥

आषाढ़ का पहला महीना लग गया है। वर्षा की ऋतु आ गई है। हमारे प्राण प्यारे, सबसे अधिक प्यारे, सुन्दर श्याम ने पत्र (से समाचार) भिजवाया है (फिर सखी ने ऊधौ से यह पूछा कि) यह तो बताओ कि स्वयं क्यों नहीं आये? (क्या) ऐसे बुद्धिमान, ज्ञानवान

श्याम सुन्दर को (भी) दासी ने बहका दिया? उसने कृष्ण के गले में ऐसा जादू का फंदा डाल दिया कि (कृष्ण) ने श्री राधा (नाम वाली) गोपी (को भी) छोड़कर, कुब्जा जैसी (कुबड़ी) नार को घरवाली (पत्नी) बना लिया है। ॥1॥

सावन के महीने में जो कि कैसा मन को अच्छा लगने वाला होता है किंतु हम पर तो (तुम्हारी पाती पढ़कर) बिजली सी गिरी है। (यह क्या बात हुई?) जब तो कृष्ण ने हमसे नित-नई और अधिक प्रीत बढ़ाई थी। हमें अब क्यों छोड़ दिया, उद्धव? उद्धव जी! तुम मेरी सुनो। तुम्हें मेरी सौगन्ध है अच्छा तुम ही बताओ कि जब उन्होंने दासी से प्रेम भाव बढ़ाया तब उनकी लज्जा-संकोच यह सब किधर चले गये? मुझे तो यही सोच-सोचकर हँसी आती है कि राधा जैसी (सुन्दर) गोपी को छोड़कर (और) उन्होंने कुबड़ी को अपनी पत्नी बना लिया। ॥2॥

भाद्रपद का महीना आ गया। अँधेरी रात। ओहो! प्रियतम कृष्ण की बोली तो कितनी प्यारी थी? हमें तो न भोजन भाता है, न नींद आती है, कभी चिन्ता से शरीर ठण्डा हो जाता है तो कभी एकदम बहराता हुआ गर्म हो जाता है। उद्धव जी! (बताओ) हमारी कठिनाई को कौन दूर करे? ऐसे कपटी चालाक और निम्न जाति (अहीर) में जन्मे श्याम को (तुम सचमुच ही) सीधा समझते हो? (अरे) वह तो हमें तड़फने और याद करने की, विरह करने की गाँसी की सजा दे गया है। (उहँ) श्री राधा (जैसी प्यारी) गोपी को भी छोड़कर, उसने कुबड़ी कुब्जा को पत्नी बना लिया है॥3॥

क्वार में कनागत (श्राद्ध पक्ष) लगते हैं। हरेक कोई धर्मदान करता है। (पर) हम तो तब ही धर्म-दान करेंगी कि जब (एक बार, प्रियतम श्री श्याम सुन्दर) के दरस हो जायें। उद्धव जी! ऐसा कौन है जो हमको (उनसे) मिला दे? है कोई ऐसा जो हमें उनसे मिला दे? (अब देखो) अक्रूर जी उन्हें मथुरा ही ले गये। उन्होंने यह कैसा (बुरा) काम किया, (कुछ कहा नहीं जाता) अब (बताओ कि) कन्हैया की बुद्धि को किसने नष्ट कर दिया है कि जो उन्होंने कुब्जा कुबरिया को अपनी बैरबानी बना लिया है? और राधा (जैसी मनमोहक) गोपी को छोड़ दिया है॥4॥

कार्तिक आ गया। अब तो कृष्ण बिन धीरज नहीं रहता। कृष्ण! तो सबके मन की हालत जानते हैं। (पर एक बात है) वह अहीर (जैसी निम्न) जाति का है ना तभी उसने कुब्जा को इतना सम्मान दिया है। मेरी खैरी अर्थात् बायीं आँख इसी से दिन-रात फड़क रही है कि आखिर वह कुब्जा है तो (दुष्ट) कंस की दासी ही ना? (अरे) मेरे मन को तो चौरासी (करोड़ योनियों में जन्म लेने मरने, बेकार दुःख पाने) की चिन्ता लगी है और (देखो, श्याम ने) राधा (जैसी रूप सुन्दरी) को तजकर कुब्जा से ब्याह रचाया है ॥5॥

अगहन में बादल चमक रहे हैं तो (अनहोनी की आशंका से) छाती धड़कने लगी है। (कृष्ण ने) ऊधौ के हाथों समाचार भेजा है। आओ, इसे पढ़ें। अब तुम भी भरतार करतार कृष्ण को कुछ लिख दो कि हे हमारे सुख के खजाने! प्रिय श्याम सुंदर! यदि आप शीघ्र ही नहीं आये तो (बाद में) हमें जीवित नहीं देख पाओगे। देखो तौ, राधाप्यारी को छोड़कर, कृष्ण ने कुब्जा को घरवाली बनाया है ॥6॥

पौष मास आ गया। प्राणन प्यारे, सबसे अधिक प्यारे कृष्ण गये हुए हैं। (पिछले पौष में तो कैसे प्राण प्यारे, प्रियतम थे और इस बार तो) हमको नेत्रों से दूर कर दिया है। संदेश वाहक (दूत) भेजने लगे हैं। (वे क्या नहीं जानते कि) हमें यह काम (इच्छा) सताती है कि जिसके कारण व संदेशा भेजते हैं, और कि जिसको उद्धव जी लाते हैं। हे अविनाशी कृष्ण! मेरी सुध लेना। (आपने भी क्या) राधा ग्वालिनी, मानिनी को छोड़कर कुबड़ी जैसी को घर मालकिन बनाया है? ॥7॥

माघ महीने में सौतिया जलन। प्रियतम तुम (हमारी चिन्ता) छोड़ो। हम अपने आप भुगतेंगी। तब, ऊधौ ने समझाया कि तुम भी सोते-सोते (उचककर) उठकर बड़बड़ाते हो। उद्धव ने ज्ञान की बात भी बतायी है। हमें तो (कोई) कृष्ण से मिला दो। हम सब गोपियाँ मुरझाई जा रही हैं। सबके मन को विश्वास हो गया है कि (यह उद्धव का ज्ञान) झूठा है। (समझ में नहीं आता कि आपने ऐसा क्यों किया कि) राधा जैसी वृषभान कुँवरि को छोड़कर, आपने कुब्जा को अपनी भामिनी बना लिया ॥8॥

फागुन भी फीका-फीका लग रहा है। जो भाग्य में है, रात-दिन भोग रही हूँ। ऐसे, चिट्ठी बांचकर एक सखी गुस्से में, आगे यह बोली कि लो अब राजा भी चोरी करने लग गये। हमारे जीवन प्राण होकर, दासी से होली खेल रहे हैं। (हे भवबंधन काटने वाले) कैलाशवासी भोलेनाथ! मेरा भी ध्यान रखना। (मुझे भी जल्दी उठालो) हुँह! राधा जैसी प्राण प्यारी सखी को छोड़कर, कुब्जा को प्राण प्यारी बना लिया॥9॥

चैत आ गया। हम कृष्ण की याद में चिन्ता से जली जा रही हैं। हम विरहणी कुआ में गिरने जाती हैं (उधौ जी!) कह देना कि मदनगोपाल कृष्ण, कुब्जा को भी साथ ले आवें। हमें कोई इन बातों का डर नहीं है। (ऊधौ जी!) हम गोपियाँ तो उनके दर्शन की ही

प्यासी हैं, यह प्रार्थना उन्हें सुनाना कि हे ब्रजबिहारी! हमारी भी खोज-खबर लेना। वाह प्रभु! राधा जी को छोड़कर कुब्जा को खूब ब्याहा ॥10॥

वैशाख मास लगा तो सभी गोपियों को थोड़ा संतोष हुआ कि उद्धवजी वापिस कृष्ण के पास गये हैं। उद्धव ने जाकर कृष्ण को यह समझाया कि आपने तो बिना ही बात पैज (जीत-हार की शर्त) कर ली है। उन गोपियाँ के तो माँस ही नहीं हाड़ तक भी गल गय हैं और वे सब तो बावली हो रही हैं। किसी दिन वो काशी बनारस जाकर, गंगाजी में डूब मरेंगी। (आपने भी क्या) राधाजी जैसी 'ग्वालिन-भोली' को छोड़कर, कुब्जा को पत्नी बना लिया है ॥11॥

जेठ में जब कृष्णजी राधा और सखियों से मिले तो ब्रजवासियों के घर-घर में आनंद हो गये। वे तो संसार के माया चक्र से ही छूट गये। कृष्ण संबंधी इस बारह मासी को जो पढ़ेगा सुनेगा वही वैकुण्ठधाम जायेगा, उसके यमराज के कष्ट छूट जायेंगे-ऐसा मेरे मन को सच्चा विश्वास हो गया है ॥12॥

बैनी माधौ की बारहमासी

कार्तिक *किलोर करें सब सखियाँ, राधा विचार करें मन में रे।*
भाधौ पिया को आन मिलाऔ, नहिं अब प्राण तजौं छिन में रे॥
हमको छोड़ चलै बैनी माधौ, राधा विचार करै मन में रे॥1॥

अगहन *गेंद सजाय सागरे, जाय पहुँचे तट यमुना के रे।*
मारी टोल गेंद गई दह में, काली नाग नाथौ छिन में रे॥
हमको छोड़. ...॥2॥

पौष *मास हमसे छल कीनों, भाग चले पिय मधुवन को रे।*
तुम नँदलाल जनम के कपटी, हमसे कपट किया मन में रे॥
हमको छोड़. ...॥3॥

माघ *मास पिया जाड़ो परत है, नींद न आवै मेरे नैनन में रे।*
हमको वैरागिन कीनी हरि नें, घर-घर अलख जगामन को रे॥
हमको छोड़. ...॥4॥

फागुन *रंग बनाय सामरे, जाय खेले संग कुबजा केरे।*
फेंट गुलाल, हाथ पिचकारी, बोर दई सारी घूँघट में रे॥
हमको छोड़. ...॥5॥

चैत *मास फूले बन टेसू, ऊधौ आए समझावन को रे।*
माला गले हाथ मृगछाला, अंग भभूत मली तन में रे॥
हमको छोड़. ...॥6॥

मास ***वैशाख*** *वयस मोरी बारी,*
आप न आये सैयाँ मधुवन में रे।
ऋतु ग्रीष्म और बिरहा सतावै, हूक उठी मेरे मन में रे॥
हमको छोड़. ...॥7॥

जेठ *महीना ज्वाला तन जारे, तुम बिन चैन नहीं हमको रे।*
एकतो अकेली दूजे बिरहा सतावै,
आय गई ऋतु वर्षा हमको रे॥ हमको छोड़. ...॥8॥

लागौ ***आषाढ़*** *घुमड़ आये बदरा,*
बिजली चमकै मोरे अँगना में रे।
चौंक-चौंक चहुँ ओर निहारूँ, जैसे मीन फिरै थोरे जल में रे॥
हमको छोड़. ...॥9॥

सावन *स्वामी हम सौं छल कीनौं,*
प्रीति करी जाय कुबजा सै रे।
कहौ नंदलाल प्राण कैसे राखूँ, आये श्याम वृन्दावन में रे॥
हमको छोड़ ...॥10॥

भादों *भवन नींद नहिं आवै, मोरा बोलै यहाँ मधुवन में रे।*
कोयल है कै बन-बन डोलूँ, सूखे ताल वृन्दावन के रे॥
हमको छोड़. ...॥11॥

क्वार *मास भये निर्मल चन्दा, गोपी सोवै अपने आँगन में रे।*
सूरदास प्रभु आन मिले हरि, खुशी गई राधा मन में रे॥
हमको छोड़ चले बैनी माधौ, राधा विचार करै मन में रे॥ ।12॥

कार्तिक के महीने में सारी सखियाँ किलोल कर रही हैं, खेलती हैं, किंतु राधाजी अपने मन में यों विचार करती हैं कि या तो माधव पिया को बुलाकर मुझसे मिलवाओ नहीं तो अब क्षण भर में प्राण छोड़ दूँगी। राधाजी मन में सोचती हैं कि बैनी माधव तो हमको छोड़ चले ॥1॥

अगहन में साँवलिया ने गेंद बल्ला सजाये और जमुना जी के किनारे जा पहुँचे खेलने। बल्ले से गेंद में टोल मारी तो गेंद काली दह में चली गई तो पलभर में कालिय नाग को नाथ डाला। किंतु ऐसे बैनी माधव हमको तो छोड़ चले, राधिका ऐसे विचार करती हैं।

पौष मास में नंदलाल ने हमसे छल किया था। वे मधुवन (याने मथुरा) को चल भागे थे। अरे नंदलाल, तुम तो जनम से ही कपटी हो। तुमने हमसे मन में दुराव-छिपाव ही किया। राधा सोचती

हैं कि बैनी माधव हमको छोड़ चले॥3॥

माघ माह में ठंड सताती है। मेरी आँखों में तुम्हारी याद के कारण) नींद भी नहीं आती। मुझको तो घर-घर जाकर अलख जगाने के लिए प्रभु ने वैरागिन कर दिया है। राधा सोचती हैं कि बैनी माधव (क्यों) छोड़ गये॥4॥

फागुन मास में साँवरे ने रंग घोल लिये और कुब्जा से जाकर होली खेली। फेंट कि कमर में दुपट्टे से बाँध रखी है गुलाल भरी हाथ में पिचकारी। वह घूँघट में थी फिर भी सारी भिगो दी। राधा (दुःख से) सोचती हैं कि कृष्ण क्यों छोड़ गये ॥5॥

चैत्र मास में जंगल में केसूला याने पलाश के फूल, फूले हैं और (देखो) उद्धव जी हमें समझाने आये हैं। (क्या वेश बनाया है) माला गले में, हाथ में हिरण की चर्म का आसन, शरीर पर राख मली है। बैनी माधव हमें क्यों छोड़ गये? (तो क्या इसीलिए छोड़ गये) राधा जी विचार करती हैं ॥6॥

वैशाख का महीना आ गया। मेरी नयी (युवा) अवस्था है। मेरे पति, स्वयं मेरे मन मधुवन में (सुख करने को) नहीं आये। गर्मी का मौसम। विरह की अग्नि अलग से जल रही है मेरे मन में (पति से मिलने को) हूक सी उठती है। (किंतु उन्हें क्या हुआ जो) बैनी माधव मुझे छोड़कर चले गये ॥7॥

जेठ का महीना। उसकी गर्मी शरीर को जला रही है। हे प्यारे! हमें तुम्हारे बिना चैन नहीं आता। एक तो अकेली उस पर आपका विरह, और लो अब तो वर्षा ऋतु आ गई। प्राण प्यारे! हमको (क्यों) छोड़कर चले गये ॥8॥

अषाढ़ आया कि बादल भी घुमड़-घुमड़ कर आने लगे। मेरे आँगन में बिजली चमकती है। मैं चौंक-चौंककर, डरते-डरते चारों ओर देखती हूँ (ऐसी तड़फती हूँ कि) जैसे मछली थोड़े पानी में छटपटाती हैं। ओहो प्रभु श्री बैनी माधव जी! आप मुझे क्यों छोड़कर चले गये? यही विचार आता है ॥9॥

सावन में (भी) करतार ने हम से धोखा किया। कुब्जा से हेत किया। हे नंदलाल! कह दो। अब मैं प्राणों को कैसे रखूँ? प्राणरूपी श्याम, कंठरूपी वृंदावन में (बाहर निकलने को) आ गये हैं। राधिका रानी विचार करती हैं कि (कदाचित् इसीलिए) हमको बैनी माधव छोड़कर चले गये ॥10॥

भादों में (वर्षा गरमी की उमस से) भवन के भीतर नींद नहीं आती। मोर मधुवन में बोल रहे हैं। मैं कोयल बनकर वन-वन में (कृष्ण को ढूँढ़ती) डोल रही हूँ किंतु ब्रज वृन्दावन के सारे तालाब सूख गये। मैं अब कहाँ जाकर बोलूँ? कहाँ सुख पाऊँ? वाह बैनी माधव! हमको खूब छोड़कर गये ॥11॥

क्वार के महीने में चन्द्रमा स्वच्छ पवित्र हो गये। शरद् पूर्णिमा आ गई। सब गोपियाँ अपने चौक आँगन में सोती हैं। सूरदास जी कहते हैं कि प्रभु, वापिस आकर मिल गये और राधा बहुत प्रसन्न हुई हैं। राधा विचार करती हैं कि क्या यही सुख देने के लिए कृष्ण हमें छोड़कर चले गये थे? ।12॥

डॉ. रघुनाथ सिंह 'अकेला' की लिखी हुई राजा सत्यवादी हरिश्चंद्र की, सती अनुसुइया की, शेर का भोजन अर्थात् मोरध्वज की बाहरमासी भी सुन्दर और मनोरंजक मिलती हैं किंतु इनके प्रत्येक अन्तरे (अंश) का प्रथम शब्द ही क्रमशः चैत्र वैशाख आदि महीने का नाम होने से ही इन्हें बारहमासी कहा जा सकता है। अन्यथा तो प्रत्येक मास के अंश में मास सम्बन्धी विवरण न होने से इन्हें बारहमासी की श्रेणी में नहीं रखना ही उचित रहेगा। हाथरस निवासी कवि कुलभूषण पं. श्री छीतरमल ज्योतिषी की बारहमासी मछला विलाप अर्थात् इन्दलहरण (दो भागों में) भी उक्त प्रकार की ही मिलती है। जिला अलीगढ़ के मुरसान कस्बे के ग्राम नगला अनी के ज्वालासिंह 'आत्मानंद' की-'राजा कारक सती साँवलदे की बारहमासी' भी ऐसी ही है तो नवलदे की बारहमासी भी। प्रयाग दत्त शर्मा 'विचित्र' की 'भैन भैया की बारहमासी'-बारहमासी धुन पर एक सर्रा लिखी गई बारहमासी है कि जिसमें बहिन द्वारा गहने के लोभ में भाई की हत्या का कथानक है।

उक्त में से कुछ ऐतिहासिक व धार्मिक बारहमासियों का कथानक, मूल ग्रन्थों के कथानकों से कहीं-कहीं मिलता जुलता नहीं भी है। लगता है कि या तो लेखकों द्वारा मूल ग्रन्थों का विधिवत् पूर्णतः अध्ययन न किये जाने से अथवा फिर लोकमंगल या लोकभावना के विचार से-इनके मूल कथानकों में कुछ अन्तर होगा। वैसे मूलकथा के किसी अंश के भूल जाने या पता न होने से भी ऐसा संभव है।

फूहरिया की बारहमासी :

चैत *चिकल्लस सुनौ, राँधि रही फूहरिया दरिया।*
बैठी फसली मार, जराय लई चूल्हे में फरिया॥
पटक लियौ ऊपरसे पानी।
ठोकर से फैल्यौ चून, भई सब चौका में सानी॥

समेटौ झटपट थारी में। दरिया में आलन दियौ,
मार दियौ चमचा पारी में॥
फोरि दई हड़िया की परिया। कहा कहूँ 'रघुनाथ',
नारि मेरेघर की फूहरिया ॥1॥

लग्यौ मास ***वैशाख****, बलम से फूहरि बतरानी।*
हौ तुम चतुर सुजान, करौ अब मेरी मन मानी॥
बड़ौ ललचाय रह्यौ जीया। मोय जम्फर देउ सिलाय,
खुशी है जाऊँ पहरि पिया॥
डारिलह गल में गल बइयाँ। भौंहन कूँ मटकाय,
कहै मोसें हँस-हँस कै सैयाँ।
द्वार की दै आई साँकरिया। कहा कहूँ 'रघुनाथ'. ...॥2॥

जेठ *घाम घहराय, झाँक कछु चलन लगी थोरी।*
गई गर्मी में घबराय, देह में हो गई भरहोरी॥
चुनमुनी चलते ही घबरानी। लोटत-पीटत फिरै,
पोत देही में मुल्तानी॥
पीठ रगड़ी है खटिया में।
है गई लहू-लुहान आग दै तापी सिग टटिया॥
फूँक दई सगरी बाखरिया। कहा कहूँ 'रघुनाथ'. ...॥3॥

महीना लग्यौ ***अषाढ़****, कहै फूहरिया बालम ते।*
मोय ऊँची ऐड़ी जूती लाय देउ, कहूँ पिया तुम ते॥
छींट कौ बनवा देउ साया। पहन फिरै कटवर की साड़ी,
चमकै सब काया॥
करै गैलउअन ते ठट्ठा।
जूड़े में लटकाय फिरै ये कंघा और गट्टा॥
बंधी चुटिया में घंटरिया। कहा कहूँ 'रघुनाथ' ...॥4॥

सावन *महीना लग्यौ तीज जब हरियाली आई।*
फूली न अंग समाय, बड़ी ही मन में हरवाई॥
करे जानै पूरी और पूआ।
ईंधन गीलौ देखि जराये हर और जूआ॥
जराय दई आधी पनिहारी।
गीत मल्हार सुनावै दे-दे बालम कूँ गारी॥
फोरि दई काँसे की थरिया। कहा कहूँ 'रघुनाथ'. ...॥5॥

भादों *में झर लग्यौ, मेह ने झड़ी लगाई है।*
गोबर की भारी हेल, मूड़ पै धर के लाई है॥
निकरि कै चली गिरारे में। जाय पड़ी सो चित्त,
पाम जाकौं इरझ्यौ नारे में।
कीच में लिथड़ी साड़ी है। पारौसिन से कहै,
नजर मोय लगी तिहारी है॥
भेष लखि दीखै कंजरिया। कहाँ कहूँ 'रघुनाथ'. ...॥6॥

क्वार *महीना लागौ, कहै मैं श्राद्ध मनाऊँगी।*
सोलह हू तिथि नौत, बिप्र हर रोज जिमाउँगी॥
करी जाने सकल तियारी है। खीर-खाँड़ के भोजन परसे,
भरकर थारी है॥
बिप्र नायँ जब तक आयौ है।
चुपकैं ते फूहरि नैं पहले ही भोग लगायौ है॥
दूध पी लीनौ भरि घरिया। कहा कहूँ 'रघुनाथ'. ...॥7॥

कार्तिक *महीना लगौ, कि आई 'करवा-चौथ' पड़ी।*
फूहरि ने व्रतकियौ, लगी जाके दिल में चाह बड़ी॥
खाँड के करुए मँगवाए। अधपर में व्रत तोड़,
खुशी से फूहरि ने खाये॥
पड़ौसिन देखि करै ठट्ठा।
घर में कुत्ता फिरे द्वार जाकौ खुलि रहौ चौपट्टा॥
बिगारी श्वान नें गागरिया। कहा कहूँ 'रघुनाथ,' नारि. ...॥8॥

अगहन *जाड़ौ परै, भरत सिसकारि भगी डोलै।*
काम-काज कछू करै न सीधी म्हौड़े ते बोले॥
लगाई रही दगरे में हेला। जाऊँ देखिवे,
दाऊजी कौ अब कैं मैं मेला॥
बात कछु नाऐं मामूली। मेला देखन जाय,
डोल रई इत-उत कूँ फूली॥
कान लटकाई झूमरिया। कहा कहूँ 'रघुनाथ.'...॥9॥

आयौ महीना ***पूष****, शीत जब परन लगी भारी।*
पानी देखि बिदक जाय, एकदम फूहरिया नारी॥
सिसकरी जाड़े में भरती। जाकी जमी देह पै मैल,
नहीं स्नान कभी करती॥
बदन जाकौ भयौ सभी गंदा।
आँखन दीढ़ चुचाय, लगाई ले काजर औ बिन्दा॥
माँग में भरि रही ईगुरिया।
कहा कहूँ, 'रघुनाथ', नारि मेरे घर में फूहरिया॥10॥

माह *महीना लग्यौ, पड़त है जाड़े कौ चिल्ला।*
पाल लियौ फूहरि ने, लाइ के चितक बरौ पिल्ला॥
भयौ नायँ कोइ बेटा-बेटी। साड़ी कौ पल्लौ फाड़ि,
बाँधि दई पिल्ला कै पैरी॥

काँच में पिल्ला लिपट रह्यौ।
कपड़ा लिए बिगार, गोद में पिल्ला चिपटि रह्यौ॥
आइ रही बाकूँ नींदरिया। कहा कहूँ रघुनाथ. ...॥11॥

***फागुन** महीना लग्यौ, आय गई मस्तानी होरी।*
दगरे में सरपट्टा डोलै, खेलै बरजोरी॥
गाढ़ि रही होरी को झंडा। मोरी कौ फैंके कीच,
मार रई रडुँअन में डंडा॥
जुड़ रहे देखन कूँ कुक्का। तारी दै-दै करें मसखरी,
सबके सब लुक्का॥
पोत रई म्हौड़ै पै खड़िया। कहा कहूँ 'रघुनाथ'. ...॥12॥

*लग्यौ **लौंद** कौ मास, करी फूहरि नें मनमानी।*
लै के चपटा खरि कौ चलदइ, करिवै कूँ सानी॥
बैल ने सींग दियौ सिर में। गयौ है चपटा फूटि,
बिगरि गई फूहरिया खर में।
दशा कछु कही नहीं जाती।
देखि 'अकेला' फूहरि कूँ,मेरी पजरै है छाती॥
उड़ावै रात-दिना हरिया।
केहा कहूँ 'रघुनाथ' नारि मेरी घर में फूहरिया॥13॥

(जब खाली बैठे कोई काम न हो तो फिर) चकल्लस सुनो। एक बार चैत महीने में एक सीधी भोली नासमझ यानि बेवकूफ अर्थात फूहड़ औरत (गेहूँ के मोटे आटे का) दलिया राँध रही थी। अब आलथी-पालथी मारकर बैठ गई और (इस कारण) चूल्हें में ओढ़नी जला ली। (बुझाने को) उस पर पानी डाल दिया तब (पानी में पैर फिसल गया और) ठोकर से आटा फैल गया कि चौका में (भैंस की) सानी जैसी हो गई। (खैर) फटाफट थाली में समेट भी लिया (किंतु जल्दी-जल्दी में) जब दलिया में (कच्चे हरे चने को काटकर) आलन डाला और हड़िया को ढ़कने की (कुम्हार द्वारा बनायी गई) पारी में चमचा मार दिया तो वह टूट गई। ठा. रघुनाथ सिंह 'अकेला' क्या कहै, कि मेरे घर में बेवकूफ औरत है ॥1॥

वैशाख मास में वह फूहरिया अपने पति से ऐसे बोली कि आप तो बहुत चतुर और ज्ञानवान हो। मेरे मन की इच्छा पूरी कर दो। 'मेरा बहुत ही मन कर रहा है। पति देव! मुझे ब्लाउज सिलवा दो कि उसे पहनकर मैं प्रसन्न हो जाऊँ'। उसने पति के गले में दोनों बाहें लपेट लीं और भृकुटियों से इशारे करते हुए (अपने पति) मुझसे - 'सैयाँ' जी कहकर लाड़ दिखाने लगी। और दरवाजे की (भीतर की) साँकल लगा आयी। कहाँ तक और कैसे कहूँ हे रघुनाथ जी कि मेरे घर में नालायक नारी है ॥2॥

जेठ में गर्मी गहरा गई है, कुछ लू भी चलने लगी है। वह गर्मी से घबरा गई। कुछ मरोरी (इनौरी) होने लगी है। चरमराहट, जलन मचते ही घबराने लगती है। शरीर में मुलतानी मिट्टी लपेटकर, चारों ओर (पौरी में, कोठे में, हवा की ठंडक की खोज में) लेटती बैठती फिरती है। (खरैरी (बिना बिस्तर वाली) मूँज की) खटिया से रगड़कर, लहू-लुहान हो गई है। (जवासे के काँटों से बनाई) टटिया में आग लगाकर, पीठ तपने लगी तो बाखर (तीन चार घरों का एक छोटा सा घिरा हुआ मोहल्ला) में आग लग गई। सारी बाखर जल गई। रघुनाथ कहाँ तक कहै कि मेरी पत्नी फूहड़ है?

आषाढ़ महीना लगा तो फूहरिया, पति (के सामने नयी माँग रखते हुए उस) से बोली कि 'पियाजी! मुझे ऊँची ऐड़ी की चप्पलें ला दो (और देखो) छींट का एक पेटीकोट भी बनवा दो।' (अब मैंने बनवा दिये तो) कटवर की (पारदर्शी) साड़ी पहने (मौहल्ले में ही नहीं तो दूर-दूर तक) डोलने लगी कि जिससे सारे शरीर के अंग अंग के दर्शन होने लगे। रास्तागीरों से मजाक करती है, हँसी-ठट्ठा करती है और जूड़े में कंघा और लकड़ी का गट्ठा लगाये फिरती है (कि जिससे बार-बार चोटी खोलती है और बार-बार फिर से जूड़ा बनाती है) चुटिया में छोटी-छोटी घंटी बाँध ली है। (अब तुम्हीं बताओ) रघुनाथ (कैसे न) कहे कि मेरे घर की बैयरबानी बड़ी ही फूहरिया है ॥4॥

श्रावण का महीना लगा और जब हरियाली (अमावस और) तीज आई, तो यह तो अंग-अंग से फूली न समायी।, मन में बड़ी ही प्रसन्न हुई। पूड़ी-पुआ बनाये (सो तो अच्छा किया किंतु) ईंधन गीला देखकर (खेती के काम आने वाले उपकरण) हल और जुआ ही जला (कर काम ले) लिए। यहाँ तक कि आधी पनिहारी भी जला दी। और फिर अपने पति (मुझ) को ही गाली दे-देकर के मल्हार के गीत गाने लगी। (ढप की तरह बजाते बजाते, गिरा देने से) काँसे की थाली भी फोड़ दी। क्या कहूँ, रघुनाथ! (यह तेरा दुर्भाग्य है कि तेरे) घर में फूहड़ नार है ॥5॥

भादों में वर्षा लगातार ही होने लगी। (अब देखो, इन दिनों गोबर को थोपेंगे तो वह गीला हो जायेगा किंतु) बेवकूफ गोबर से भरी हुई भारी परात, सिर पर धर लाई। सकरी गली में चलने लगी, नाड़ा पैर में उलझ गया तो चारों खाने चित्त गिर पड़ी। (वो तो प्रभु कृपा कि हाथ-पैर नहीं टूटे पर) सारी साड़ी गोबर-कीच में सन गई तो पड़ौसी औरत से कहने लगी कि मुझे तो तुम्हारी नजर लग गयी है। कैसा बुरा वेश है कि कंजरिया जैसी दिखती है। (वाह भाई) रघुनाथ! तेरे घर में बेवकूफ नारी खूब आयी ॥6॥

क्वार कनागत आये तो कहने लगी कि श्राद्ध मनाऊँगी। (मना भाई) (तो बोली कि) पून्यों से अमावस तक सोलहों तिथि को रोजाना ब्राह्मण भोजन कराऊँगी। (उसकी जिद के आगे हमारी क्या चलती) उसने सारी तैयारी कर ली। थाली में खीर-खाँड (बूरा) परस कर थाली ठंडी कर ली। अब जब तक ब्राह्मण देवता आ भी नहीं पाये कि तब तक तो चुपके से फूहरिया ने स्वयं ही खा लिया। (इतना ही नहीं तो) पँसेरी मटकी भरकर दूध और पी गई (बचाया हुआ) (अब बताओ कि) रघुनाथ अपनी पत्नी को फूहड़ बताता है (तो क्या झूठ बताता है) ॥7॥

कार्तिक मास आया तो 'करवा चौथ' आई। मन में बहुत दिन से लग रहा था (कि मैं भी करवा का व्रत करूँगी) तो इसने व्रत किया। शक्कर (चीनी) के बने हुए सोलह करुए मँगवाये और फूहड़ ऐसी कि आधे समय में ही व्रत छोड़कर, प्रसन्नता से करुए खुद ही खा लिये। पड़ौसिने देखकर मजाक बनाने लगीं (किंतु इसे क्या चिन्ता?) द्वार चौपट खुला था, घर में कुत्ते जा घुसे और कुंभ कलश भी कुत्ते ने बिगाड़ दिया। (इसलिए तो) रघुनाथ सिंह 'अकेला' कहता है कि मेरे घर की मालकिन, बड़ी ही फूहड़ है ॥8॥

अगहन में ठण्ड पड़ने लगी तो सिसकारी भरती हुई, भागी भागी डोलती। न कुछ काम (का ध्यान) करती न सीधे मुँह अच्छी बात करती। कच्चे चौड़े रास्ते पर जाकर चिल्ला रही थी कि-'इस बार मैं दाऊजी का मेला देखने (छट्ट को) जाऊँगी। यह कोई छोटी बात नहीं है।' वह मेला देखने जाने की खुशी में इधर-उधर आनंदित घूम रही है। कान में झूमके पहनती है। वाह भगवान रघुनाथजी (आपने भी खूब कृपा की जो) घर में कैसी सीधी भोली पत्नी दी है ॥9॥

पौष महीने में कि जब तेज ठंड पड़ने लगी, मेरी फूहड़ नारी तो पानी को देख करके ही दूर भागने लगी। शीत के मारे सिसकारी भरने लगी और शरीर पर जमै भलै ही मैल, किंतु वह तो कभी भी नहाती नहीं। उसका शरीर तो सारा गंदा रहता, आँखों में से कीचड़ टपकता रहता किंतु आँख में काजल और सिर पर बड़ा सारा बिंदा अवश्य लगाती। माँग में सिंदूर जरूर लगाती। अरे रघुनाथ तू औरों की क्या कहे, तेरे खुद घर में ही फूहड़ नार है ॥10॥

माह महीना में, मकर संक्रान्ति से पहले घन नक्षत्र के पन्द्रह दिन और फिर मकर के पच्चीस दिन इस तरह चालीस दिवसीय 'चिल्ला' (कि जिनमें भयंकर ठंड पड़ती है) के काल में फूहरिया ने एक कई रंगों वाला एक पिल्ला पाल लिया। इसके खुद के तो कोई बेटा-बेटी हुआ नहीं। (लाड़ सारा उसी पर ऐसा) कि अपनी साड़ी (कि सुन्दर पल्ले की किनार) फाड़कर, पिल्ले की गरदन में पेटी बाँध दी। पिल्ले की गुदा से बाहर आई आँत से वह लथपथ हो रहा था तब भी गोद में पिल्ला चिपट रहा था, कपड़े बिगड़ गये थे किंतु उसे तो नींद आ रही थी। कहाँ तक कहूँ प्रभु! आपने मेरे घर भी बड़ी भली मानस भेजी ॥11॥

फागुन महीना क्या लगा, मस्तानी बनाने वाली होली आ गई। कच्चे चौड़े रास्ते पर भागी हुई डोलती और ठाठ से होली खेलती। होली का झंडा गाड़ दिया है। मोरी की कीच फैंककर मार रही थी और पुरूषों में डंडा भी मार रही थी। मस्ताने लोग देखने (खेलने) को इकट्ठे हो रहे थे और सारे शैतान लोग तो ताली बजा-बजाकर मजाक कर रहे थे। वह (रंग नहीं तो) सबके मुँह पर चिकनी खड़िया मिट्टी पोत रही थी। मैं किसी से क्या कहूँ रघुनाथ! मेरी पत्नी फूहड़ है ॥12॥

लौंद का अधिक मास तेरहवाँ लगा तो फूहड़ ने ऐसी मनमानी की कि खर का मटका ही लेकर, सानी करने चली दी। अयोग यह कि बैल ने सिर में सींग मार दिया, चपटा (मटका) फूट गया, वह खर में सन गई। कुछ हालत कही नहीं जाती। फूहड़ को देखकर लेखक 'अकेला' की छाती जलती है। रात दिन खेतों पर या नीद में भी पक्षी उड़ाती रहती है हरिया-हरिया चिल्लाती रहती है। रघुनाथ सिंह कहाँ तक कहे कि उसकी नारी बड़ी ही नासमझ है। ॥13॥

हास्य-रस की फूहरिया की बारहमासी की तरह की एक और भी बारहमासी भुण्डनिया की मिलती है। गाँव के वातावरण का सजीव चित्रण हुआ है इनमें। ठा. रधुनाथ जी ने ध्रुव की बारहमासी भी लिखी थी। माँसी के तीखे बोल पर पाँच बरस के ध्रुव जी के वन जाने और लौटकर आने को भी बारह महीनों में ही संजोया गया है और वातावरण की वे ही सामान्य बातें प्रस्तुत की हैं जो कि पिछली अन्य में आ चुकी हैं। हास्य के लिए प्रस्तुत है :—

भुण्डनियाँ की बारहमासी

(यानी बेअकूल औरत का किस्सा)

दोहा - *दीन बन्धु करतार तुम, रखना मेरी लाज।*
भुण्डनियाँ की लिख दऊँ, बारहमासी आज॥

टेक - *मुण्डनियाँ की बारहमासी कथि के गाऊँ जी॥*

चैत *चित्त धरि सुनौ कथा एक नयी सुनाता हूँ।*

एक भुण्डनियाँ नारी की बारहमासी गाता हूँ।
ध्यान से सुनना सब भाई। एक चतुर पुरूष की नारी,
बड़ी ही बेसहूर आई॥
कर दियौ सब घर नकमानी।
सब उलटे - सीधे काम, करे वो अपनी मनमानी॥
नित नए गावै रमढ़ोला।
लच्छिन जाके देखि-देखि कैं सूखि चल्यौ चोला॥
पती कौ जीय जाय पजरा।
आँखिन ढीड़ चुचाय, पोति ले पलकन पै कजरा॥
हाल मैं सभी सुनाऊँ जी। भुण्डनियाँ की. ...॥1॥

लगौ मास ***वैशाख*** *बलम के सम्मुख भइ ठाड़ी।*
लइ गलबहियाँ डार, कहै मोय लाय देउ साड़ी॥
पहरि रहि गंडा-जन्तर कौ। मोय देउ पिया सिलवाय,
पोलिका लेड़ी मिन्टर कौ॥
कभी नायँ घर में दामन की। पारौसिन नित पहरै,
देखौ गुलबो बामन की॥
नायँ कम त्याहरी आमद है। हँसि-हँसि लेय बलैयाँ,
भारी करै खुशामद है॥
सुतैमन मन में ब्हौत बनैं।
ये अपने आगे और किसी को बिलकुल नायँ गिनै॥
हाल आगै समझाऊँ जी। भुण्डनियाँ की. ...॥2॥

जेठ *दुपहरी पड़ै चीलिया छोड़ि रही अंडा।*
भुण्डनियाँ दगरे में बैठी, थापि रही कंडा॥
लपकि कै अधर पान डोलै।
कहै अकल की बात कोइ तो नठराय कै बोले॥
फिरै ये उचकाती एड़ी। सिख की लागे बुरी,
तुनकि देखै टेढ़ी टेढ़ी॥
कहै मोय है गयौ है अफरा।
दुबकि-छुपकि खावै, चपटा के फोरि-फोरि खपरा॥
महेरी राँधी भरि हँडिया। देखत रही,
न तारी जानैं, खाय गई पड़िया॥
सुनौ सब और बताऊँ जी। भुण्डनियाँ की. ...॥3॥

महिना लगौ ***अषाढ़,*** *कहें तौ बुरी जाय लागै।*
जब तक बजैं न आठ, नहीं ये सोवत ते जागै॥
काम की भारी कमकस है। झींके दिन भर बलम,
न जापै चलै कोइ वश है॥
न ऐसी और निहारी है। कूड़े से घर अट्यौ,
देय नहिं कभी बुहारी है॥
चलावै अपनी बरजोरी। फिकर नायँ जाय तनिक,
फिरे रोवत छोरा-छोरी॥
बात बोले पै नर्रावै। पीहर जाऊँ चली,
धौंस नित की ये दिखलावै॥
न है सुख, वहाँ मैं पाऊँजी। भुण्डनियाँ की. ...॥4॥

सावन *महीना लग्यौ करै ये रोज चबैया है।*
पीहर जाऊँ, चली लिवाइवे आयौ भैया है।
खाट में उठत करैं हल्ला। लबर-जबर उठि चली,
छानि कौ गेर दयौ बल्ला॥
दबि गई छप्पर के नीचै। पड़ी-पड़ी चिल्लाय,
आँखि दोऊ खौले ओर भीचे॥
करें जाकौ ठट्ठा सब दुनियाँ। छप्पर कूँ उचकाय,
निकारी बाहर भुण्डनियाँ॥
कहै यों, जगह खार खड्डी। लगी कमर में चोट,
रीढ़ की दूखि रही हड्डी॥
कहा उपचार कराऊँजी? भुण्डनियाँ की. ...॥5॥

भादौ *महिना लग्यौ कसक जब निकरि गई तनकी।*
कहन लगी बालम सैं, करि देओ पिया मेरे मनकी॥
और नायँ अब कछु होने की।
खेत भैंसिया बेचि गढ़ाय देऔ तगड़ी सोने की॥
गढ़ौ मत बातन की गिल्ली।
पारौसिन रही पहरि, उडा़यें रोज मेरी खिल्ली॥
यही मन माहिं समाई हैं। उछटि गई मेरी नींद,
निगोड़ी जबते लाई है॥
लाय लेउ साबुन की बटिया। नखरे रही दिखाय,
लगाइ कै भौंहन की टटिया॥
नायँ पंचों बहकाऊँ जी। भुण्डिनियाँ की. ...i6॥

क्वार *माह भुण्डिनियाँ कर रही मटरारे मन के।*
बामन आई नौति श्राद्ध करिवे कूँ पुरखन के॥
बड़ी ही मन में हरसाई।
पूरी-खीर बनाय विप्रते पहलै ही खाई॥
खायवै बलम जभी बैठौ। तैने किनका चौं नायँ डारौ,
कसिकै कान खूब ऐंठौ॥
और कहा निकसिंगे कल्ला।
हो गयौ बूढ़ौ बैल पजारे मैं मारूँगी मल्ला॥
उठत ही परिजाय मक्खिन की।

लरिकौरौ है गयौ न सीखै नैकहुँ लक्खिन की॥
कहाँ तक तोय निभाऊँ जी। भुण्डिनियाँ की. ...॥7॥

कार्तिक *कहूँ हकीकत या भुण्डिनियाँ नारी की।*
होय मन में भारी खुशी धूम है रही दिवारी की॥
बनैं जे बड़ी भुआ भारी। रोटी धरीं उघार,
खाय गई कुतिया एक कारी॥
कही तौ उलटी नठरानी। करी आध पाव दाल,
धरौ है बटुला भर पानी॥
फेरि कै बैठी गई पुट्ठी। धक्क करी मायँ धक्क,
नोन जामें झोंको द्वे मुट्ठी॥
परोसी खाइवे कूँ थरिया। बैठी फसला मार जराय लई,
चूल्हे में फरिया॥
नायँ कछु हँसी उड़ाऊँजी। भुण्डिनियाँ की. ...॥8॥

अगहन *जाड़ौ पड़ै, देखि भुंडिनियाँ घबड़ाई।*
भैया दोज भई जब से नायँ एक दिया न्हाइ॥
लगावै चंदन कौ बिन्दा। भजनानंदिन बनैं,
भजै ये राधे-गोविन्दा॥
गले में कंठी है डारी।
होते ही भोर परौसिन कूँ देय बिना बात गारी॥
न देखै अपनौ आपौ है।
पड़ी भैंस सी रहे, देह में चढ़ौ मुटापौ है॥
चलै ये थामक थैया सी।
गोलमोल बैंगन सी दीखै ये चकपइया सी॥
कहै नायँ बोझ उठाऊँजी। भुण्डिनियाँ की. ...॥9॥

पूष *हूँस सी फिरै, नायँ जे म्हौड़ौ तक धोवै।*
जूआँ भारी परे, हूँकरी दे दै के रोवै॥
खुजावै खुर्र-खुर्र करिकै। लीख चुटइया मार रही है,
नख ऊपर धरि कै॥
कहै मोय लगी नजरिया है।
चटनी बटिवै में अपनी लई दुचलि उमरिया है॥
दिवावै स्याने पै झारौ।
गंडा करि बाँधौ गर्दन में लहँगा कौ नारौ॥
कहै अब करलऊँ रोटी में।
जानें दई लार टपकाय, माँड़ रही चून खटौटी में॥
कहै यों सेकि कै खाऊँ जी। भुण्डिनिया की. ...॥10॥

माह *डाह मन करै भरै जाड़े में सिसकारी।*
गुस्सा खाकै फोरि दई जानें काँसे की थारी।
फोरिदियौ पीतर कौ गडुआ। मैं पीहर जाऊँ चली,
पजारे रह जाइगौ रँडुआ॥
बलमते रोप रही रासौ। पानी की नायँ पूछै,
कोई डोलैंगौ प्यासौ॥
फोरि कै धरदीनी कूँड़ी।
लड़िवे कूँ गई बैठ, डारि के आँगन में मूड़ी।
लगाइ रही सौ-सौ अलबट्टा।
पार-परौसिन देखि देखि कैं करैं खूब ठट्टा॥
लखैं सब जाके माऊँ जी। भुण्डिनियाँ जी. ...॥11॥

फागुन *महीना लग्यौ, भई होरी में दीवानी।*
जाँ-बेजाँ हुरदंग करि रही बनके मस्तानी॥
दिखाय रई अपने हथकंडा। गैलउअन के पीछे भाजै,
लै कर में डण्डा॥
बँधौ नहीं जब कोई सपड़ा है। तब मोरी की लै कीच,
बिगाड़ै सबके कपड़ा है॥
कहाँ जाइ रह्यौ रे गैलउआ। मनकर होरी खेल,
दीजियों बेशक मत फगुआ न लायौ खावै कूँ लडुआ।
आज हाथ मेरे परौ,
निकसि के कहाँ जाय भडुआ बड़ी मैं मन हरसाऊँ जी।
भुण्डिनियाँ की. ...॥12॥

लौंद *लाख चहै कहौ समझ नायँ एक बात आवै।*
भौराँ सी भन्नाय, दिखाय कै आँखें बतरावे॥
दुःखी पति जाकौ जियरा में।
मिली बेअकल नारी परेखे दिल अंदर आमें॥
परौसी आइकै समझामें। मन में शांति धारि,
परै गति ज्यादा दुविधा में॥
न बंधन ऐसे टूटैगो। भुण्डिनियाँ ते पीछो,
तेरौ सहज न छूटैगौ॥
बात तजि सकल झमेला की। बारहमासी पढ़ौ,
लिखी 'रघुनाथ अकेला' की।
गुरू कौ मन में ध्याऊँजी। भुण्डिनियाँ की. ...॥13॥

हे गरीबों के भाई! कर्ता-धर्ता, सबकुछ कर सकने वाले, आप मेरी इज्जत रखना। मैं भोदूँ औरत अर्थात् सीधी-नासमझ या कहो बेवकूफ औरत की बारहमासी लिखता हूँ। बारहमासी लोकगीत की टेक है-भुण्डनिया की बारहमासी लिखकर के गाता हूँ।

चैत्र का माह है। मन लगाकर सुनिये एक नयी कथा सुनाता हूँ। एक भुण्डनियाँ-पत्नी की (कथा), बारहमासी (गीत के रूप में) गाता हूँ। सब भाई ध्यान से सुनना कि एक चतुर पुरूष की पत्नी (दुर्भाग्य से) बड़ी ही असभ्य, अशिष्ट और अकुशल आई। उसने सारे घर वालों का साँस नाक में ला दिया, नांक में दम कर दिया। सारे कामों को उल्टे ढंग से करती, अपने मन (चाहे तरीके) से करती। प्रतिदिन नये-नये अजीब किस्से सुनाती गाती। उसके लक्षणों की देख-देखकर (मन ही नहीं) शरीर (भी) सूख गया। और पति का मन जला ही जाता था किंतु उसकी भले ही आँखों में कीचड़ भरा रहता किंतु पलकों तक में काजल अवश्य लगा लेती। (जब सुनाने ही लग पड़ा हूँ) तो हाल सारा ही सुनाता हूँ। भोदूँ पत्नी की (करतूत लिखकर) बारहमासी के रूप में गाता हूँ ॥1॥

वैशाख लगा (ही था) कि पति के सम्मुख याने सामने जा खड़ी हुई। गले में बाहें डालकर कहने लगी-'मुझे साड़ी ला दो जी'। यंत्र बनाया हुआ, गंडा पहन रखा था किंतु बोली-'पियाजी! मुझे लेडी मिन्टर का पोलका याने ब्लाउज सिलवा दो। घर में कोई रूपयों की कमी थोड़े ना है। देखो! पड़ौसन गुलाबो बामनी (तो) प्रतिदिन पहनती है। आपकी भी कमाई कोई कम तो है नहीं।' हँस-हँसकर पति की बलैयाँ लेने लगी और भारी मनुहार करने लगी। (क्योंकि उसे भी रेशम जैसा चमकदार ब्लाउज पहनना था। वह चालाक, अपने मन में बहुत ही बड़ी बनती हैं। यह अपने सामने और किसी की तो जरा भी गिनती ही नहीं करती। मैं उसका हाल आगे और समझाता हूँ। बेअक्ल जोरू की बारहमासी लिखकर गाता हूँ।

जेठ मास में दोपहरी (इतनी तेज) पड़ रही थी कि चीलों के गर्भ गिर रहे थे किन्तु भुंडनिया तो चौड़े रास्ते में बैठी गोबर के उपले थाप रही थी। पैर जल रहे थे तो उछल-उछलकर अधर घूम रही थी। कोई उससे समझ की बात कहता तो अकड़कर बोलती। ऐड़ी उचकाती घूम रही थी। सिखावन (की बात) तो बुरी लगती और तुनककर टेढ़ा-टेढ़ा बोलती। कहती कि मुझे अफरा हो गया है (किंतु सच यह था कि) मटके के खीपड़े छुप-छुपकर खाती (रहती) थी। (एक दिन) छाछ याने मठा में दलिया राँधा था। भैंस की बछिया आई तो उसे देखती रही, भगाई नहीं और वह सारी महेरी वह पड़िया खा गई। आप सुने, और सब भी बताता हूँ। बेबकूफ औरत का वर्णन बारहमासी के रूप में लिखकर गाता हूँ ॥3॥

अषाढ़ के महीने की बात है। कहे तो इसे बुरा लगता है किंतु सुबह जब तक आठ नहीं बज जाते, यह सोते हुए नहीं जागती। काम करने में बहुत आलसी हैं पति दिन भर इसके लिए गाली देता और अपने भाग्य पर रोता है पर उसका इस पर कोई वश नहीं चलता। ऐसी दूसरी कोई निगाह नहीं पड़ती। घर कूड़े से भरा पड़ा है किंतु कभी ढंग से बुहारी तक नहीं फेरती। अपनी ठाड़ चलाती है। बच्चे-बच्ची रोते फिरते हैं किंतु इसे उनकी जरा भी चिंता नहीं है। बात-बात पर कड़ककर बोलती है। और प्रतिदिन पीहर जाने की धौंस दिखलाती। कहती है-यहाँ सुख नहीं है। मैं वहाँ जाकर (सुख) पाऊँगी। उस सीधी (कहूँ या मूर्ख,) औरत की कथा लिखकर गाता हूँ ॥4॥

श्रावण का महीना लगा, यह रोजाना चबर-चबर चबरगत करती है। भाई आया राखी बँधवाने तो कहने लगी-'पीहर चली जाऊँ। भैया लिवाने आया है।' खाट से उठते ही शोर करने लगती। जल्दी-जल्दी उठकर चली तो छप्पर का बल्ला, टकराकर गिरा दिया। छप्पर गिर गया। नीचे दब गई। पड़ी-पड़ी चिल्लाने लगी। कभी आँखे खोले कभी बंद करे। सब लोग उसकी हँसी करने लगे। छप्पर ऊँचा करके उसको बाहर निकाला। कहने लगी-'जगह बहुत ऊँची नीची है। मेरी कमर में चोट लगी है और रीड़ की हड्डी में दुःख हो रहा है। बताओ जी! मैं क्या दवा दारू कराऊँ।' भोली भुण्डनियाँ की कथा, बारहमासी लोकगीत रूप लिखकर गाता हूँ ॥5॥

भाद्रपद का महीना लग गया। शरीर की चोट की कसक दूर हो गई तो बोला-पिया जी! मेरे मन की पूरी कर दो। और तो आपसे कुछ होना-जाना है नहीं। भैंस-खेत सब बेचकर, एक सोने की कौंधनी बनवा दो। बातों की गिल्ली तो बनाना मत, पड़ौस की पहनती है और रोज मेरी मजाक बनाती है। मेरे मन में तो वही समा गई है। वो शैतान (पड़ौसन) जब से लाई है, मेरी तो नींद ही उड़ गई है। और मुझे साबुन की टिकिया ला दो। वह तो पंचो! बड़े ही नाज नखरे दिखा रही है, यहाँ तक कि भौंहों पर भी चमक लगा ली है। मैं आपको बहकाता नहीं हूँ। मैं तो उस भौंदनिया की कथा, बारहमासी धुन के, बारहमासी लोकगीत में लिखकर गाता हूँ ॥6॥

क्वार के महीने में भौंदनिया अपने मन के लड्डू फोड़ रही है, मनौतियाँ मन चीते, मन चाहे काम रही है। पूर्व पुरूषों के श्राद्ध करने के लिए ब्राह्मण गणों को निमंत्रित कर आई है। मन में बहुत प्रसन्न है। (एक दिन) खीर-पूड़ी बनाई। ब्राह्मण के आने से पहले ही खा ली। जब पति भोजन करने लगा तो उसका कान पकड़कर खेंच लिया और बोली कि 'आपने पहले गउ ग्रास क्यों नहीं दिया तथा काग-ग्रास क्यों नहीं डाला? मुँह जले, बैल, इतना बूढ़ा हो गया। हट्टे-कट्टे! और क्या (जैसे पौधे में नये कुरे फूटते हैं वैसे) तुम्हारे नये कल्ले फूटेंगे। मैं तुझे मारूँगी तुझे तो (ब्राह्मण के) उठते ही, खीर में मक्खी न गिर जाय (इस बहाने से जल्दी खाने की), इसकी

चिन्ता पड़ जाती है। तू तो लड़का हो गया है। नैक भी अच्छे लक्षणों की बात नहीं सीखता। मैं तुझे कहाँ तक निभाऊँ?' उस (तथाकथित) भौंदनिया की, कथा लिखकर मैं सुना रहा हूँ ॥7॥

कार्तिक मास आया। उस भोंदनिया की सच्चाई का वर्णन करूँ। दीपावली की भारी धूम (चहल पहल) हो रही है मन में यह भी बड़ी खुश हो रही है। सबकी बड़ी बुआ (अपने आप ही) बनकर घूम रही है। (तुम कौन कि खामाख्वाह) रोटी उघाड़ी रख दी एक काली कुतिया खा गई। कही तो उलटकर निष्ठुर होकर बोली। आधा पाव दाल डाली तो पूरा बर्तन (तोला, कलशा) भरकर पानी रखा। पीठ फेरकर बैठ गई। सोचा न विचारा-दो मुट्ठी नमक डाल दिया। खाने को थाली परोस ली। पैर पसारकर बैठ गई कि चूल्हे में फरिया (ओढ़नी) ही जला ली। कुछ हँसी नहीं उड़ा रहा। सच भोंदनिया की लीलाओं को लिखकर गा रहा हूँ ॥8॥

अगहन में जब ठण्ड पड़ने लगी तो भुंडिनिया देखकर घबड़ाई। (दीपावली के बाद) भाई दौज से ही एक भी दिन न्हाई नहीं थी किंतु चंदन की बिंदा रोज लगाती। भजन में आनंदित रहने वाले बनती दिखती है। राधे-गोविन्दा भजती रहती है। गले में कंठी-माला डाल ली किंतु सुबह होते ही पड़ौसिन को बिना ही कारण, गाली अवश्य देती। अपना आपा तो देखती विचारती नहीं। भैंस की तरह पड़ी रहती है, शरीर पर मोटापा छा रहा है। हथिनी की तरह हिलती-चलती है। गोल मोल बैंगन की तरह चक्र जैसी दिखती है। कहती है कि वजन नहीं उठाऊँगी। ऐसी भौंदनिया के नाम से प्रसिद्ध औरत की कथा, बारहमासी रूप में लिखकर गाता हूँ ॥9॥

पूष में तो वह (मोटे) राक्षस या दैत्य की तरह घूमती है। मुँह तक भी नहीं धोती। जुआँ इतने हो गये हैं कि हूँ-हूँ कर करके रोती है। खुर्र-खुर्र करके खुजलाती है। लीख और जुआँ, खोज खोजकर, नोहँ पर धरकर (सीधे नोहँ) से मारती हैं कहती है कि-'मुझे नजर लग गई है। अकुशल इतनी है कि चटनी बाँटते समय ही अपनी अँगुली भी कुचल डाली है। (अब इसी बात पर) स्याने पर झाड़ा दिला आई। गंडा कर कर लाई तो लँहगे के नाड़े से ही गर्दन में बाँध लिया। कहने लगी कि अब रोटी कर लूँ और पत्थर की खटौती (परात) में आटा माड़ने लगी तो (बेवकूफ से इतना भी न सम्हाला गया कि उसमें लार ही टपक पड़ी।) कह रही थी कि अच्छी तरह सेक कर खाऊँगी। ऐसी भौंदूँ औरत की कथा, बारहमासी के रूप में लिखकर गाता हूँ ॥10॥

माह के महीने में, मन में जाने क्या-क्या डाह कर रही है। जलती है। सिसकारी भरती है। गुस्सा करके, काँसे की थाली फोड़ डाली और पीतल का लोटा भी फोड़ डाला। कहती है-'मैं पीहर जाऊँगी। मुँह जले। तू रँडुआ (अर्थात् अकेला) ही रह जायेगा।' बलम से लड़ाई ठान रही है, कहती है-'कोई पानी की भी नहीं पूछेगा प्यासा ही घूमेगा।' पत्थर से चीनी मिट्टी से बनी भगौनी फोड़कर रख दी और वह तो आँगन में मूड़ी डालकर, लड़ने के लिए (जमकर) बैठ गई। सैंकड़ों बहाने लगा रही थी। आस-पास की महिलाएँ, यह देखकर खूब हँसी मजाक कर रही थीं। सब इसी की ओर देख रही थीं। बेअक्ल औरत की बारहमासी लिखकर गा रहा हूँ ॥11॥

फागुन का महीना क्या लगा कि वह तो होली में मस्त हो गई। उचित-अनुचित धमाल बाजी, धमा-चौकड़ी कर रही है। अपने हाथों की कला दिखाने लगी। रास्तागीरों के पीछे भाग-भागकर, हाथ में डण्डा लेकर (उन्हें डराने का) जब कोई रास्ता नहीं बना तो मोरी की कीच लेकर सब के कपड़े बिगाड़ने लगी। (बोली) 'अरे, बटोही! कहाँ जा रहा है? (आजा) मन करके होली खेल ले। (डरे मत) झिझक मत, संदेह मतकर, होली के बदले में मिठाई आदि का फगवा भले ही मत देना।' 'किंतु होली खेलने के बाद) कहने लगी-'खाने को लडुआ नहीं लाया?' हाथ आज आया है मेरे में, अब कहाँ निकलकर जायेगा।'? (और कीच लगा दी) वह कहती है कि इससे मुझे प्रसन्नता होती है। भुंडनिया की बारहमासी लिखकर गाता हूँ ॥12॥

तेरहवाँ अधिक मास **लौंद** आ गया। उसे कितना ही समझाओ पर उसकी समझ में नहीं आता। भौंरे (भँवरे) की तरह भिन्न-भिन्न भन्नाती है और आँख दिखाकर बात करती है। पति हृदय से बड़ा दुःखी है। मन में यह पछतावा आता है कि ऐसी नासमझ पत्नी मिली है। पड़ौसी उसे आकर समझाते हैं कि 'मन में धैर्य धारणकर, धीरज रख, अधिक दुविधा में मत पड़। अब यह (विवाह का) बंधन ऐसे ही तो टूट जायेगा नहीं? और भुण्डिनियाँ से तेरा पीछा कोई ऐसे ही तो (सहज में) छूटेगा नहीं।' (सभी (श्रोता) और अध्येता गण!) सभी झंझट की बातों को छोड़कर, रघुनाथ अकेला की लिखी हुई बारहमासी को पढ़ो (और सुनो)। (अंत में) मैं गुरूजी का ध्यान करता हूँ और भोंदनिया नारी की नासमझी के कामों की कथा लिखकर, गाता हूँ ॥13॥

उक्त पाँच बारहमासी, गाँव ऐंचवाड़ा के करीब अस्सी वर्षीय वृद्ध महाशय श्री धन्नालालजी गुप्ता ने उपलब्ध कराई। ये भी इस फन के उस्ताद रहे थे।

किस मास में क्या अच्छा लगता है, प्रिय लगता है इस

विचार से लिखा गया निम्नांकित बारहमासी फटका, गोपीनाथ मोहल्ले के श्री भूरजी के पुत्र श्री हुकम जी सैनी से इस तरह उपलब्ध हुआ :-

कब क्या प्रिय

सावन *प्यारी बिटिया लागै,* ***भादौं*** *प्यारी लगै घटा।*
क्वार *से प्यारे लगें कनागत,* ***कार्तिक*** *प्यारी लगैं कथा॥*
अग्हैन *प्यारी सरदी लागै,* ***पूष*** *में प्यारी लगै तपा।*
माह *में प्यारी बसंत लागै,* ***फागुन*** *प्यारे ढोलढपा॥*
चैत *में प्यारी लगै हरियाली,* ***बैसाख*** *प्यारे लगें बिहा।*
जेठ *में प्यारी लगै काँकड़ी,* ***अषाढ़*** *में प्यारे बैल-पड़ा॥*

'**सावन** के महीने में (ससुराल से राखी बाँधने और सावन झूलने को पीहर आयी हुई) बेटी प्यारी लगती है और **भादों** में पानी वाले काले-काले बादल प्यारे लगते हैं। **क्वार** मास में श्राद्ध पक्ष प्रिय होता है तो **कार्तिक** (के पुण्यमास) में कथा-भगवत प्यारी होती है, श्रेय है। **अगहन** में सर्दी प्यारी लगती है हल्की-हल्की, **पूष** में आग तापना, हाथ सैंकना अच्छा लगता हैं माघ के महीने में बसंत की (हरियाई पिरियाई धरती और) बसंती बहार अच्छी लगती है तो **फाल्गुन** में होली पर ढप-ढोल और नगाड़े प्यारे लगते हैं। **चैत्र** में नयी घास की हरियाली (नवरात्रि पूजन, राम जन्म और नव संवत् के सन्दर्भ में और भी अधिक) प्यारी लगती है **तो वैशाख** में विवाह-संस्कार अच्छे लगते हैं, शुभ रहते हैं (क्योंकि ना अधिक गर्मी न ठण्ड) **ज्येष्ठ** मास में (शीतलता दायक) काँकड़ी प्रिय होती है तो **अषाढ़** में (खेंतों में जोत और के लिए) बैल और पड़े तो प्यारे लगते ही है॥'

गोपीनाथ अखाड़े के उस्ताद पं. श्री बालीराम जी के गुरूजी (और ताऊजी) श्री गिरवरजी नें, इनके जन्म से पूर्व अर्थात् अस्सी वर्ष पूर्व यह बारहमासी लिखी थी जो उन्हीं के हाथ से लिखी, उनकी कापी से पंडित जी ने उपलब्ध कराई। देखें -

विरह की बारहमासी (भजन)

टेक - *कह रही सखियन से राधा। प्रीतम बन गए निरमोही॥*
चौपाई - *साढ़ महीना बीता सारा। आया ना घर बंसीवारा॥*
दोहा - *बंसी बारे बिन सखी, (तौ मेरा) ब्याकुल हो रह्या अंग।*
सावन की रुत आ गई, (तौ) मैं झूलूँ किस के संग??
चौक - *किस के संग पैंग बढ़ाऊँ? बिन बालम मैं दुख पाऊँ॥*
कैसे मन कूँ बहलाऊँ? या विपदा में कहाँ जाऊँ??
मिलान - *राखिन के दिन चार; रह गए,*
आया नहिं भरतार; बेदरदी नंद कुमार।
मौज सब सावन की खोई। ना पूरा किया अबादा॥1॥
कह रही. ...

चौपाई - *भादों मास, पिया बिन प्यारी।*
कैसे काटूँ रैन अँध्यारी?
दोहा - *रैन अँध्यारी ना कटै, मुझपै बिन घनस्याम।*
सावलिया के मोहमें, तौ (मेरा) सूका बदन तमाम॥
चौपाई - *ना रही बदन में लाली। बिन जोर देह भई खाली॥*
भादों गया सारा आली। सुध न लीनी वनमाली॥
मिलान वनमाली दिन रात; जा, कुबजा सँग मौज उड़ात;
राधा की सुनकै बात
सखी सब ब्याकुल हो रोई। दुःख ब्यापा सब कूँ ज्यादा॥2॥
कह रही. .....

चौपाई - *क्वार गया बालम बिन दासी।*
सरद आ गई पूरन मासी॥
दोहा - *पूरन मासी सरद की, पति बिन लगै उदास।*
बंसीवट पै को करै, बिन सामल के रास?
चौपाई - *बंसीवट रास रचाना। छोड़ा बेदरदी कान्हा॥*
तज सखियन का दधि खाना। जा कुबजा संग सुख माना॥
मिलान - *सुख माना भरपूर; रहके कुबजा पास हजूर;*
अब होके हमसे दूर
प्रांत कुल बचपन की खोई। नहीं कातक का पन साधा॥3॥
कह रही. ....

चौपाई - *कातक गया अग्हैन लगा री।*
जुलमी सीत सतावै भारी॥
दोहा - *भारी सीत सतावता, पूष माह में मोय।*
रुत बसंत फीकी लगै, पति बिन राग न होय॥
चौपाई - *होत ना राग लखीना। बीता सग माह महीना।*
फागुन का सुख नहीं चीना। निरदई श्याम कहा कीना?
मिलान - *कहा कीना घनश्याम; चैत में,*
ना लीया मेरा नाम; बीता बैसाख तमाम।
ना पुरजा भेजा कोई। अब जेठ चला गया आधा॥4॥
कह रही. ....

चौपाई - *बारहों मास बिताया दुःख में।*
लोंद महीना आया सुख में॥
दोहा - *सुख में आया ई सखी; बँधी श्याम की आस।*

पाती लाया बलम की; उहोव, हर का दास॥

चौपाई - *दासी वाय देख सिहाई। सब राधा के ढिंग आई॥*
पाती लै हाथ बचाई। जब सुध बालम की पाई॥

मिलान - *पाई सुध अनमोल; गोपी खड़ी बाँध कै गोल;*
गिरबर ने मतलब तोल
भजन कथ तन विपदा धोई। तज दिया पाप का कादा॥5॥
कह रही .....

रास रासेश्वरी श्री राधा जी सखियों सहेलियों से कह रही हैं कि प्राण-प्यारे कृष्ण तो निर्मोही बन गये हैं, अब किसी से भी, हमसे भी प्रेम नहीं करते।

पूरा सावन का महीना बीत गया किंतु बाँसुरीवाला कृष्ण घर नहीं आया। हे सहेली! बंसी वाले के बिना तो मेरा पूरा शरीर बैचैन हो रहा हैं सावन का मौसम आ गया। अब (तू ही बता कि) मैं किसके साथ झूलूँ? मैं झूले पर किसके साथ मचकी बढ़ाऊँ? बिना पति के मैं दुःख पाती हूँ। मैं मन को कैसे समझाऊँ? इस कठिनाई में, मैं कहाँ जाऊँ? राखी के (मात्र) चार ही दिन रह गये, मेरे भरतार (बूरा खाने) नहीं आये। ये नंदकुमार, नंदलाल कृष्ण किसी के दुःख से दुःखी नहीं होते कि इन्होंने सावन का सारा आनंद नष्ट कर दिया। और अपना वायदा भी पूरा नहीं किया इस तरह राधा जी सहेलियों से कहती हैं कि प्रियतम कन्हैया जी तो स्नेह नहीं करते अब हमसे। ॥1॥

सहेली! भादों का महीना और उसमें प्रियतम के बिना (अकेली) प्रिया? बता, ये अँधेरी रातें कैसे बिताऊँ? श्याम सुन्दर, नीलाभ श्याम के बिना, मुझसे तो ये अँधेरी रातें नहीं काटी जाती। साँवले कृष्ण के प्रेम में तो मेरा सारा शरीर ही सूख गया हैं मुख (तक) पर लालिमा नहीं रही, बिना शक्ति के शरीर खाली-खाली लगता है। सारा भाद्रपद चला गया किंतु वनमाली कृष्ण ने सुधबुध कुछ न ली, कोई खोज खबर न ली और वह कुंज बिहारी दिन-रात कुब्जा के साथ रंग रेलियाँ कर रहे हैं राधाजी की (ऐसी दुःख भरी) बातें सुन कर सारी सखियाँ रोने लगीं और सभी को बहुत दुःख व्याप्त हो गया राधा जी कहती है कि सखियों! कृष्ण तो निष्काम, निष्प्रेम हो गये हैं। ॥12॥

क्वार का महीना भी चला गया। यह सेविका, पति के बिना (सेवा किये ही) रह गई। शरद पूर्णिमा भी आ गई। यह शरद की सुहानी पूर्णिमा पति के बिना तो सूनी-सूनी लगती है। बिना साँवलिया के, वंशीवट, वृंदावन में रास कौन करेगा? इस वेदना शून्य कनुआँ ने तो वंशीवट पर रास रचाना छोड़ दिया है और सखियों का दही (माखन) खाना छोड़कर, कुब्जा के संग में ही सुख माना हैं वहीं पूरा सुख मानकर, और कुब्जा के पास रहकर, प्रभु ने हमसे दूर होकर बचपन की सारी प्रीति भुला दी है। कार्तिक का प्रण भी नहीं निभाया ॥3॥

सखि! कार्तिक चला गया, अगहन लग गया। यह आफत करने वाला जाड़ा बहुत दुःख देता है, तपन देता है। पूष के महीने में यह अत्यंत शीत तो सताता ही है किंतु माह में यह बसंत ऋतु भी फीकी लगती है क्योंकि बिना पति के न कोई राग (गायन) होता है और न ही रंग। लाखों के मूल्य वाला राग भी नहीं होता। सारा माह बीत गया। फागुन का सुख तो देखने को भी नहीं मिला। निर्दय श्याम ने यह क्या किया? मेघश्याम ने यह क्या किया कि चैत्र में भी मेरा नाम नहीं लिया। समस्त वैशाख बीत गया पर कोई छोटी सी चिट्ठी पत्री का टुकड़ा भी नहीं भेजा। (लो) आधा जेठ भी चला गया सखियों से श्री राधा जी कहती हैं कि प्यारे तो बहुत ही मोह रहित हो गये हैं। ॥4॥

बारहों महीने दुःख में बिताये तब अधिक मास सुखकारी हुआ। सखि! यह सुख वाला इस तरह हुआ कि श्याम सुंदर ले आया। सखि! यह सेविका राधा उस चिट्ठी को देखकर बहुत ही प्रसन्न हुई। तब सारी सखिया राधाजी के पास आ गई। चिट्ठी उनके हाथ से लेकर बँचवाई याने पढ़वाई। तब श्रीकृष्ण के बारे में समाचार प्राप्त हुए। यह अमूल्य समाचार पाकर, सखियाँ गोल घेरे में खड़ी हो गई (और प्रसन्नता से गरबा नृत्य करने लगीं) गिरवर कवि कहते हैं कि मैंने तो अपना स्वार्थ देखकर, यह भजन लिखकर अपने शरीर का दुःख धो दिया और (मानसिक) पाप का कीचड़ भी छोड़ दिया राधा जी सहेलियों से कहती हैं कि कृष्ण कैसे निर्मोही हो गये थे। ॥5॥

अषाढ़ में कन्या का विवाह हुआ था। सावन में जब जँवाईजी विदा कराने आये तब सास जी ने क्या कहा और कन्या ने क्या कहा, देखें इस बारहमासी में कि जो बड़े-मोहल्ले के श्री फत्तेराम जी ने अपनी चाची रेशम जी से प्राप्त की -

लिवउआ की बारहमासी -

विवरण - *लागौ **सावन** मास, चन्दा लेवे कूँ आये जी राव।*
कन्या - *हमारे पिया मुगद गँवार, सावन में लेवे आये जी राव॥*
सास - *सावन में बेटी झूला झूलै, भादों लेवे आओजी राव॥1॥*

विवरण - *लागौ **भादों** महीना, चन्दा लेवे आये जी राव।*

कन्या - *हमारे पिया मुगद गँवार, भादों में लेवे आये जी राव॥*
सास - *भादों बरखा भारी, क्वार में लेवे आऔ जी राव॥2॥*

विवरण - लागौ क्वार महीना, चन्दा लेवे आये जी राव।
कन्या - *हमारे पिया मुगद गँवार, क्वार में लेवे आये जी राव॥*
सास - *क्वार में तो कनागत भारी, कातक लेवे आऔ जी राव॥3॥*

विवरण - *लागौ कातक महीना, चन्दा कूँ लेवे आये जी राव।*
कन्या - *हमारे पिया मुगद गँवार, कातक में लेवे आये जी राव।*
सास - *कार्तिक न्हावै बेटी कतकी, अगहन लेवे आऔ जी राव।4॥*

विवरण - *लागौ अगहैन महीना, चन्दा लेवे कूँ आये जी राव।*
कन्या - *हमारे पिया मुगद गँवार, अग्हैन में लेवे आये जी राव॥*
सास - *अगहन में गढ़ावै बेटी गहनौ,*
पूष में लेवे आओ जी राव॥5॥

विवरण - *पूष महीना लग गयौ, चन्दा लेवे आये जी राव।*
कन्या - *हमारे पिया मुगद गँवार, पूष में लेवे आये जी राव॥*
सास - *पूष महीना में आमें न जामें,*
माह में लेवे आऔ जी राव॥6॥

विवरण - *माह महीना लगत ही, चन्दा कूँ लेवे आये जी राव।*
कन्या - *हमारे पिया मुगद गँवार, माह में लेवे आये जी राव॥*
सास - *माह माहेलिया कों भारी, फगुन में लेवे आऔ जी राव॥7॥*

विवरण - *फागुन महीना आ गयौ, चन्दा कूँ लेवे आये जी राव।*
कन्या - *हमारे पिया मुगद गँवार, फागुन में लेवे आये जी राव॥*
सास - *फागुन में खेलै बेटी फगुआ, चैत में लेवे आऔ जी राव॥8।*

विवरण - चैत महीना चालू होवत, चन्दा लेवे आये जी राव।
कन्या - *हमारे पिया मुगद गँवार, चैत में लेवे आये जी राव॥*
सास - *चैत में चिंता भारी रहत है,*
वैशाख में लेवे आऔ जी राव॥9॥

विवरण - *लागौ वैशाख महीना, चन्दा ऐ लेवे आये जी राव।*
कन्या - *हमारे पिया मुगद गँवार, वैशाख में लेवे आये जी राव॥*
सास - *वैशाख विरन जी कौ ब्याह, जेठ में लेवे आऔ जी राव॥10॥*

विवरण - *लागौ जेठ महीना जब ही, चन्दा ऐ लेवे कूँ आये जी राव।*
कन्या - *हमारे पिया मुगेद गँवार, जेठ में लेवे आये जी राव॥*
सास - *जेठ महीना, जेठ कूँ भारी, आषाढ़ लेवे आऔ जी राव॥11॥*

विवरण - *आषाढ़ महीना लगौ, चन्दा कूँ लेवे आये जी राव।*
कन्या - *हमारे पिया मुगद गँवार, आषाढ़ में लेवे आये जी राव॥*
सास - *आषाढ़ नरावै बेटी बाजरौ, सावन लेवे आऔ जी राव॥12॥*

विवरण - *अब दुबारा सावन आयौ, चन्दा कूँ लेवे फिर आये जी राव।*
कन्या - *हमारे पिया मुगद गँवार, बारहों मास डोले जी राव॥*
सास - *दुबारा आये सावन में, बेटी ऐ ले जाऔ जी राव॥13॥*

सावन का महीना लगा तो जँवाईजी, बेटी चन्दा को लेने आये। चन्दा ने कहा कि हमारे पति तो ठेठ गँवार हैं जो सावन में ही लेने चले आये (अतः सास जी ने कह दिया कि) सावन में तो बेटी झूला झूलेगी, आप जँवाई जी! भादों में लेने आना। **भादों** में लेने पहुँचे, कन्या ने तब भी (अरूचि प्रकटकर) उन्हें गँवार कहा तो उसकी माँ ने कह दिया कि-भादों में वर्षा बहुत होती है, कँवर साहब! आप क्वार में लेने को आना।' **क्वार** का महीना लगा, लिवाने पहुँचे और पत्नी ने अपने पति को अब भी बिलकुल गँवार बताया तो सास जी ने कह दिया-'मेहमान! क्वार में तो (आप जानते हो कि) कनागत का काम भारी होता है। (मुझे इससे सहायता रहेगी) आप कार्तिक में लिवाने आ जाना।

कार्तिक में लिवाने आये, कन्या ने पुनः गँवार बताया तो उसकी माँ ने (बेटी का मन देखकर) कह दिया कि-'कार्तिक में तो मेरी बेटी, कार्तिक स्नान करेगी। (आपको कष्ट तो होगा पर आप कृपा करके) अगहन में आना।' **अगहन** महीना लगा, लिवाने आये, और तब भी पत्नी ने पति को पूरी तरह गँवार ही माना तो माँ ने हारकर-झक मारकर जँवाई जी से ऐसे कहा-'अगहन में तो हमें बेटी के लिये गहना बनवाना है। आप पूष में आना॥ जब **पूष** महीना लगा, बेटी (की जाने की इच्छा नहीं हुई और उस) ने पति को नासमझ कह दिया तो माँ ने कहा-'देखों जँवाई जी! (क्षमा करना) पूष में तो न कहीं आते हैं, और न ही जाते हैं। आप तो माह में लेने आ जाना।

सीधे भोले असनाब, **माह** महीना लगते ही फिर पहुँचे लिवाने तो कन्या ने (उनसे हँसी का मन बनाकर) उन्हें फिर भी बेवकूफ ही कहा तो सास जी ने (मजबूर होकर फिर से) कह दिया कि-'बेटा! माह का महीना तो माँ को भारी होता है। आप फागुन में लेने आना।' जँवाई राज **फागुन** में गये तो पत्नी ने (होली खेली, रंग डाला, कोड़े लगाये) पुनः गँवार बताया और माँ ने कह दिया कि 'फागुन में तो यह (अपने जीजाजी से, तुम्हारे छोटे भाई से) होली खेलकर फगुआ चाहेगी (अपने भाई को होली खेलने भेज देना) लिवाने चैत में आना।' **चैत्र** के प्रारंभ होते ही लिवाने पहुँचे किंतु लड़की का तो वही विचार रहा तो माँ ने (अब यह) कहा कि-'चैत में मुझे चिन्ता बहुत हो रही है। कृपा करके आप वैशाख में आना।

वैशाख में जँवाई (फिर से हिम्मत कर) लिवाने पहुँचे तो (हँसकर) पत्नी ने उनको पुनः नासमझ बताया। माँ ने कहा-'इस महीने इसके भाई का विवाह है। (विवाह में आना किन्तु) लिवाने तो अब जेठ में ही आना। जैसे ही **जेठ** लगा (हिम्मत न हारकर) पुनः

लिवाने पहुँचे। (बहू आनी जानी हुई नहीं थी) बेटी ने उन्हें अब भी ठेठ गँवार ही कहा और सास ने (बहाना इस तरह लगाया और) कहा-'जेठ का महीना, तुम्हारे बड़े भाई (इसके जेठ जी) को भारी पड़ेगा। अभी मत लिवा ले जाओ। आषाढ़ में आ जाना।' **आषाढ़** लगते ही लिवाने फिर पहुँचे। बेटी ने (पीहर के हित विचार से) उन्हें अब भी मूर्ख ही समझा माँ ने कहा-आषाढ़ में बेटी जरा बाजरा की खरपतवार हटाने में सहायता कर देगी। (आपकी बड़ी कृपा हो कि) आप सावन में लेने आ जाओ।' जब **सावन** में दुबारा पहुँचे तो बारहों महीना चक्कर लगाने वाले सीधे साधे, भोले भाले पति को, पत्नी ने (यह विचारकर कि इन्होंने कभी भी मर्दानगी दिखाकर यह नहीं कहा कि नहीं मैं तो लेकर ही जाऊँगा) फिर गँवार कहा किंतु सास ने (सब विचारकर) यह कहा कि 'आप सावन में दुबारा आये हो, आप बेटी को लिवा ले जाओ।' पति से हास-परिहास, उसकी परीक्षा और पति के साहसी और धैर्यवान होने की-कथा की यह बारहमासी महिलाओं में सावन में झूलों पर बैठे-बैठे बड़े ही चाव से गाई जाती है।

नब्बे वर्षीया माननीया अशर्फी जी कटारा, अपने बचपन से ही, तुलसी महारानी की बारहमासी गाती आयी हैं कि जिसमें कि उनके कृष्ण जैसे वर (पति) की प्राप्ति का कारण पूछा गया और तुलसा महारानी द्वारा इसके लिए पूरे वर्ष भारी तपस्या करने का वर्णन किया गया है। माता बहनों की जिह्वा पर चढ़ी हुई वह बारहमासी इस प्रकार है -

तुलसी जी की बारहमासी

लाऔरी चकमक की माटी और गंगा जल पानी, हो राम।
लीपौरी हो रानी, तुलसा कौ बिड़ला, बा की जोत सवाई, हो राम॥
मैं तोय पूछूँ-ऐ रानी तुरसाँ, का जप-तप तैनें कियौ, हो राम?
कातिक में हम कातिक न्हाये, ठंडे जल न्हाये,
बामन नौत जिमाये, हो राम॥
अगहन में हमने अगर गढ़ायौ, पूष में पाट-पुवायौ, हो राम।
माह में हम महा जल न्हाये, शीतल जल सेहे,
बरती अँगीठी न तापे, हो राम॥
फागुन में हम होरी न खेले, चैत में चिंता लागी, हो राम।
वैशाख में हम वैशाख न्हाये, जौ के भोजन पाये, हो राम॥
जेठ मास की परै धौपरी, नैकु ना बिजनी ढोरी, हो राम।
आषाढ़ में हम बर तर भीजे, कदम तर भीजे,
नैकु न छैया नीचे, हो राम॥
सावन में हम साग न खायौ, भादों दहि हू न चाखे, जी राम।
क्वार में हमनें पितर सभो के, बामन नौत जिमाये, जी राम॥
इतने जप-तप हमने कीए, जब रे कृष्ण वर पाये, हो राम॥
क्वारी गामें, घर-वर पामें, तिरनी पुत्र खिलायें, हो राम।
विधवा गामें, जनम सुधारें, बुढ़िया बैकुण्ठ धामें, हो राम॥

चिकनी पीली मिट्टी लाओ और 'गंगा जल' का पानी लाओ। हे बहू रानी! तुलसी थाँवड़े को गोबर-माटी से लीप (कर चमका) दो कि जिससे उस पर जलाये जाने वाले दीपक की रोशनी सवा गुनी हो जाये।

ऐ तुलसाँ महारानी। मैं आपसे यह पूछती हूँ कि आपने क्या भजन किया (किस मंत्र का जप किया) और क्या तपस्या की? तब वृन्दा महारानी बोली कि कार्तिक के महीने में हमने ठंडे जल से कार्तिक-स्नान किया और ब्राह्मणों को बुलाकर भोजन कराया। अगहन के महीने में हमने आभूषण के मनके गढ़वाये तो पूष माह में उनमें डोरे पुववाये।

माह में हमने ठंडे जल का सेवन किया, तलाब आदि तीर्थ-जल में नहाये किंतु जलती अँगीठी से कभी भी आग नहीं तपे। फागुन में हम होली भी नहीं खेले और चैत मास में भी हमें कृष्ण की ही चिन्ता लगी रही।

वैशाख में फिर तीर्थों में नहाये और जौ की राबड़ी व रोटी के भोजन किये। जेठ में जब तेज धूप पड़ती है, तब भी हमने हाथ से पंखा भी नहीं किया, हम उन्हीं के भजन ध्यान में लगे रहे। आषाढ़ में हम बड़ और कदम्ब के पेड़ों के नीचे खड़े उन्हें याद करते रहे और भीगते रहे और जरा भी छावन के नीचे नहीं गये।

सावन में सब्जी और फल भी नहीं चखे, भादों में दही भी नहीं खाया तथा क्वार कनागत के श्राद्धों में हमने पितरों को जल दिया और (उन्हीं के रूप में) ब्राह्मणों को निमंत्रित करके जिमाया। जब हमने इतना भजन किया तपस्या की तब जाकर हमें कृष्ण जैसे पति मिले।

इस कथा को क्वारी कन्या गाती हैं तो पति और अच्छा घर मिलता है। विवाहिता स्त्रियों को पुत्र लाभ होता है। विधवाओं का जन्म (जीवन) अच्छा हो जाता है तथा वृद्धा माताएँ बैकुण्ठ जाती हैं।

टौंक से श्री संजय शर्मा ने राग मल्हार में यह **'भजन बारहमासा'** भेजा

तुम तो पिया परदेश सिधारे। कैसे कटें बारहमास हमारे?

फागुन में सखी फाग मचत है,
चैत में वन-वन वृक्ष फुलाये।
वैशाख में बैरन धूप परत है,
जेठ तपै, दिन-रात सताये॥ तुम तौ...

आयौ आषाढ़ छा गये बदरा, सावन मास घनन-घन गरजे।
भादों भरत सब ताल-तलैया, क्वार बंधन कुब्जा सहारे॥
तुम तो...

कार्तिक में सखि कित गए मोहन,
लागे अगहन अंगन तन फूँके।
पौष में भी मोहन घर नहीं आये,
माघ भरी जाड़े के मारे॥ तुम तो. ...

बीत गए बारह मास हमारे, किनसे कहूँ, दुःख कौन हरै ये?
प्रभु के दरस बिन चैन न आवै,
अब तो प्रभु घर आऔ हमारे॥'' तुम तौ.

हे प्रियतम्! आप तो दूसरे स्थान को चले गये। अब बताओ कि हमारे ये बारह महीने कैसे कटें? देख सहेली! फागुन में होली खिलती है, चैत में जंगल-जंगल हर वृक्ष पर नये पल्लव (पत्ते) आ जाते है। वैशाख में बैरिन धूप पड़ती है और जेठ तपता है तो दिन रात व्याकुलता रहती है। इन सभी में पति याद आते हैं

आषाढ़ आते ही बादल छा जाते हैं सावन मास में घनघोर गर्जना होती है। भादों में सारे तालाब-पोखर भर जाते हैं। क्वार में भी जैसे कृष्ण, कुब्जा के बंधन में थे ऐसे ही पति भी कहीं बधे रह गये। सभी प्रसंगों में पति याद आये।

कार्तिक में भी पति जाने किधर चले गये। अगहन आया तो, कामाग्नि शरीर को जलाने लगी। पूष में भी मोहक पति घर नहीं आये। माह में तो जाड़े के कारण, ठण्ड से मरती रही। पति याद आते रहे।

बारहों महीने बीत गये। किससे कहूँ, इस दुःख को कौन दूर कर सकता है? पति परमेश्वर के दर्शन के बिन चैन नहीं आता। हे प्रभु! अब तो घर आ जाओ।

घौला कुआ की माननीया घंटी जी, बचपन में जो बारहमासी गाती थीं उसे दसों बार में, बार-बार याद करके इस तरह लिखाया-

श्रीकृष्ण की बारहमासी

श्री कृष्ण के बिना राधिका, ठाड़ी गश खावै।
बरसन लग्यौ असाढ़, पपैया कैसौ चिल्लावै॥
भयौ अब वृंदावन सूनौ।
बिना पति मद मोय सतावै दिन-पै-दिन दूनौ॥
सखी! मेरे मन कूँ ना भायौ।
जाय बसे मथुरा में, श्याम कुब्जा नें बिरमायौ॥
भभक रई श्याम बिना छाती। लल्लू भजना कहैं,
जुरैं नाय घर में दिया बाती॥1॥

सावन *महीना लग्यौ, पपैया बोल रह्यौ बोली।*
बिना पिया, महाराज! खाय लेऊँ कुचला की गोली॥
झूला पड़ गए बागन में। कैसे करूँ सिंगार,
पिया नहिं आए सावन में॥
बरस गए मेह बड़े भारी। मोर रए किलकार,
कूक गई कोयल अति प्यारी॥
तड़फ रहे श्याम बिना नैना। होय सैंमरी,
चामर-बूरौ घर-घर में बहना॥2॥

भादौं *महीना लग्यौ सखी सुध मोहन की आती।*
ब्रजपति श्री घनश्याम, न भेजी आज तलक पाती॥
पपैया पिऊ पिऊ बोलै।
देऊँगी पंख मरोड़ पजारौ बागन में डोलै॥
घटा उठि आई कारी-कारी।
जनमाठें कूँ आज उपासे सिगरे नर-नारी॥3॥

क्वार *कनागत लगे तो सुनकै नौते नायँ पंडा।*
नौ-दुरगा मैं कैसे पूजूँ, पीया घर में नायँ॥
न मैंने दान करी पाई। क्वार दशहरा,
नायँ सखी मैं जमना में न्हाई॥4॥

कातिक *महीना लग्यौ, दिवारी पूजें नर-नारी।*
कैसै पूजूँ सोरति, घर में ना हैं बनवारी॥
सखी मेरौ करियो निस्तारौ। तब आवै संतोष,
मिलै मोय मोर मुकुट वारौ॥
सखी दिन रात कटत ना है। कित में जाय समायं,
सहेली धान फटत ना है॥
कृष्ण की उल्टी रीती हैं राधा गोपी छोड़,
करी कुबजा ते प्रीती है॥5॥

अगहैन *महीना लग्यौ, सखी सुध प्रीतम की आई।*
चलै सुरैरा ब्यार, देह मेरी थर-थर थराई॥
सखी मोय ब्हौत लगै जाड़ौ। नंद-दुलारे बिना,

न तन पै कपड़ा है गाढ़ौ॥
विपत नायँ जाय बखानी है। पेड़ रए मुरझाय,
रोय रए पंडित ग्यानी हैं॥
पसु अरु पक्षी घबड़ाये। क्यों आनंद सिद्ध श्याम,
आज मथुरा ते नहिं आये॥
जाय कै उनकूँ समझैयो। हमरी बिपता सुना,
संग में उन्हें लिवा लइयो॥6॥

पूष *महीना लग्यौ, सखी अब ब्यार चलै सीरी।*
देखत रहि हूँ वाट, फिकर में पड़ गई हूँ पीरी॥
सूख गयौ कंचन सौ चोला।
उस दिन रोऊँ, सोच कृष्ण कौ फूट्यौ अनमोला॥
न आवै मोकूँ घासानी। बदन गयौ कुम्हलाय,
बरस गयौ नैनन ते पानी॥
याद मोय आवै साँवरिया। ठंडे है जाय नैन,
मिलै मोय कान्हा छलबलिया॥7॥

माह *महीना लग्यौ, निवाए जाड़े हैं आए।*
मोर मुकुट बंसीवारे के, दरसन नहिं पाए॥
गाए रए होरी नरनारी। बाजत ढोल मृदंग,
बाज रई ढोलक अति प्यारी॥8॥

फागुन *महीना लग्यौ, सखी अब घर-घर में होरी।*
उड़त गुलाल लाल भए बदरा, नाँच रहीं गोरी॥
नाच रए सब गोपी ग्वाला। रंग घोर का करूँ, सखी!
घर ना हैं नँद लाला॥9॥

चैत *महीना लग्यौ, सखी अब पूजें नौदुरगा।*
होन लगे स्नान, बोल जाय मोर भए मुरगा॥
सखी मैं जमना में न्हाऊँ। काल न बैरी खाय,
सखी मैं कैसे मरजाऊँ॥
फटै नायँ पत्थर कौ सीनौ। मरू जहर-विष खाय,
श्याम बिन पल भर नहिं जीनौ॥10॥

लग्यौ मास ***बैसाख****, सखी अब गरमी अति भारी।*
बादल उड़ गए हाल, मेह की बूँद नहीं डारी॥
खबर ले जल्दी बनवारी। गाय रहीं डकराय,
सूख रई घास तलक न्यारी॥
हमारी डूब चली नैया। नंद - जसौदा कहैं,
हमारे घर ना आये छैया॥11॥

जेठ महीना लग्यौ, राम ने गरमी अति गेरी।
पंखा लेऔ हाथ, सखी अब ब्यार करौ मेरी॥
पड़ रई गरमी अति भारी। ऐसौ मोकूँ आयौ पसीना,
भीज गई सारी॥
सखी अब जो कछु दुःख सहौ।
राधा गोपी छोड़ सखी, अब कुब्जा कृष्ण कहौ॥12॥

जैठ लौंद *कौ लग्यौ, देह मेरी गरमी तै सूखै।*
ब्हौत दिना कौ प्यासौ पपैया, बिरथा में कूकै॥
अबई ना आए गिरधारी। जेठ दशहरा न्हाऊँ,
सखी मैं जमना में प्यारी॥
तड़फती मोहन ने घोड़ी।
सिरी कृष्ण की राधा जीते बिछुड़ गई जोड़ी॥
राधिका प्राणन कूँ खौवै। लल्लू भजना कहै,
कृष्ण के दरसन कूँ रोवै॥13॥

भगवान श्री कृष्ण के विरह में, राधा खड़ी-खड़ी होश खो रही हैं। **आषाढ़** में बादल बरसने लगे हैं। पपैया पिऊ-पिऊ चिल्ला रहा है। राधाजी कहती हैं कि अब वृंदावन सूना हो गया है और बिना पति के, मुझे यह मद दिन-प्रति-दिन दुगना सता रहा है। हे सखि! (उनका जाना) मेरे मन को अच्छा नहीं लगा हैं श्याम को कुब्जा ने बहका दिया है जिससे कि वे मथुरा में जाकर, वहीं पर बस गये हैं। श्याम के बिना मेरी छाती जल रही है। लल्लू भजना कहते हैं कि उनके बिन, घर में दीपक की बत्ती भी नहीं जलाई जाती। अंधेरा रखती हैं ॥1॥

सावन का महीना लग गया। पपैया पिऊ पिऊ रट रहा हैं। प्रियतम राज के बिना तो (इच्छा होती है कि) कुचला की गोली ही खा लूँ। बागों में झूले पड़ गये हैं। मैं श्रृँगार कैसे करूँ क्योंकि पिया प्यारे तो सावन में भी नहीं आये। बड़ी जोर की वर्षा हुई हैं मोर कूक रहे हैं और कोयल भी बहुत मीठी कूक रही है। श्याम सुंदर के बिन मेरे नेत्र तरस रहे हैं। हर घर में सैमई-बूरा और चावल बूरे के भोजन हो रहे हैं ॥2॥

सखि! **भाद्रपद** मास लग गया। मोहन मुरली वाले की याद आती है। ब्रज के रखवारे घनश्याम ने आज तक चिट्ठी भी नहीं भेजी है। पपीहा कैसा पिऊ पिऊ बोलकर उनकी याद दिलाता है। यह दिल को जलाने वाला, बागों में घूम घूमकर चिढ़ाता हैं। मैं इसके पंख मरोड़ दूँगी। काली घटा उठ रही है। आज श्रीकृष्ण जन्माष्टमी को तो

सारे स्त्री पुरूष व्रत रखे हुए हैं ॥3॥

क्वार में कनागत (श्राद्ध पक्ष) लगे यह सुनकर भी मैंने ब्राह्मणों को बुलाकर जिमाया नहीं। जब पति ही घर में नहीं है तो फिर मैं नव-दुर्गा को कैसे पूजूँ? मैंने पाई तलक भी दान नहीं की। कुछ भी मन ही नहीं कर रहा है। क्वार का विजयदशमी पर्व आ गया किंतु मैं जमुना नदी तक में भी नहीं नहाई ॥4॥

कार्तिक महीना आ गया। स्त्री पुरूष दीवाली पूजन कर रहे हैं। जब घर में वनवारी कृष्ण ही नहीं है तो मैं लक्ष्मी पूजन क्या करूँ? सखी! कुछ मेरा रास्ता कर जब मुझे मोर मुकुट वंशी वाला मिलेगा, तब ही संतोष आयेगा। सहेली! मेरे रात और दिन काटने से भी कटते नहीं बिताये बीतते नहीं। यह धरती तो फटती नहीं, मैं कहाँ जाकर समा जाऊँ, किसमें डूब जाऊँ? कृष्ण की तो बड़ी ही उलटी रीति है कि उसने (मुझ) राधा गोपी को छोड़कर, कुब्जा से प्रीत की है ॥5॥

अगहन का महीना लग गया। सखी! प्रियतम की याद आती है। ठण्डी हवा चलने लगी है कि जिससे मेरा शरीर थर-थर काँपने लगा है। सखि! मुझे बहुत ठंड लगती है। नंद के दुलारे बिना, मेरे शरीर पर कोई नया मोटा वस्त्र भी नहीं है। मुझ पर जो विपदा है उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। पेड़ (तक) तो मुरझा गये हैं और ज्ञान वाले पंडितगण तक भी रो रहे हैं। पशु और पखेरू तक भी घबड़ा रहे हैं। आनंद घन, श्यामसुंदर आज तक भी मथुरा से क्यों नहीं आये? सखि! तू जाकर उनको समझाना और हमारी कठिनाई को सुनाकर उन्हें साथ ही लिवा लाना ॥6॥

सखि! **पूष** का महीना लग गया। ठंडी तीखी हवा चलती है। जब से उनकी बाट देख रही हूँ कि चिन्ता में पीली पड़ गई हूँ। सोने जैसा चमकता यह शरीर भी सूख गया है। कृष्ण के अनमोल बोलों को जिस दिन भी याद करती हूँ उसी दिन रो पड़ती हूँ। मुझे चैन नहीं आता। मेरा मुँह कुम्हला गया है और आँखों से आँसू बरस रहे हैं। मुझे उस साँवले सलौने की सूरत याद आती है यदि वह छल करने में बलवान मुझे मिल जाये तो मेरे नयन ठण्डे हो जायें ॥7॥

माह महीना लग गया। जाड़े भी हल्के होने को हैं किंतु मोर पंख के मुकुट वाले उस मुरली मनोहर के दर्शन नहीं मिले हैं। बसंत पंचमी से ही नर-नारी होली के रसिया गाने लग गये हैं। ढोल मृदंग बज रहे हैं और ढोलक भी बहुत ही प्यारी बज रही है ॥8॥

फागुन का महीना लग गया। सखी, प्रत्येक घर में होली हो रही है। गुलाल उड़ रही है। बादल भी लाल हो गये हैं। महिलाएँ नाच रही हैं इतना ही नहीं तो सभी गोपी-ग्वाल नाच रहे हैं। जब घर में नंद कुमार नहीं है तो मैं रंग घोलकर क्या करूँ ॥9॥

चैत्र का महीना लग गया। सखियाँ नौ-देवियों का पूजन कर रही हैं। सुबह होते ही मुर्गा बोलने लगता है तो सब नहाते हैं मैं भी यमुना नदी में स्नान करती हूँ। काल भी मेरा बैरी हो गया है जो मुझे खाता नहीं। अब बता सखि! मैं किस तरह मर जाऊँ। मेरा हृदय भी पत्थर का है जो फटता नहीं। मैं तो अब कोई जहर खाकर मरूँगी। मुझे श्यामसुन्दर के बिना क्षणभर भी नहीं जीना है ॥10॥

वैशाख मास लग गया। अब भारी गरमी पड़ेगी। बादल जरा दिखकर के ही उड़ गये और मेह की एक बूँद भी नहीं डाल गये। हे वनवारी कृष्ण! हमारी शीघ्र सुनलो। गायें चिल्ला रही हैं। घास तक भी सूख गई हैं हमारी नाव भी अब डूबने को ही है। नंद-बाबा और यशोदा मैया भी यही कहते हैं कि कुँवर घर नहीं आया ॥11॥

ज्येष्ठ मास लग गया। रामजी ने बहुत गर्मी कर रखी है। सखियो! सब हाथ में पंखा ले लो और मेरी हवा करो। भारी गरमी पड़ रही है। मुझे ऐसा पसीना आया कि साड़ी तक भीग गई। सखियो! अब जो कुछ भी दुःख है उसे सहन करो और राधा-कृष्ण छोड़कर अब कुब्जा-कृष्ण कहा करो ॥12॥

अधिक मास जेठ लग गया। मेरा शरीर गर्मी से सूख रहा है। बहुत समय से प्यासा पपीहा, बेकार में ही कूक रहा हैं अभी तक भी गिरधर कृष्ण नहीं आये हैं। जेठ मास के गंगा दशहरा पर मैं प्यारी जमुनाजी में नहा रही हूँ। मुझे मोहन ने तड़फता छोड़ दिया है। यह समझो कि अब तो राधा-कृष्ण की जोड़ी टूट गई है। अब राधिका प्राणों को छोड़ देगी। लल्लू भजना कहते है कि श्री राधाजी, कृष्ण जी के दर्शनों के लिए व्याकुल होकर रोती हैं ॥13॥

आज से दस वर्ष पहले, जब बारहमासी गायन का बहुत अधिक प्रचलन था। तब लिखने की शीघ्रता, नई रचना प्रस्तुति की शीघ्रता के विचार से किसी कथा को, मात्रमाह का नाम प्रयुक्त करते हुए ही, बारहमासी गाथा का रूप दे दिया जाता था। माननीय शिवदेई जी बंसल ने, याद कर करके, भरत की बारहमासी सुनाई। भले ही अपनी युवावस्था से गाती रही थीं किंतु इकहत्तर वर्ष की उम्र में, दस वर्ष पूर्व के गीत को याद करना, लिखना कठिन तो है ही।

भरत की बारहमासी

चैत *पाछले पाख, रामनवमी कों जन्म लियौ।*
अवधपुरी सुखधाम, सखी जुड़ मंगलाचार कियौ॥
खबर जब दशरथ नें पायी। दिये दान गजराज,
गऊ दिन थोड़े की ब्याई॥
सभा सब फूलन में छाई। करम लेख ना मिटै,
करौ तुम लाखों चतुराई॥
हरीहर सुमरौ रे माई। भजने को सियाराम,
तिरन को है गंगा भाई ॥1॥
लागत ही ***वैशाख,*** *कैकई बाबरौ कर डारौ।*
राम-लखन वनवास, भरत को गद्दी बैठारौ॥
कुमति ने कैसौ जोर दियौ।
तीन लोक के नाथ राम को वनवासी कीयौ॥सभा. ...॥2॥

जेठ *कहें जुड़ पंच, भरत कों गद्दी बैठारौ।*
भरत कहै कर जोर, नाथ मोहे गर्दन मत मारौ॥
सरैना बातन में जाए। हम तौ उनके दास,
राम अयोध्या के राजा हैं।
बात ये सबके मन भाई। करम लेख ..... ॥3॥

आषाढ़ *आसा राम मिलन की, मन में लाग रही।*
राम बताऔ कौन बन ढूँढें, भरत ये पूछ कही॥
नगर के सब ही नर-नारी। रथ-घोड़ा-गजराज,
भरत संग भीड़ भई भारी॥4॥

सावन *भरत भील सें भेंट, भक्त जान मन में।*
कंद-मूल-फल तोड़, भरत को भेंट धरी वन में॥
सभा सब. ... ॥5॥

लागौ ***भादों*** *मास लोग सब अगुआ कर दीने।*
काशी प्राग राम के सबनें दर्शन जा कीने॥
नदी अब सागर कूँ धाई। करम लेख. .... ॥6॥

क्वार *करी मेहमानी, भरत ने पूँछी कुशवलता।*
हाथ जोड़ मैं दऊँ परिकम्मा, कौशल्या माता॥
हमारौ जीवन सफल भयौ।
इतनी बात सुनी, मुनिवर ने आशीर्वाद दियौ॥सभा. ..॥7॥

कातिक *कूच, प्राग में भेंटे, भक्त जान मन में।*
वल्कल चीर जटा पर, सोहें, राम लखन वन में॥
भरत चरनन में जाय पड़े। राम उठाये, उर जब लाये,
नैनन नीर भरे॥
भरत मेरे भइया सुखदाई। करम लेख. ... ॥8॥

अगहन *बारम्बार भरत कों रघुवर समुझामें।*
भरत लौटकर जाऔ, राज तुम करौ अयोध्या में॥
लोग सबही सुख पायेंगे। चौदह बरस बीत जामें,
तब हम हू आमिंगे॥
भरत दिए ऐसे समुझाई। करम लेख. ... ॥9॥

पूष *मास सियाराम लखन संग भीड़ गई भारी।*
जनक, जनकपुर पहुँचे, अयोध्या भरत गए हारी॥
खड़ाऊँ गद्दी धर दीनी।
रामचंद्र तें कठिन तपस्या भरतजी नें कीनी॥
बड़ाई याही में पाई। करम लेख. ... ॥10॥

माह *महीना लगे, रामते रावण वैर कियौ।*
ऐसी बुद्धि फेरी रामने, सीता हरण कियौ॥
सभा सब फूलन में छाई। करम लेख. ... ॥11॥

फागुन *मास हरी जब सीता, रावण वध कीयौ।*
रावण दीनों मार, राज विभीषण कों दीयौ॥
राम अयोध्या में आये। मात कौशल्या करी आरती,
सखि मंगल गाये॥
भरत कीई बारह मासी। जो कोई गावै, गाय सुनावै,
कटै जनम फाँसी॥सभा. ... ॥12॥

वृद्धा माता शिवदेई जी ने अपने पोते नितिन को सुनाकर उससे लिखवाया था। पुनः उनसे मिलकर सही करवाया, समझा तो भावार्थ कुछ इस तरह समझ आया।

चैत्र के पिछले पखवाड़े में अर्थात् शुक्ल पक्ष में, भगवान श्रीराम ने, नवमीं को जन्म लिया। अवधपुरी सुख का धाम बन गई। सखियों ने मिलकर मंगल गीत गाये और मंगल आचरण किये। जब दशरथ जी ने यह समाचार पाया तो उन्होंने हाथी और कुछ ही दिन पहले ब्याई हुई गायें दान में दी। सभा में खुशियाँ ही खुशियाँ छा गयी किंतु भाग्य में जो कुछ लिखा है वह नहीं मिटता, चाहे तुम अनेक चतुरता के कार्य करो। अरे बंधुओ! भगवान विष्णु और श्री शंकर जी का स्मरण करो। भजन करने योग्य श्री सीताराम जी हैं और तारने वाली गंगा माता है ॥1॥

वर्षों बाद, एक बार **वैशाख** के महीने में, कैकेई ने सभी को बावला बना दिया। कहने लगी कि राम लक्ष्मण को वन भेजो और

भरत को राज गद्दी पर बैठाओ। दुबुर्द्धि ने कैसा प्रभाव दिखाया कि तीन लोकों के स्वामी श्रीराम को वनवासी बना दिया ॥2॥

जेठ के महीने में पंच लोग इकट्ठे होकर भरत को राजगद्दी पर बैठाने को कहने लगे तो भरतजी ने हाथ-जोड़कर कहा कि हे पंच परमेश्वर! मेरी गर्दन पर वार मत करो। बातों से ही काम नहीं चलेगा। हम तो श्रीराम के सेवक हैं और अयोध्या के राजा तो श्रीराम ही हैं। यह बात सभी को अच्छी लगी किंतु जो भाग्य में लिखा है वह तो मिटता नहीं ॥3॥

अषाढ़ में, राम से मिलने की आशा सबके मन में लग रही थी। भरत ने यह पूछा कि बताओ, श्रीराम को कौन से जंगल में ढूँढ़ें। वे कहाँ होंगे? शहर के सारे स्त्री और पुरूष, रथ, घोड़े और हाथियों पर सवार हो भरत के पास, भारी भीड़ के रूप में इकट्ठे हो गये ॥4॥

सावन में सभी के साथ, भील (केवट) से मिले। उनको श्रीराम का भक्त समझा। केवट जी ने कंद-जड़ें और फल तोड़कर, उसी जंगल में श्री भरत जी को भेंट के रूप में रखे ॥5॥

भादों का महीना लगा तो केवट द्वारा बहुत से लोग भरत जी के आगे-आगे चलकर रास्ता दिखाने को लगा दिये गये। काशी जी से पहले प्रयाग में ही सबने श्रीराम के दर्शन पा लिये। ऐसा लगा मानो समुद्र से जा मिली हो ॥6॥

श्रीराम द्वारा भरत के आतिथ्य सत्कार में ही **क्वार** बीत गया। भरत जी ने भी उनकी कुशलता पूछी। कहने लगे-मैं हाथ जोड़कर आपकी परिक्रमा करता हूँ। कौशल्या ही हमारी माता हैं। हमारा जीवन, आपके दर्शनकर सफल हो गया है। ऐसी सुंदर मधुर बातें सुनकर, ऋषियों ने उन्हें आशीर्वाद दिये ॥7॥

कार्तिक में, वापिस जाना है इस विचार से प्रयाग में ही भरतजी, फिर से श्रीराम जी से मिले। राम जी भक्त की बात मन में जान गये। जटाओं के साथ साधुओं जैसे वस्त्र, वन में श्रीराम लक्ष्मण बहुत सुंदर लग रहे थे। भरतजी राम के चरणों में गिर पड़े। राम ने उन्हें उठाया, हृदय से लगाया तो आँखों से प्रेम के आँसू झरने लगे। कहने लगे-मेरे भरत भइया! तुम बहुत सुख देने वाले हो किंतु भाग्य का लिखा तो नहीं मिटता ॥8॥

अगहन में श्री रघुनाथजी, भरत को बार बार समझाते हैं कि भरत! तुम वापिस जाओ और अयोध्या में राज करो। सब ही लोग सुख पायेंगे। जब चौदह बरस बीत जायेंगे तब हम भी आ जायेंगे। श्रीराम ने, भरत को इस तरह समझा दिया कि भाग्य का लिखा मिटता नहीं ॥9॥

पूष के महीने में, राम-सीता और लक्ष्मण जी के पास से जो भारी भीड़ थी वह चली गई क्योंकि जनक जी तो जनकपुर पहुँच गये और अंत में हारकर श्री भरतजी अयोध्या चले गये। उन्होंने श्रीराम जी की पादुका, गद्दी पर रख दीं और स्वयं ने श्रीरामजी से भी अधिक तप-व्रत किये। इस प्रकार से उन्होंने बड़प्पन पाया। सच कहा है - भाग्य का लिखा मिटता नहीं॥10॥

वर्षों बाद **माह** महीना आया तो रावण ने राम जी से वैर साधा। राम जी ने उसकी ऐसी बुद्धि बदल दी कि उसने सीता-हरण कर डाला। बसंत में बाग-बगीचों में बसंत फूल रहा था किंतु भाग्य का लिखा क्या मिटता है ॥11॥

तो **फागुन** मास में जब रावण ने सीता का हरण किया तो श्रीराम जी ने रावण को मार डाला। और राज्य विभीषण को दे दिया। श्रीराम जी सभी के साथ अयोध्या में आये। माता कौशल्या आदि ने आरती की और सखियों ने मंगल गीत गाये। यह भरतजी की बारहमासी- जो कोई इसे गाता है, गा-गाकर औरों को सुनाता है उसके जन्म-मरण का बंधन समाप्त हो जाता है। सब जगह फूल ही फूल हैं, आनंद ही आनंद हैं चाहे अनेक चतुरता के कार्य करें किंतु भाग्य का लिखा मिटता नहीं। अरे बंधुओ। भगवान विष्णु व शंकर जी का स्मरण करो। भजन हेतु श्रीरामजी हैं। तारने वाली गंगा माता हैं ॥12॥

बारहमासी लोकगीत, विभिन्न लोक विधाओं में लिखे गये हैं। ग्राम-कनवाड़ा श्री सुघड़ सिंह गुर्जर से प्राप्त दो बारहमासी इस प्रकार हैं -

राम की बारहमासी -

चैत *महीना लग्यौ, राम तेरौ आज जनम दिन आयौ।*
कहा करूँ, कित जाऊँ लाड़ले, सोच याई कौ छायौ॥1॥

लागत ही ***वैसाख****, राम तेरे तरस रही दरसन को।*
करती सब सिंगार लाड़ले, भेज दियौ वन खंड कों॥2॥

जेठ *मास की परै धौपरी, परें जान के लाले।*
कोमल चरन फिरें वन-वन में, पामन पर जायँ छाले॥3॥

अषाढ़ *महीना सब कूँ प्यारौ, तोय प्यारौ राम लग्यौ ना।*
राम बिना नृप प्रान त्याग गए,
बाऊ कौ फिकर कर्यो ना॥4॥

*सीता बेटी जनक भूपधर, झूलैही **सावन** में।*
रेशम डोरी, चन्दन पटली, तरस रहे बागन में॥5॥

***भादों** घटा उठैं अति भारी, दामिनि दमकैं तरकैं।*
राम-लखन मेरे भीजत हुंगे, अब नीचें तरवर कें॥6॥

***क्वार** महीना पुजै दशहरा, मेरौ सबरौ नगर सजै हो।*
राम बिना मोय फीकौ लागै, चन्दा बिन रैन लगै ज्यों॥7॥

***कातिक** न्हाऊँ, बिप्र जिमाऊँ। पूजूँ लछमी तोय।*
धूप-दीप नैवेद चढ़ाऊँ, मेरे राम-लखन घर होयँ॥8॥

***अगहन** महीना मावठ परती, हे प्रभु, दीनानाथ।*
बिना भवन के कैसे जीयें, सिया-लखन-रघुनाथ॥9॥

***पूष** महीना आयौ जाड़े कौ, ना हैं संग उढैया।*
तोसिक-तकिया, गिलम-गेंडुआ, सूने परे बिछैया॥10॥

***माह** महीना इतनौ सीतल, अगनी बेगि बरै ना।*
सीतलता धरनी में आय जाय, मग में पैर परै ना॥11॥

***फागुन** मास निवायौ आयौ, मेरे दिल कूँ धीर धरै ना।*
चौदह वर्ष तौ बड़े कठिन के, इतनौ कष्ट झिलै ना॥12॥

माँ कौशल्या कहती हैं कि प्रिय राम! चैत्र का महीना लग गया। आज तेरा जन्मदिन भी आ गया। मैं क्या करूँ, किधर जाऊँ (तुम तो वन में हो) प्रिय पुत्र! इसी बात की चिन्ता लग रही है॥1॥ वैशाख लगते दिन से ही, हे राम! मैं तेरे दर्शन के लिए तरस रही हूँ। मैं तेरा पूरा श्रृँगार करती पर तुझे तो वन-खण्ड को भेज दिया गया॥2॥ जेठ मास में कैसी तेज दोपहरी पड़ती है कि जीवन बचाना कठिन होता है। ऐसे में तुम्हारे कोमल-मुलायम पैर, जंगल-जंगल फिरते हैं, नरम पावों में छाले पड़ जाते होंगे ॥3॥

कौशल्या कहती है कि अरी कैकेई! अषाढ़ का महीना तो सबको प्रिय होता है, पर तुझे राम प्यारा नहीं लगा? राम के बिना, राजा दशरथ ने भी जीवन का त्यागकर दिया किंतु तूने उसकी भी चिन्ता नहीं की॥4॥ सीता बहू अपने पिता श्री राजा जनक जी के घर, श्रावण के महीने में झूलती थी। लेकिन अब तो रेशम की रस्सी और चन्दन की पटली, सब बागों में सीता जी के लिये तरस रहे हैं॥5॥ भादों में भारी-भारी घटाएँ उठती हैं, बिजली चमकती हैं, कड़कड़ाती है। अरी कैकेई! मेरे राम लक्ष्मण, पेड़ के नीचे खड़े भीगते होंगे ॥6॥

क्वार के महीने में दशहरा (पर शस्त्र) पूजन होता है, मेरी सारी अयोध्या सजती थी। अब राम के बिना मुझे यह सब फीका-फीका लगता है, कि जैसे चन्दा के बिन रात्रि सूनी लगती है॥7॥ कार्तिक में पूरे मास, बड़े सबेरे स्नान किया, ब्राह्मण भोजन कराये। हे लक्ष्मी जी! मैं आपका पूजन करती हूँ। धूप जलाती हूँ, दीपक जलाती हूँ, भोग लगाती हूँ। चाहती हूँ कि मेरे राम लक्ष्मण घर पर आयें॥8॥ अगहन के महीने में मावठ रूपी बरसात होती है। हे प्रभु! हे दीनानाथ! सीता के साथ लक्ष्मण और रघुनाथ जी ऐसी बरसात में बिना भवनों के, जंगलों में पेड़ों के नीचे कैसे जियेंगे ॥9॥

पूष महीना आ गया। वह तो ठंड का महीना है और उनके पास ओढ़ने के चादर कम्बल भी नहीं हैं। यहाँ पर मसनद तकिये गिलम गडुए और सारे बिछौने सूने पड़े हैं॥10॥ माह का महीना तो इतना ठंडा कि आग भी जल्दी से जलती नहीं। सारी ठंडक धरती में ही आ जाती है कि रास्ते पर पैर भी नहीं रखा जाता॥11॥ फागुन मास कम गर्मी का आया है किंतु मेरे हृदय को धीरज नहीं बँधता। चौदह वर्ष तो बहुत कठिनाई के होंगे। उनसे इतना दुःख तो सहन न होगा ॥12॥

विरह की बारहमासी

अब तक नायँ आए चितचोर। दिन तौ निकसि गए,
बरस गुजरि गए॥टेक॥

चैत महीना मेरौं चिंता में निकसि गयौ।
बैसाख साख घनघोर॥अब. ...

जेठ महीना मैं तो झांकन नें झकोरी।
अषाढ़ करे पपैया सोर॥ अब. ...

सावन महीना मेरौ सूनौई निकसि गयौ।
भादौं घटा उठै घनघोर॥ अब. ...

क्वार महीना मैंने विप्र जिमाए।
मैं तौ कातिक न्हाई भोर॥अब. ...

अगहन महीना है जाड़े कौ। पूष में उठैं हिलोर॥अब...

माह महीना मन मारि-मारि रही।
फागुन रंग घर लियौ घोर॥ अब. ...

मेरे मन को चुराने वाले पिया प्रीतम अब तक भी नहीं आयें। केवल दिन ही क्या निकल गए, वर्ष तक भी बीत गए।

चैत्र का महीना तो चिंता करते करते ही बीत गया। वैशाख में भारी फसल हुई, उसमें लग गई। अब तक भी मन को हरने वाले नहिं आये।

जेठ के महीने में मुझे लू-झकरों ने झकझोर डाला। अषाढ़ में पपीहा शोर करता हैं पिऊ-पिऊ बोलती है किंतु पिया जी तो अब तक भी नहीं आए।

सावन का झूलों का महीना तो मेरा सूना ही निकल गया और भादौं में डरावनी घनघौर घटा उठती हैं पर हृदय को हरने वाले पति नहीं आये॥

क्वार के महीने मैंने ब्राह्मणों को निमंत्रित करके जिमाया और कार्तिक में, मैं सुबह तीरथ में नहाई तब भी चित चोर प्रिय पति अब भी नहीं आये।

अगहन का महीना तो है ही ठंड का। वह भी मैंने अकेले ही बिताया पूष में हृदय में याद की हिलोर उठती रही पर वे नहीं आये॥

माह का महीना तो मैं मन मार-मारकर रह गई। फागुन में मैंने रंग भी घोलकर रख लिया किंतु मन को हरकर ले गये पतिदेव अब भी नहीं आये। केवल दिन ही नहीं निकल गये बल्कि वर्ष तक भी बीत गये॥

बारहमासी लोकगीत दोहे के रूप में भी मिलते हैं। कुटी मोहल्ले के हरि धोबी की बहिन जी ने एक बारहमासी मेरी पत्नी संतोष को इस तरह लिखाई -

दोहों में बारहमासी

जेठ तपै, धरती तपै मंक उड़ै चहुँ ओर।
दिवस तपै संध्या तपै औ भोर ॥1॥

हम पापिन भगती फिरैं, कर जोगी को भेस
असाढ़ आसा लग रही री बहना, गये गुरून के देस ॥2॥

सावन सखियाँ जुर मिलीं री, बहना करें सिंगार।
झूला झूलैं वे सखी री कहना जिनके प्रीतम पास ॥3॥

भादों में जल थल ऊभ गये री बहना गगरी लेत झकोर।
गगरी की झलक सुहावनी री बहना लेत राम कौ नाम ॥4॥

क्वार में पितर समोगती, कागा नौत जिमाये।
कार्तिक में काक बिडारती री बहना उड़ लसकर को जाये॥
उड़ लसकर को जात है रे कागा,
मेरे प्रीतम की सुध लाये ॥5॥

अगहन में अगर घड़ामती, रेशम डोर पुवाये।
पैर दिखामें राधा वे सखी जी, जिनके प्रीतम पास ॥6॥

पूष में जाड़े अति पड़े री बहना कोठे में खाट बिछाये।
रजिया भरावें वे सखी जिनके प्रीतम पास ॥7॥

माह में जाड़ौ कम पड़ैरी बहना चूल्हे में गोढ़ खँगार।
जाड़ौ मिटामें वे सखी जिनके प्रीतम पास ॥8॥

फागुन में फगुआ खेलते री बहना खेलै सब संसार।
होली खेलै राधा वे सखी, जिनके प्रीतम पास ॥9॥

चैत में चिन्ता लग रही, चिंता भरौ शरीर।
चिन्ता मिटामें वे सखी, जिनके प्रीतम पास ॥10॥

वैशाख में गर्मी अति पड़ैरी बहना कोठे ऊपर खाट बिछाये।
बिजनी ढुरामें वे सखी, जिनके प्रीतम पास ॥11॥

जेठ का मास तप रहा है, धरती भी गरम हो रही, चारों ओर धूल उड़ रही है। दिन तपता है, साँझ तपती हैं, रात भी गरम रहती है और सुबह भी गर्मी पड़ती है॥1॥ हम पति से बिछुड़ी हुई (पापिन), साध्वियों जैसा वेश बनाकर घूमती फिरती हैं। आषाढ़ में उनके आने की आशा थी (किंतु शायद गुरू पूर्णिमा पर) वे गुरूओं के आश्रम पर चले गये हों॥2॥ सावन में सखियाँ मिलकर इकट्ठी होती हैं, श्रृँगार करती है। अब झूला तो सखि! वे ही झूलेंगी कि जिनके प्रियतम उनके पास हैं, हम क्या झूलें ॥3॥

भादों में धरती और पानी, दोनों ही वर्षा से दुःखी हो जाते हैं। नदी और कुए लहराते जल में, गागर भी झकोर लेती है। गगरी की चमक बड़ी ही सुहावनी लगती है (क्योंकि बिजली के चमकने पर ताँबा पीतल तेज चमकता है) हम तो तब प्रभु का नाम लेती हैं॥4॥ क्वार में पूर्वजों (पुरखों) का श्राद्ध करती और काग-ग्रास डालती। कार्तिक में कौओं को इसलिए उड़ाती भगाती हैं कि (वे अब तो) उड़कर सेना के क्षेत्र को जाये। (कि जहाँ मेरे प्रियतम गये हैं) और वहाँ से मेरे पतिदेव का संदेशा लायें॥5॥

अगहन में गहनों को बनवातीं और रेशम की डोर में उन्हें पुववाती। उन्हें पहनकर पैर दिखाती (नाचती) तो वे घूमें राधा रानी कि जिनके पति पास हों॥6॥ पूष में ठंड बहुत पड़ती है बहिन! नीचे के पीछे वाले भीतरी कमरे में खाट बिछाते हैं। अब सखी! रजाई तो वे भरायें कि जिनके पति पास हों॥7॥ बहिन! माह में जाड़ा कुछ कम हो जाता है। चूल्हें पर गुलभानी (आटा और गुड़ पानी में

घोलकर, उबालने पर) बनती है किंतु सहेली! जिनके पास में पति हैं, सच में तो जाड़ा वे ही मिटा सकते हैं ॥8॥

फागुन में होली खेलते हैं और बहिन! सारा संसार खेलता है किंतु राधाजी! होली तो वह सखी ही खेलेगी कि जिसके पिया पास हों॥9॥ चैत्र में चिन्ता लग रही है। शरीर अर्थात् मन चिंता से भर गया हैं चिंता तो सखि वे प्रीतम ही मिटायेंगे पर जब वो पास हों तब ना॥10॥ वैशाख में गर्मी खूब पड़ती हैं छत पर खाट बिछाते हैं जिनके प्रियतम पास हैं वे अपने पतियों को पंखा झलकर हवा करती हैं ॥11॥

कामाँ अगमा मोहल्ले अखाड़े के उस्ताद श्री पं. रामजीलाल शर्मा पटवारी जी से बारहमासी के लिए दुबारा मिला तो हाथों हाथ बनाकर यह बारहमासी लिखा दी -

सनेही लीला की बारहमासी

लाग्यौ फागुन मास, गुलालन की भर-भर झोरी।
हिये भरौ उल्लास, नाच रहि ब्रज-मंडल गौरी॥

सखा सलौने नंदगाम के, बरसाने धाए।
लै पिचकारी हाथ रंग की, भानुधाम आए॥
श्याम ने राधा सरबोरी-हिये. ...॥1॥

चंदन-चोबा केसर गागर, भर-भर भवन धरी।
उड़ें अबीर गुलाल अरगजा, रंग की कीच करी॥
चैत चिंता छोरी-छोरी - ...॥2॥

चैत सुदी नौमीं कूँ, प्रगटे जे चारौ भाई।
भरत लखन रिपुदमन, बड़े हैं सबमें रघुराई॥
नगर द्वारे नौहवत घोरी-हिये. ...॥3॥

आय गयौ बैसाख, अखै तृतीया अति सुखदाई।
जेठ मास में गंग-दशहरा, न्हामिंगे भाई॥
पाप की कट जायेगी डोरी λ हियेफ ...॥4॥

उतरत मास असाढ़, गुरू पूजन पूरन मासी।
घर घर ते लै भेंट, चले गुरू पूजन अभिलासी॥
खड़े गुरू सम्मुख कर जोरी. ...॥5॥

सावन तीज सलौने आमें, गामें नारी मल्हार।
भादों कृष्ण अष्टमी कूँ जन्मे श्री कृष्ण मुरार॥
करी घर घर माखन चोरी-हिये. ...॥6॥

क्वार कनागत लगे, जिमामें विप्रन नरनारी।
कार्तिक लक्ष्मी गनपति पूजें, खीलन भरथारी॥
पूज रई गोधन मन भोरी - हिये. ...॥7॥

लाग्यौ माह अगहन, पड़न थोड़ी सरदी लागी।
पूष घुरैरा चलै, भोग रए नारिन बड़ भागी॥
रजाई रूई भरी कोरी-हिये. ...॥8॥

लाग्यौ माघ बसंत, बजें ढप घर-घर में प्यारे।
विप्र रामजीलाल गाय रए रसिया मतवारे।
भरी जिन फूलन की झोरी-हिये. ... ॥9॥

विभिन्न रंगों की गुलालों से अपनी झोली भरते हुए फागुन का महीना लग गया। ब्रज मंडल की महिलाएँ, हृदय में आनंद भरकर नाच रही हैं। नंदगाँव के सुंदर नौजवान बरसाने गये और रंग भरी पिचकारी हाथ में लेकर वृषभानु जी के भवन पर आये। श्यामसुंदर ने राधाजी को रंग से सराबोर कर दिया॥1॥ चंदन, चोबा और केशर के घोल से गागरें भर-भरकर भवन में धर ली गई। अबीर गुलाल और अरगजा उड़ने लगा। रंग की तो कीच कर डाली। किसी को भी चैत की चिंता नहीं है, सभी ने चिन्ता छोड़ दी है ॥2॥

चैत्र शुक्ल पक्ष की नवमी को इन चारों भाइयों का जन्म हुआ। कौन से तो भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न और सबसे बड़े भगवान श्रीराम। शहर के द्वार-द्वार पर नगाड़ों का घोर शोर हो रहा है॥3॥ वैशाख का महीना आ गया। अक्षय तृतीया (आखा तीज) बड़ी सुख देने वाली है। जेठ के महीने में गंगा दशहरा पर भाई वृंद तीरथ में नहायेंगे। इससे पाप की डोर कट जायेगी ॥4॥

अषाढ़ मास उतरते-उतरते गुरूपूजा का पर्व, गुरू-पूर्णिमा आ गया। गुरू पूजन की इच्छा रखने वाले लोग, घर-घर से भेंट लेकर गुरू पूजा के लिए चल दिये और गुरूजी के सामने हाथ जोड़कर खड़े हो गये॥5॥ सावन में हरियाली तीज आती है, राखी का त्यौहार आता है, औरतें मल्हार गाती है। भादों बदी अष्टमी को भगवान श्री कृष्ण का जन्म हुआ था कि जिन्होंने मुर राक्षस को भी मारा था और माखन-चोरी लीला भी की थी ॥6॥

क्वार महीने में श्राद्ध पक्ष लग गया। स्त्री पुरूष ब्राह्मणों को भोजन कराते हैं। कार्तिक में थाली भरकर खील का भोग लगाकर लक्ष्मी और गणेश जी का पूजन किया जाता हैं भोले मन वाली नारियाँ गौधन की पूजा करती और गोवर्धन पर्वत की भी पूजा करती हैं॥7॥ अगहन महीना लगने पर थोड़ी हल्की सर्दी पड़ने लग जाती है। पूष में तेज ठंडी हवा चली है। बड़े भाग्य वाले लोग रमणी-रमण

करते हैं। नयी रजाइयों में नयी-रूई भरवाते है ॥8॥

माह लगने पर बसंत छा जाता है। घर-घर में ढप-ढोल बजने लगते हैं। रामजीलाल शर्मा मस्त होकर यह रसिया गा रहे है जिनकी खुशियों से झोली भरी हुई है ॥9॥

कामाँ और आसपास के क्षेत्र में ही जब बारहमासी लोक-गीतों का अपार भण्डार भरा पड़ा है तो फिर पूरे ब्रज क्षेत्र में इसकी विपुलता की तो कल्पना करना भी कठिन है।

बादीपुरा में ज्ञात हुआ कि भारत की आजादी के समय, बँटवारे पर एक बहुत लम्बी बारहमासी लिखी गई थी, तभी कुछ समय बाद साँचौली में किन्हीं जाटव भाई ने बारहमासी लिखी थी - ये दोनों बहुत प्रचलित हुईं। घनश्याम लिखित 'भोंदनिया की कथा आज घनश्याम सुनाता है'-अभी भी जन-जन की जुबान पर चढ़ी हुई है किंतु असंयोग ही है कि भारी प्रयास के बाद भी पूरी उपलब्ध नहीं हो सकी है। बूढ़े की बारहमासी, रँडुआ की बारहमासी, नल की बारहमासी, बाढ़ की बारहमासी, तीरथराज विमल कुण्ड की बारहमासी आदि अनेक बारहमासी गीत भी उपलब्ध हुए है जो अपूर्णता अथवा इकसर्रा होने (बारह महीनों के न होने) से इस लेख में सम्मिलित नहीं किये गये हैं।

श्री सुघड़ सिंह जी अध्यापक द्वारा लिखित श्रवण कुमार की बारहमासी की एक पूरी सोलह पुस्तिका प्रकाशित हुई थी, तीस वर्ष से भी पहले। मथुरा, कोसी वृंदावन, गोवर्धन आदि में अब भी सड़कों पर लगाए बुक-स्टालों पर बारहमासी की पुस्तकें खूब बिकती हैं तो मेलों में भी इन्हें बेचने वाले खूब कमाई कर ले जाते हैं।

बारहमासी मात्र मनोरंजन का ही साधन नहीं हैं ये तो इतिहास भी संजोये हुए हैं अपने में और भौगोलिक स्थितियों का विवरण भी। जहाँ सैंकड़ों बारहमासी पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुकी हैं वहीं अनुमान है कि हजारों बारहमासी गाँव-गाँव में लोगों की जिह्वा पर बसी हुई हैं। इन सभी को एकत्रितकर प्रकाशित करने के लिए, कठिन प्रयास की आवश्यकता है।

लोक साहित्य के प्रति समर्पित व्यक्तित्व और संस्था से ही इसके लिए अपेक्षा की जा सकती है।

लोकजीवन के बाल-गीत

डॉ. प्रताप सिंह चन्देल

लोकगीत मानव-हृदय की निश्छल एवं सहज अभिव्यक्ति हैं। ये एक ओर जहाँ मनोरंजन के साधन हैं, वहाँ दूसरी ओर संस्कृति के संवाहक भी हैं। मानव जीवन के सारे उतार-चढ़ावों कड़वे-मीठे अनुभवों, जन्म भर के उसासों का या मिलन व प्रेम के नैसर्गिक आनंद का यदि कहीं, सहज ही समाहार है तो वह लोकगीतों में मिलता है।

प्राचीनकाल से चले आ रहे लोकगीतों की अविच्छिन्न परम्परा में बाल-लोकगीतों की विशिष्ट सजधज है। ये बालगीत-उस बाल जीवन की प्रतिच्छवि हैं जो दुनियादारी के झमेलों से दूर, अपने ही सुख-सुविधाओं में मस्त, कभी आत्मविभोर होकर गुनगुना उठता है, कुछ गा उठता है, क्या गाता है? कौन सी भाषा है? क्या भाव हैं उसके? खुद नहीं जानता पर लगातार आत्ममुग्ध गा रहा है। यही आकर्षण है जिससे कि ये गीत आज तक लोकजीवन में पीढ़ी दर पीढ़ी सहज हस्तांतरित होते चले आ रहे हैं और आज भी इनकी अनूठी छवि बरकरार है।

अपने देखे या सुने का स्व-स्तर पर पुनर्मूतन करना बालक की सहज-वृत्ति है, खासकर वे चीजें जो बालक को रूचिकर लगती हैं अथवा जिनसे वह प्रभावित होता है। जिज्ञासावश तदनुरूप बनने या बनाने का प्रयास करता है। उसके इस अनुकरण में न कहीं कृत्रिमता होती है और न कल्पनाशीलता। इस संबंध में उसे सीखने-सिखाने की जरूरत भी नहीं पड़ती। यह तो उस बाल-वृत्ति की स्वाभाविक ग्रहणशीलता का परिणाम है, जो उसे रूचिकर लगा, उसे उसी रूप में अपना लिया, जो नहीं लगा उसे त्याग दिया। लोक में बाल-लोकगीतों का प्रवाह इसी स्वाभाविक ग्रहणशीलता का परिणाम हैं।

बाल-लोकगीतों की अपेक्षा वयस्क लोकगीतों के स्वरूपगत ढ़ाँचे में परिवर्तन अधिक हुआ करता है। कारण कि वयस्क प्रयोक्ता तार्किक एवं बुद्धिवादी होते हैं। परिस्थितिवश ज्यों ही इनके सामाजिक जीवन या चिंतन के क्षेत्र में बदलाव आता है त्यों ही इनके मध्य प्रयुक्त गीतों की शैली, भाषा एवं भावों में परिवर्तन आने लगता है जो लगभग समाज-सापेक्ष परिवर्तित होते चलता है।

लोक जीवन में उपलब्ध बालगीत प्रायः खेल के मैदान में गाये जाने वाले गीतों के रूप में उपलब्ध हैं। चूँकि बालक समूह प्रिय होता है इस कारण अधिकाँश गीत समूह गीत के रूप में प्रस्तुत हैं। पृथक-पृथक खेलों में गाये जाने वाले गीत निम्नानुसार हैः—

(1) एकल गीत— एक या एक से अधिक बालक वर्षा की हल्की फुहार का आनंद लेने के लिए खुले मैदान में अपनी दोनों भुजाओं को फैलाकर लट्टू के समान एक ही स्थान पर चारों ओर घूमते हुए गाते हैं—

घोर-घोर रानी,
चक्का-चक्का पानी

(2) दो के बीच खेल गीत— दो छोटे बच्चे आपस में अथवा कोई बुजुर्ग नन्हें बच्चे के आमने-सामने बैठकर अपने दोनों हाथों से उसके दोनों कान पकड़ लेता है, इसी तरह वह भी उसके दोनों कान पकड़ लेता है। दोनों एक-दूसरे के कान खींचते व आमने-सामने झूलते हुए गाते हैं—

च्याऊँ-म्याऊँ, च्याऊँ-म्याऊँ
मकड़ी के जाल,
कन्हैया रोवय रे।
खिंच गई कान, पड़ गई थप्पड़
बलदाऊ रोवय रे।
फुदुरलवा ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

गीत के अंत में ज्यों ही फुदुरलवा शब्द आता है त्यों ही एक-दूसरे का कान छोड़कर दोनों ताली बजाते हैं।

(3) समूह खेल गीत— चार छः बालक गोल घेरे में बैठकर दोनों हाथों के पंजों को नीचे जमीन पर रख लेते हैं। उनमें से एक बालक सभी के पंजों के ऊपर अपनी अँगुली रखते हुए गाते जाता है। गीत के एक-एक शब्द के साथ हर एक के पंजे को स्पर्श करता है। गीत के अंतिम शब्द भड़ुवा में वह थम जाता है। जिस किसी के पंजे पर गीत का यह अंतिम शब्द आता है, वही बालक अब गीत गाकर अँगुली रखने वाला होता है। यह क्रम चलता रहता है।

अटकन चटकन दही चटाका
लौवा लाटा वन के काटा
बाघ झूलै बघनी झूलै
सावन में करेला फूलै
फूल फूल बंजारी की
बाबा जी की नारी की
बाबा गये दिल्ली, वहाँ से लाये बिल्ली
बिल्ली गयी पूना, वहाँ से लायी चूना
चूना रहा कड़ुवा, पान वाला भड़ुवा।

2. घर के आँगन या समतल मैदान में यह खेल खेला जाता है। इसके लिए आवश्यक है कि खेल के उक्त क्षेत्र के आसपास ऊँची भूमि या चबूतरे हों। न होने पर ईंट-पत्थर आदि रखकर उसे ऊँचा स्थान मान लिया जाता है। सारे बालक गाते हुए किसी एक से गीतमय प्रश्न करते हैं—

एक चना के कितनी दाल? वह उसी तुकबंदी में जवाब देता है— 'दो' पुनः आगे प्रश्न करते हैं— *नदी लैहे या पहाड़,* वह कुछ भी माँग सकता है— मान लिया कि उसने माँगा — 'नदी'। खेल के दौरान नदी का मतलब समतल क्षेत्र एवं पहाड़ का मतलब ऊँचाई वाला स्थान है। चूँकि उसने नदी माँग लिया इसलिए किसी भी बालक को समतल क्षेत्र में नहीं आने देगा, ज्यों ही वे पहाड़ (ऊँचे स्थान) से उतरकर (नदी) समतल में आते हैं त्यों ही वह उन्हें छूने दौड़ता है, वे तुरन्त पहाड़ पर चढ़ जाते हैं। नदी में आकर उकड़ू बैठकर दोनों हाथों को धरती पर थपथपाते हुए चिढ़ाते हुए गाते हैं— *कंडा पाथो कंडा पाथो, दे भौजी मीड़ा।* वह बालक उन्हें छूने के लिए दौड़ता है त्यों ही वे ऊपर चढ़ जाते हैं और गाते हैं :—

छुल्ले री बंदारी की दाई
छुल्ले री बंदारी की दाई

उन्हें छूने के प्रयास में वह ज्यों ही जिस किसी को छूता है त्यों ही उस छुए हुए बालक से पूर्वोक्त ढँग से प्रश्न करते हैं और यही अब सबको छूने वाला बनता है।

3. इस खेल में बच्चे गोल घेरे में उकड़ू बैठकर अपने दोनों हाथों की अँगुलियों को आपस में फँसाकर उसे अर्द्ध सम्पुट बना अपने किसी घुटने के ऊपर चिपकाकर इस ढँग से रखते हैं कि उस सम्पुट में यदि कोई छोटी वस्तु डाली जाय तो वह वस्तु आसानी से अंदर चली जाय लेकिन दूसरा कोई यह भेद न जान सके कि कौन

सी वस्तु अंदर डाली गई है या नहीं। उस घेरे के बाहर एक अन्वेषी बालक खड़ा होता है। घेरे के बीच का कोई भी बालक अपने हाथ में कोई छोटी चीज रखकर प्रत्येक बालक के घुटने से चिपके सम्पुट में बारी-बारी से कोई छोटी चीज को डालने का अभिनय करता है और गाता है–

चुन-चुन मनियाँ बरी के तेल,
खाय सुहारी मीठा तेल।

घेरे के बाहर एक अन्वेषी बालक खड़ा यह देखता है कि उस छोटी सी वस्तु को किसके सम्पुट के अंदर डाल दी गई है, वह यही जानने के लिए खड़ा रहता है। घेरे के बालक अन्वेषी बालक को गीत गाते हुए चुनौती देते हैं कि वह आकर पता लगायें कि उक्त छोटी गुप्त वस्तु किसके सम्पुट के अंदर है–

चुन-चुन मनियाँ बरी के तेल,
खाय सुहारी मीठा तेल
आ रे लाडू पतरी चाट जा

अन्वेषी बालक घेरे के सभी बालकों के पीछे से चक्कर लगाते हुए गाता है–

ये ही चहखों, ये ही चहखों.....बीच खुलाड़ी

प्रत्येक को पीछे से छूकर ये ही चहाखों कहता है और जिसे बीच खुलाड़ी कहकर छू देता है उसे यह माना जाता है कि उसी के पास (सम्पुट) में वह वस्तु है। वह सम्पुट खोलकर सभी को दिखाता है यदि वस्तु उसी के पास मिल गई तो वह बीच खुलाड़ी हो गया अर्थात् अब वह घेरे के बाहर खड़ा हो जायेगा और वस्तु का पता लगाने की भूमिका निभायेगा और जो अभी तक अन्वेषी (बीच खिलाड़ी) था, वह घेरे में शामिल हो जावेगा।

4. कुछ बच्चे एक-दूसरे को पीछे से कसकर कमर पकड़कर गोल घेरे के अंदर संगठित खड़े रहते हैं। एक बालक गोल रेखा के बाहर रहता है जो मुर्गा कहलाता है। खेल के दौरान मुर्गे का यह प्रयास होता है कि गोल घेरे के संगठन में खड़े किसी भी बालक को खींचकर अपनी ओर ले आये। वह घेरे के चारों ओर घूमते हुए चाहे जिसे बाहर खींचता है और कहता जाता है कि 'मोर संगी हिरान' मेरा साथी गुम गया है। घेरे के संगठन वाले पूछते हैं 'तोर संगी हिरान' तेरा साथी गुम गया है? घेरे के अग्रिम पंक्ति में खड़ा बालक मुर्गे के प्रयास को विफल करता है यह अपनी दोनों भुजाओं से उसको रोकता रहता है। ज्यों ही मुर्गा बालक किसी को गोल घेरे के बाहर खींच पाने में सफल होता है त्यों ही वह संगठन में शामिल हो जाता है तथा खींचा गया बालक मुर्गा बनता है। खेल के प्रारंभ में गीतात्मक प्रश्नोत्तर होते हैं :–

मुर्गा बालक	:	कुकडूँ कूँ .....।
घेरे वाले	:	कहाँ का मुर्गा?
मुर्गा बालक	:	रामचरन के।
घेरे वाले	:	कहाँ आये?
मुर्गा बालक	:	खेल खिलावें।
घेरे वाले	:	का खेल?
मुर्गा बालक	:	डाँडी पौवा।
घेरे वाले	:	केखे माथे?
मुर्गा बालक	:	सब जोड़िन के माथे।

बस खेल शुरू हो जाता है। 'मोर संगी हिरान' कहते हुए मुर्गा बालक घेरे के चारों ओर घूमकर किसी को भी खींचना शुरू कर देता है। संगठन वाले 'तोर संगी हिरान' कहते जाते हैं। खींचतान में जब तक मुर्गा बालक सफल नहीं हो जाता तब तक यह चलता रहता है। जब खींचा गया दूसरा बालक मुर्गा बनता है,तब पुनः प्रश्नोत्तर से खेल शुरू किया जाता है।

(4) झूला गीत– झूले में कुछ झूलते हैं, कुछ झूलाते हैं अन्य उपस्थित बालक भी झूले के सहभागी होते हैं–मिलकर गाते हैं :–

झूला झूल भैया झूला झूल
तोर ससुर के कलगी फूल
कलगी झर झर जाथिन
गल्लैया बिन बिन खाथिन
गल्लैयन के पेट में आगि लगै
मोरे बारो पियासो न जाए

कोदो दर भौजी कोदो दर
कोदो के माँड पछीते जा
भैया मारिस लाते लात
भौजी भागिस खाते खात

अच्छी कढ़ी बनैहे भौजी
चमकत जैहे बाजार

मामा लानिस छठे गोहरिया
मामी रांधिस झोर
आ रे मामा चींख ले
तौ मामी को लै गै चोर।
घोड़ा दौड़ा दे मामा
घुँघरू बजा दे मामा, घुँघरू बजा दे

दै दे दाई चित्थर गोद्दर, मामा गाँव जैहों री
मामा तो हैं गाँव गौंटिया, मामी हैं बंजार री
मामी रांधिस झुरई के झोर, बघारिस है तुरइया
आपन खाईन गूदा गूदा हमीं धराईन बीजा
मै का करहूँ बीजा, बिहाने रैहों तीजा
खुजलैयाँ मोरे बहिनी, दशहरा मोरे भैया
तीजा मोर भतीजा.....

नानी अस पोंड़की, गुलाबी अस वेश
कहाँ जैहे पोंड़की रतनपुर देश
पैंहीं गोंडवा चिरहीं पेट
निकलहीं कुटकी बोइहीं खेत
दोना भर भर पीहीं पेज

(5) बालिका गीत– इस नृत्य गीत में बालिकाएँ दो पंक्ति बनाकर लगभग बीस फुट के अंतर पर आमने-सामने खड़ी हो जाती हैं। गीत के शुरूआत में गीत के टेक को दोनों पंक्ति वाले बारी-बारी से दोहराते हैं। ज्यों ही गीत के स्वर-ताल का सामंजस्य बनता है त्यों ही आगे के पद का गायन शुरू होता है। इस नृत्य गीत में बालिकाएँ पंक्ति बद्ध, सामने झुककर पद-चालन मय नृत्य करते, तथा ताली बजाकर गीत गाते हुए आगे बढ़ती हैं एवं सामने खड़ी दूसरी पंक्ति के निकट तक जाकर उसी क्रम में पीछे लौटते हुए गीत की समाप्ति तक अपने स्थान पर वापिस आ जाती है। जब पहली पंक्ति वाले नृत्य गीत प्रस्तुत करते हैं तब दूसरी पंक्ति वाले अपने स्थान पर खड़े रहते हैं और जब दूसरी पंक्ति वाले नृत्य गीत प्रस्तुत करते हैं तब पहली पंक्ति वाले अपने स्थान पर खड़े रहते हैं यह क्रम चलता रहता है। इन गीतों के मुख्य विषय -'नारी आभूषण' ही हैं।

समधिन मेंहदी बरियार, समधिन मेंहदी बरियार
सुकसियन सुकसियन मोर बिछिया धरे है
बिछिया पहिर नहिं आयों राम
या दुनियाँ मोर मइके
मइके मैं लुभिया गैं राम या दुनियाँ मोर मइके।

सुकसियन सुकसियन मोर तोडर धरे हैं
तोडर पहिर नहिं आयों राम
या दुनियाँ मोर मइके
मइके मैं लुभिया गैं राम या दुनियाँ मोर मइके॥

सारे गीतों में क्रमशः नारी के नख-शिख आभूषणों के नामों (बिछिया, तोडर, करधन, अँगूठी, चूड़ी, छन्नी, बखौरा, कंगन, नथनी, झुमकी, हार इत्यादि) की गिनती चलती रहती है।

एक अन्य बालिका गीत में नृत्य का विधान उपर्युक्त गीत नृत्य की तरह है। इसमें प्रत्येक पाली की बालिका अपने गीत में मात्र अन्न का नाम दूसरी पाली द्वारा कथित नाम से भिन्न नाम उच्चरित करती हैं। जैसे पहली पाली ने गेहूँ कहा तो दूसरी पाली चना या अन्य कोई भी खाद्यान्न का नाम लेगी यह क्रम बदलता जायेगा।

एतकी अस गेहूँ के ओइरन डारौं, छोड़रन डारौं,
मार कड़ाकड़ सिंगरा काढ़ों,
अइहे री ढ़गढुमरिन ढ़ाई बुन्देल छा, बुन्देल छा.....

(पाली का नृत्य दल 'बुन्देल छा' पंक्ति को तब तक दोहराता रहता है, जब तक वापिस अपने स्थान पर लौट नहीं आता)।

(6) सगुन गीत– वर्षा ऋतु में सूखा पड़ जाने पर बालकों द्वारा इस नृत्य गीत की प्रस्तुति से यह माना जाता है कि सूखा समाप्त हो जायेगा और वर्षा होगी। इसमें बालक वृन्द मेंढक के माध्यम से सगुन उपस्थित कर यह याचना करते हैं कि खूब वर्षा हो जिससे धरती धन-धान्य से सम्पन्न हो जाय और हम बच्चे भूखे मरने से बच जायें।

इस गीत-दल के सभी बच्चे भीगे वस्त्र पहने होते हैं, इनमें से दो नग्न बालक मूसल के एक-एक सिरे को कंधे पर रखकर चलते हैं। उस मूसल के ऊपर एक मेंढक को पकड़कर बाँध दिया जाता है तथा मूसल के नीचे दो छोटे नंगे बालक नाचते कूदते मेंढक का अभिनय करते चलते हैं। जब वे किसी घर के मुख्य द्वार पर पहुँचते हैं, तब उस घर का कोई सदस्य यथासंभव अधिकाधिक ऊँचाई से मूसल पर बैठे मेंढक के ऊपर पानी डालता है, यह पानी मूसल के

नीचे नाच-कूद रहे उन बच्चों पर भी गिरता है। इस दौरान सभी गीत गाते चलते हैं :—

मेंदो बाई पानी दे
धान कोदों पकें दे
भुट्टा भाजी आवें दे,
लरिकन को जियावें दे।

(2) छेरता— मकर संक्रान्ति के पर्व पर अक्सर गाय चराने वाले बालक अपनी-अपनी टोली बना छेरता-छेरता गाते हुए घर-घर जाते हैं। प्रत्येक घर से उन्हें अन्न या मिष्ठान्न दिया जाता है जिसे सामूहिक भोज के रूप में ग्रहण करते हैं।

छेरता गाते समय हर बालक के हाथ में लाठी रहती है, जिसे गीत के धुन के साथ धरती पर ठोंकते चलते हैं :

छेरता छेरता माई मुर्गी मार दे
कोठी की धान निकार दे
बरी बरी गंधा थे
सुहारी ला मिठा थे
छेरता छेरता, छेरता-, छेरता.....।

बुन्देली बालगीत

रामप्रकाश गुप्ता

बुन्देलखण्ड का लोक साहित्य, संस्कृति एवं कलाएँ अत्यन्त समृद्ध हैं। बुन्देली लोक साहित्य में लोक जीवन के विविध पक्षों का सुन्दर चित्रण है। वस्तुतः बुन्देली लोकगीत बुन्देलखण्ड के लोकजीवन के दर्पण हैं। इन लोकगीतों में जन्म से लेकर मृत्यु तक के सामाजिक संस्कार, कार्य, पर्व एवं जीवन दर्शन व सभ्यता का सजीव चित्रण है।

विविध लोकगीतों में बुन्देली बालगीत भी महत्वपूर्ण हैं। बुन्देली बालगीतों में बाल जीवन की निश्छल चपलता, शिशु सुलभ आत्मीयता एवं बाल जीवन के मस्ती भरे मन की चंचलता विद्यमान है। बुन्देली बालगीतों में लोरियाँ, शिशु गीत एवं किशोर बालकों के गीत समाहित हैं। शिशु गीतों में छोटे बालकों को मन बहलाने के गीत एवं किशोरों के गीतों में टेसू के गीत प्रमुख हैं। किशोरवय के बालकों के गीतों में उपदेशात्मकता एवं मनोरंजन के तत्व प्रमुख रूप से शामिल हैं। इन बालगीतों में मनोरंजन के साथ-साथ स्वास्थ्य, विज्ञान और तत्व ज्ञान का समावेश है। साथ ही इनमें बुन्देली स्वाभिमान एवं शौर्य भी झलकता है।

लोरी— बुन्देली बालगीतों में अबोध व छोटे शिशुओं को माताएँ पलना में झुलाकर उन्हें लोरियाँ सुनाकर सुलाने का प्रयत्न करती हैं। इन लोरियों में मधुर स्वर एवं लय के साथ माता द्वारा अपने बालक के प्रति ममत्व भरे सहज स्नेह के दर्शन होते हैं। साथ ही बालक को रोगों एवं कुदृष्टि से बचाने के उपायों तथा अन्य स्नेहपूर्ण उक्तियों का समावेश होता है। कुछ बुन्देली लोरियाँ यहाँ प्रस्तुत हैं—

(1)

सोजा-सोजा बारे वीर
वीर की बलैयाँ लैहों, जमुना के तीर
वर से बाँधो पालनो, पीपर से बाँधी डोर
आतन-जातन झोंका दैहों, कभऊँ न टूटे डोर

ताती-ताती खीर बनाई, ऊ में डारो घी
दो कौर तो खा लै भैया, ठण्डो पर जै जी

(2) *झुलादो माई स्याम परे री पलना*
जो मेरे ललना को पलना झुलाहै,
देऊँ जड़ाऊ ककना,
अगर चन्दन कौ बनौ पालना, रेशम के लागे फुँदना,
काहू गुजरिया की नजर लगी है,
सो चौक परे ललना,
राई नौन उतारो जशोदा, खुशी भए ललना।

उपरोक्त दोनों लोरियों में माताएँ अपने शिशुओं को सुन्दर लोरियाँ सुनाकर सुला रही हैं। प्रथम लोरी में पालना में शिशु को सुलाने तथा शिशु को गर्म खीर खिलाने की मधुर भावना का वर्णन है। द्वितीय लोरी में यशोदा द्वारा राई नौन उतारने का वर्णन है। यह लोक विश्वास व संस्कार भावना से ओतप्रोत लोरी है। शिशु जब बड़ा होकर चलने-फिरने व बोलने लगता है तब बड़े-बूढ़े उसे बहलाने के लिए पैरों पर बिठाकर झुलाते हुए यह गीत गाते हैं–

कोंडी के रे कोंडी के, पाँच पसेरी के
उड़ गये गये तीतर बस गए मोर
सरीं डुकरियन लै गए चोर
चोरन के घर खेती भयी
वेई डुकारियाँ मोटी भयीं
मन-मन पीसें मन-मन खाँय
बड़े गुरू से जूझन जाँय

इस गीत को गाते हुए शिशु को झुलाने से उसके स्वास्थ्य में वृद्धि होती है व उसका मानसिक विकास होता है। इस गीत का एक पहलू तत्व ज्ञान से भी जुड़ा है यथा यह मानव देह कोंड़ी की है यद्यपि यह पाँच तत्वों से बनी है।

बच्चों को मिलकर रहने व काम करने की प्रेरणा देने वाले गीतों की भी कमी नहीं है। छोटे बच्चे मिलकर बैठ जाते हैं उनमें जाति-पाँति का कोई भेद-भाव नहीं होता है। वे एक-दूसरे के कान पकड़कर झूम-झूमकर गाने लगते हैं–

चूँ-चूँ चिरैंया, बन की बिलैयाँ
ताते-ताते माड़े, सीरे-सीरे घैला
सो-सो जाओ री चिरैंयाँ

यह कहते ही सब बच्चे सो जाने को ढोंग करते हैं फिर कहते हैं–

उठो-उठो री चिरैयाँ
तुमाय दद्दा लडुआ ल्याया।

जो बालक सबसे पहले उठ बैठता है उसे सभी बच्चे चिढ़ाते हैं।

एक साथ कुछ बालक बैठ जाते हैं। एक बालक दूसरे बालक की गद्दी पर थपकी देकर गाता है–

था-था थपरी, गैया ब्यानी कबरी
बच्छा भओ सेत, नाँव धरो गनेस
तोरे धरें करकसा नार चून बतावेदार
डूँड़ा बैला काठ की छड़ी, चल रे डूँड़ा रात भई
डुकरिया भाँड़ कूंड़े उठाइये, डूँड़ा बैला आउत है

यह कर ताल देने वाला बालक उस बालक की गद्दी से लेकर काँख तक अँगुलियाँ चलाकर काँख में गुदगुदा कर हँसा देता है। इस क्रिया में मनोरंजन के साथ स्वास्थ्यवर्द्धक व्यायाम भी होता है। छोटे-छोटे बालक आँगन में या चबूतरे पर मिलकर बैठ जाते हैं। सब बालक पाँचों अँगुलियाँ जमीन पर लगाये रखते किन्तु हथेली को ऊँचा उठाये रखते हैं। इससे उँगलियों का व्यायाम हो जाता है साथ में मनोरंजन तो होता ही है। एक बालक गाता है–

अटकन चटकन धाई चटोकन, फूल-फूल बनजारे के
बन फूले बगवारे के बाबा कैसे नारे के
बाबा ल्याय सात कटोरा, एक कटोरा फूट गओ
राजा के कुँअर रूठ गये, सपोट घोड़ा पानी पी।

बुन्देली बालक विभिन्न खेल खेलते हैं। इन खेलों को खेलते समय विविध प्रकार के गीत गाते हैं। सर्वप्रथम बालक दो टोलियों में विभाजित होते हैं। दो टोलियों के न्यायिक निर्वाचन की विधि कितनी सुन्दर है। दो बालक दोनों टोलियों के नायक जिसे बुन्देलखण्ड में मुड्ड कहते हैं, बैठ जाते हैं। फिर सभी बालक दो-दो करके नायकों के पास आते हैं और कहते हैं–

'हिली मिली दो बालें आई' तो नायक पूछता है– 'का भर ल्याई' टोली वाले बोलते हैं– 'गेहूँ-चना', नायक पूछता है 'कैसो भाव' तो टोली के दोनों बालक उत्तर देते हैं– 'टका पसेरी' नायक

कहता है– 'खोल दो नाव' टोली में से एक बालक बताता है– राम, लखन दोनों टोलियों में एक-एक बालक शामिल हो जाता है। इसी प्रकार पूरी टोली बन जाती है।

कुछ बालगीतों में बुन्देली बालकों को राष्ट्र रक्षा एवं कर्त्तव्य की बातें भी सिखाई जाती हैं, जो बुंदेली शौर्य परंपरा के वाहक है। बुंदेली बालक जो कल भावी नागरिक होंगे उन्हें इन खेल गीतों के माध्यम से उनके देश के प्रति कर्त्तव्य का ज्ञान कराया जाता है–

अग्गड़ बग्गड़ बम्बे बोल
अस्सी नब्बे पूर सौ
सौ में लागा तागा
चोर निकरकर भागा

उपरोक्त गीत में बालकों को शत्रु पक्ष से सावधान रहने की शिक्षा है और दुश्मन को एक साथ मिलकर घेरने की बात बताई गयी है।

आगे के गीत में बालिकाओं को सावधान रहने को कहा गया है क्योंकि उन्हें पानी के घाट और घर की रखवाली करना है–

इत्तन जित्तन पानी
घूर-घूर रानी
यहाँ का ताला तोड़ेंगे
ठाड़ा मूसल मारेंगे।

किशोर वय के बालक टेसू गीत गाते हैं। टेसू गीतों में व्यंग्यात्मक मनोरंजन का प्राधान्य होता है। कुछ विद्वान टेसू गीतों को वीर गीतों के रूप में भी निरूपित करते हैं। एक टेसू गीत प्रस्तुत है–

टेसू आये बान वीर, हाथ लिये सोने का तीर
एक तीर से मार दिया, राजा से व्यवहार किया
टेसू अगड़ करे टेसू झगड़ करे टेसू लेई कें टरें
टेसू बब्बा हेई अड़े खाने को माँगे दही बड़े
दही बड़े में मिर्ची भौत, टेसू पहुँचे कानी हौद

मसखरे बुन्देली बालक अनेक प्रकार के गीत गाते हुए मस्ती में खेतों-खलिहानों, नदियों, झरनों, सरोवरों व मैदानों में झूमते फिरते हैं–

बाबूलाल-बाबूलाल तेल की मिठाई
दतिया की गैल में कुतिया नचाई
कुतिया मर गयी कर लई लुगाई

नथू-नथोले नग-नग पोले
हुक्का सी तोंद चिलम से पोले

एक दो तीन बुड्ढे की मशीन
बुड्ढे बैठे गाड़ी में, आग लग गई दाड़ी में

इस प्रकार बुन्देली बालगीत बुन्देली बाल जीवन की जीवन्त झाँकी प्रस्तुत करते हैं। इन बालगीतों में बुन्देली बालकों के शैशव से लेकर किशोरावस्था तक की सामाजिक क्रिया व क्रीड़ाओं का सजीव चित्रण मिलता है। यह बाल गीत प्रायः हर बुन्देली बालक के मुख से निरन्तर निसृत होते रहते हैं और बालकों के साथ-साथ बड़े-बूढ़ों को भी आह्लादित करते रहते हैं। बुन्देली लोक साहित्य की यह बालगीत अमूल्य धरोहर है। शहरी सभ्यता के प्रभाव से अब यह गीत वर्तमान समय के बालक भूलते जा रहे हैं। वह इन गीतों के स्थान पर फूहड़ फिल्मी गानों को कण्ठस्थ कर रहे हैं। आवश्यकता है आज इन बाल गीतों के संग्रहण एवं प्रकाशन की जिससे यह अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर बच जाय।

मालवांचल के पंथवारी गीत

डॉ. शशि निगम

भारतीयों का जीवन धार्मिक भावनाओं एवं आस्थाओं से ओत-प्रोत रहा है। इन्हीं धार्मिक आस्था एवं श्रद्धा से युक्त है, मालववासियों का तीर्थ यात्रा प्रसंग। जो दुर्गम एवं कष्टप्रद होता था, अतः कुटुम्बियों के लिए घर के बेटे-बहू तथा अन्य सदस्य उनकी रक्षा हेतु मंगलकामना करते थे। विदाई से लेकर उनके लौटने तक प्रतिदिन घर के निकट किसी मंदिर या जलाशय के किनारे कुछ पत्थरों को देवी के रूप में स्थापित करके श्रद्धापूर्वक उनकी पूजा की जाती है तथा प्रतिदिन पंथवारी के गीत गाये जाते हैं।

'पंथवारी' शब्द 'पंथ' या 'पथ' और 'वारी' शब्दों से मिलकर बना है। जिसका आशय होता है पंथ (राह) के कष्टों का निवारण करने वाली, अर्थात् 'पंथ निवारिणी'। पंथवारी को मार्ग की रक्षिका देवी माना जाता है। यात्रा करने वाले के लिए ये पूज्या होती है। यह बिछुड़े को मिलाती हैं, भूले-भटके को मार्ग बताती हैं।

इन गीतों में प्रायः गंगा माता की महिमा, चारों मुख्य तीर्थ स्थलों का उल्लेख, तीर्थ यात्रियों की मनोभावनाएँ एवं व्यक्तित्व वर्णन, यात्रियों के लिए मार्ग में कुँए खुदवाने, शीतल छाया हेतु वृक्ष एवं उपवन लगाने, भोजन व्यवस्था इत्यादि के साथ ही पंथवारी पूजने का भी उल्लेख किया जाता है।

पंथवारी पूजने वाले घर के लोग तो प्रतिदिन इन गीतों को गाते ही हैं, लेकिन जो तीर्थ यात्रा पर जाते हैं वे भी कठिन यात्रा को सुगम बनाने हेतु धार्मिक भावनाओं एवं मनोरंजन की दृष्टि से इन गीतों को गाते हैं। मालवांचल-वासियों की इन्हीं भावनाओं से परिपूर्ण कुछ पंथवारी लोक-गीत यहाँ दिये जा रहे हैंः—

'उठो राणी रुखमा पूजो पंथवारी' से प्रारंभ होने वाले इस गीत में पंथवारी पूजने की महत्ता का उल्लेख किया गया है—

उठो राणी रुखमा पूजो पंथवारी,
पंथवारी पूज्या कँई गुण होय।
भूल्या ने मारग, बिछइया ने मेलो,
उठो राणी रुखमा पूजो पंथवारी।
पूजो पंथवारी अन्न होय-धन होय,
पूता का परवार होय।
उठो राणी रुखमा पूजो पंथवारी।

उठो रानी रुक्मिणी पंथवारी पूजो। तब वह कहती है, पंथवारी पूजने से क्या फल प्राप्त होता है? भटके हुए को इच्छित मार्ग तथा बिछुड़े हुए का मिलाप हो जाता है। इसलिए हे रानी रुक्मिणी! पंथवारी पूजो। पंथवारी पूजने से अन्न-धन में वृद्धि होगी। पुत्र से परिवार बढ़ेगा (वंशवृद्धि)। रानी रुक्मिणी उठो, पंथवारी पूजो।

घर से जब कोई यात्रा पर जाते हैं तब अन्य सदस्य अनेकानेक वस्तुएँ लाने का आग्रह करते हैं और कहते हैं कि हमारे लिए इच्छित वस्तुएँ लायेंगे तो आपको बहुत पुण्य मिलेगा।

गंगाजी की बाटे बसे रे-सोनीड़ो,
अच्छा-अच्छा गेणला घड़ाओ भोला संगवी।
उठो राणी रुखमा, पूजो पंथवारी।
आवेगा तीरथ का वासी, ठंडी छाया बैठेगा,
ऊना भोजन जीमेगा।
इतरो धरम तमारे होय भोला संगवी।
गंगाजी की बाटे बसे रे हलवाई,
अच्छी-अच्छी सिरनी बणाओ भोला संगवी।
उठो राणी रुखमा, पूजो पंथवारी।
आवेगा तीरथ का वासी, ठंडी छाया बैठेगा,
ऊना भोजन जीमेगा।
इतरो धरम तमारे होय भोला संगवी।
गंगाजी की बाटे बसे रे बजाजी,
अच्छी-अच्छी चुनड़ी मोलावो भोला संगवी।
उठो राणी रुखमा, पूजो पंथवारी।
आवेगा तीरथ का वासी, ठंडी छाया बैठेगा,
ऊना भोजन जीमेगा।
इतरो धरम तमारे होय भोला संगवी।

गंगोत्री के मार्ग पर स्वर्णकार रहता है। हे भोले संगवी! आप सुन्दर-सुन्दर आभूषण बनवाकर लाना। तब वे कहते हैं, रानी रुक्मिणी! अब उठो, पंथवारी पूजो। तीर्थयात्री आयेंगे, शीतल छाया में बैठेंगे, गर्म भोजन करेंगे। तब वे पुनः याद दिलाते हैं कि-हे भोले संगवी! आपको बहुत पुण्य मिलेगा।

गंगोत्री के मार्ग पर हलवाई रहता है। उससे स्वादिष्ट मिठाईयाँ बनवाकर लाना। तब वे कहते हैं कि राणी रुक्मिणी! उठो, पंथवारी पूजो। तीर्थ यात्री आयेंगे, शीतल छाया में बैठेंगे, गर्म भोजन करेंगे।

गंगोत्री के मार्ग पर कपड़े का व्यापारी रहता है। हे भोले संगवी! उससे सुन्दर-सुन्दर चूनड़ी खरीदकर लाना। तब वे कहते हैं-रानी रुक्मिणी! उठो, पंथवारी पूजो। तीर्थ यात्री लौटकर आयेंगे, शीतल छाया में बैठेंगे। गर्म भोजन करेंगे। हे भोले संगवी! आपको इससे बहुत पुण्य मिलेगा।

माया मोह में फँसे मानव को अपना गंतव्य (धर्मस्थल) स्पष्ट दिखाई नहीं देता, उसे हर वस्तु धुँधली दिखाई देती है। इन्हीं मनोभावों को निम्नांकित गीत में व्यक्त किया गया है—

धूँधळ दीसे पीपळी रे म्हारो राँमेसर कितरीक दूर?
तू कँई पूछे भोला मानवी रे,
थारो जीवड़ो माया रा माय।
माया तो म्हाने ऊँडी मेली रे।
म्हारो जीवड़ो चारी धाम रा माय।

धूँधळ दीसे पीपळी रे म्हारों बद्रीनाथ कितरीक दूर?
तू कँई पूछे भोळा मानवी रे,
थारो जीवड़ो पुत्तरा माय।
पुत्तर तो म्हने भणवा मैल्या रे,
म्हारो जीवड़ो चारी धाम रा माय।

धूँधळ दीसे पीपळी रे म्हारो सोरमजी कितरीक दूर?
तू कँई पूछे भोळा मानवी रे,
थारो जीवड़ो कन्या रा माय।
कन्या के तो सासरे पौंचई रे,
म्हारो जीवड़ो चारी धाम रा माय।

धूँधळ दीसे पीपळी रे म्हारो जगदीसजी कितरीक दूर?
तू कँई पूछे भोळा मानवी रे,
थारो जीवड़ो कुळबऊ रा माय,
कुळबऊ तो पंथवारी पूजे रे,
म्हारो जीवड़ो चारी धाम रा माय।

भवार्थ—एक तीर्थ यात्री यात्रा करते समय अपने साथी से पूछ रहा है कि यह पीपल का वृक्ष धुँधला-धुँधला सा दिखाई दे रहा है। यहाँ से रामेश्वरम् कितनी दूर है? तब साथी उत्तर देता है कि- हे भले मानुस! तू ये क्या पूछ रहा है? तेरा मन तो माया मोह में फँसा हुआ है। तब वह कहता है कि माया मोह को तो मैंने बिलकुल दूर (अंदर) कर दिया है। मेरा मन तो चारों धाम में लगा हुआ है।

फिर वह पूछता है कि बद्रीनाथ-धाम कितनी दूर है? तब वह कहता है कि- हे भले मानुस! तू ये क्या पूछ रहा है? तेरा मन तो पुत्र में लगा हुआ है। तब वह कहता है कि पुत्र को तो मैंने पढ़ने में लगा दिया है, मेरा मन तो चारों धाम में लगा हुआ है।

पुनः वह प्रश्न करता है कि सोरमजी कितनी दूर है? तब वह कहता है कि हे भले मानुस तू ये क्या पूछ रहा है? तेरा मन तो तेरी कन्या में लगा हुआ है। तब वह उत्तर देता है कि कन्या तो मैंने ससुराल पहुँचा दी है। मेरा मन तो चारों धाम में लगा हुआ है।

अंत में पुनः तीर्थ यात्री अपने साथी से पूछता है कि यह पीपल का वृक्ष धुँधला सा दिखाई दे रहा है। यहाँ से जगदीशजी कितनी दूर है? तब साथी उत्तर देता है कि- हे भले मानुस! तू ये क्या पूछ रहा है, तेरा मन तो तेरी पुत्रवधू में लगा हुआ है। तब वह कहता है कि मेरी पुत्रवधू तो पंथवारी पूज रही है। मेरा मन तो चारों धाम में लगा हुआ है। अर्थात् मैं सम्पूर्ण जिम्मेदारियों एवं माया-मोह से मुक्त हूँ।

प्राचीन समय में पैदल यात्रा करने के कारण अनेक माह, वर्ष लग जाते थे। दुर्गम यात्रा करके यात्री जीवित लौट आते तो उन्हें अनेक परिवर्तन दिखाई देते—

नानो सो ऑबो चोंपी गयो हो भोला संगवी।
यो ऑबो हुई गयो केरी जोग भोला संगवी।
हूँ मड़ पूजूँ रे अकेली।
जाऊँ तो अकेली हो राम, आऊँ तो अकेली।
मिली गयो गंगाजी को साथ भोला संगवी।
हूँ मड़ पूजूँ रे अकेली। जाऊँ तो अकेली...
छोटी सी तुलसा चोंपी गयो हो भोला संगवी।
या तुलसा हुईगी पूजा जोग भोला संगवी।
हूँ मड़ पूजूँ रे अकेली। जाऊँ तो अकेली...
मिली गयो बद्रीनाथ को साथ भोला संगवी।
हूँ मड़ पूजूँ रे अकेली। जाऊँ तो अकेली...
छोटी सी कन्या मेली गया वो भोला संगवी,
वा कन्या हुईगी साजन जोग भोला संगवी।
हूँ मड़ पूजूँ रे अकेली। जाऊँ तो अकेली...
मिली गयो हरिद्वार को साथ भोला संगवी।
हूँ मड़ पूजूँ रे अकेली। जाऊँ तो अकेली...
छोटो सो कुँवर मेली गया हो संगवी,
यो कुँवर हुई गयो दूजा भाँत जोग भोला संगवी।
हूँ मड़ पूजूँ रे अकेली।
जाऊँ तो अकेली राम, आऊँ तो अकेली।
मिली गयो चारीधाम को साथ भोला संगवी।
हूँ मड़ पूजूँ रे अकेली।
जाऊँ तो अकेली हो राम, आऊँ तो अकेली।

एक महिला यात्री अपने संगी-साथियों से कहती है कि- हे भोले साथी! तीर्थ यात्रा पर जाते वक्त छोटा-सा आम्रतरू रोप आये थे, अब वह आम्र वृक्ष फल देने योग्य हो गया है। मैं अकेली ही मंदिर में पूजन कर रही हूँ। मैं अकेली ही जा रही थी और अकेली ही आ रही थी, लेकिन मुझे सौभाग्य से गंगाजी जाने वालों का साथ मिल गया।

तीर्थ यात्रा पर जाते वक्त छोटी सी तुलसा का पौधा रोप आये थे। वह तुलसा अब पूजन करने योग्य (बड़ी) हो गई है। मैं अकेली ही जा रही थी और अकेली ही आ रही थी लेकिन मुझे बद्रीनाथ धाम का साथ मिल गया।

जाते वक्त छोटी सी कन्या को घर छोड़ आये थे, अब वह कन्या दूल्हे के योग्य (विवाह करने लायक) हो गई है। मैं अकेली ही जा रही थी और अकेली ही आ रही थी लेकिन मुझे हरिद्वार जाने के लिए साथ मिल गया।

जाते समय छोटे से बालक को घर छोड़ आये थे, अब वह भेदभाव करने लायक (मन में द्वेषपूर्ण भावों का समावेश) हो गया है। मैं अकेली ही मंदिर में पूजन कर रही हूँ। मैं अकेली ही जा रही थी और अकेली ही आ रही थी। मुझे सौभाग्य से चारों धाम का संग मिल गया।

तीर्थ यात्रा करते समय एक दम्पत्ति का आपस में वार्तालाप बहुत ही सहज एवं स्वाभाविक बन पड़ा है। वह अपने सहयात्री पति से कहती है कि—

संगवण केवे सुणो भोला संगवी,
रई आँगण कुवलो खनई दो भोला संगवी,
आवेगा जगदीस का वासी, ठंडो पाणी पीवेगा।
इतरो धरम तमके होवे भोला संगवी।
जल बिन झारी, ने दल बिन तुलसा,
घी बिन होम कैसे होवे, भोला संगवी?

संगवण केवे सुणो भोला संगवी,
रई आँगण हलवई बैठई दो भोला संगवी,
आवेगा सोरमजी का वासी, ऊना भोजन जीमेगा।
इतरो धरम तमके होवे भोला संगवी।
जल बिन झारी, ने दल बिना तुलसा,
पुत्तर बिना पिंड कैसे होय भोला संगवी?

संगवण केवे सुणो भोला संगवी,
रई आंगण पीपळी चौपी दो भोला संगवी,
आवेगा केदारनाथ का वासी, ठंडी छाया बैठेगा।
इतरो धरम तमके होय भोला संगवी।
जल बिना झारी, ने दल बिना तुलसा,
कन्या बिना पुन्न कैसे होय भोला संगवी?

संगवण केवे सुणो भोला संगवी,
रई आँगण डोल्या बिछई दो भोला संगवी,
आवेगा चारी-धाम का वासी, डोल्या पे पोड़ेगा।
इतरो धरम तमके होय भोला संगवी।
जल बिना झारी, ने दल बिना तुलसा,
पंथवारी बिना, कैसे तीरथ होय भोला संगवी?

एक तीर्थ यात्री अपने सहयात्री पति से कहती है कि हे भोले साथी! आप आँगन में कुँआ खुदवा दो, जगदीशजी के तीर्थ यात्री आयेंगे और ठंडा जल पीयेंगे। जिससे आपको पुण्य मिलेगा। जिस प्रकार जल बिना झारी (जल का पात्र) और पत्ती के बिना तुलसी शोभा नहीं पाती उसी प्रकार घी के बिना हवन कैसे हो सकता है?

वह कहती है कि- हे भोले साथी! आप आँगन में हलवाई बैठा दो। सोरमजी के वासी आवेंगे और गर्म भोजन करेंगे, जिससे आपको पुण्य मिलेगा। जिस प्रकार जल के बिना झारी और पत्तों के बिना तुलसी का पौधा शोभा नहीं देता, उसी प्रकार पुत्र के बिना पिण्डदान कैसे हो सकता है?

वह कहती है कि हे भोले साथी! आप आँगन में पीपल का पौधा लगा दो। केदारनाथ के वासी आवेंगे और ठंडी छाया में बैठेगे। जिससे आपको पुण्य मिलेगा। जिस प्रकार जल के बिना झारी पत्तों के बिना तुलसी शोभा नहीं पाती उसी प्रकार कन्या के बिना पुण्य कैसे हो सकता है?

पुनः वह कहती है कि- हे भोले साथी! आप आँगन में पलंग लगवा दो। चारों धाम के वासी आवेंगे और आराम करेंगे। जिससे आपको पुण्य मिलेगा। जल के बिना झारी, पत्तों के बिना तुलसी शोभा नहीं पाती उसी प्रकार 'पंथवारी' पूजे बिना तीर्थ कैसे हो सकता है?

जब तीर्थ यात्रियों का पत्र या चिट्ठी परिवारजनों को प्राप्त होती है तो बहुत प्रसन्नता का अनुभव होता है। घर में हलचल सी हो जाती है, तथा परिवारजनों के बीच वार्तालाप होता है और सभी के मन में समाचार जानने की जिज्ञासा होती है। इस गीत की पंक्ति 'भणीया हो तो बाँचो रे' में उस समय की निरक्षरता की ओर सहज ध्यान आकर्षित हो जाता है—

गंगाजी से कारट आयो,
भणिया हो तो बाँचो रे।
अपणा दादाजी को कारट रे।
शरद रई तो कारट बाँचे
लाड़ी-बऊ बगरे बुआरे रे।

बद्रीनाथ से कारट आयो,
भणिया हो तो बाँचो रे।
अपणा काकाजी को कारट रे,
अरुण रई तो कारट बाँचे,
लाड़ी-बऊ बगरे बुआरे रे।

हरिद्वार से कारट आयो,
भणिया हो तो बाँचो रे।
अपणा फूफाजी को कारट रे,
सुभाष रई तो कारट बाँचे।
लाड़ी बऊ बगरे बुआरे।

केदारनाथ से कारट आयो,
भणिया हो तो बाँचो रे।
अपणा भैयाजी को कारट रे।

गंगोत्री से पत्र आया है, कोई पढ़ा-लिखा हो तो पढ़कर सुनाओ, अपने दादाजी का पत्र है। शरद कुमारजी पत्र पढ़ रहे हैं और उनकी धर्मपत्नी बाट जोह रही हैं।

बद्रीनाथ से पत्र आया है, कोई पढ़ा-लिखा हो तो पढ़कर सुनाओ। अपने काकाजी का पत्र है। अरुण कुमारजी तो पत्र पढ़ रहे हैं और उनकी धर्मपत्नी बाट जोह रही हैं।

हरिद्वार से पत्र आया है, कोई पढ़ा-लिखा हो तो पढ़कर सुनाओ। अपने फूफाजी का पत्र है। सुभाषचन्द्र तो पत्र पढ़ रहे हैं और उनकी धर्मपत्नी बाट जोह रही हैं।

जब लोग तीर्थ यात्रा पर जाते हैं तो वहाँ की कुछ वस्तुएँ विशेष अपने साथ लाते हैं। उन्हीं में से कुछ वस्तुओं को निम्न गीत में दर्शाया गया है—

आसो पालो रे झरम झरियो,
जिस पर राधा लुंबाणी रे।

बोलो रे म्हारा गंगाजी रा वासी,
खड़ियो काँसे लाया?

अपणी गंगाजी में दरजी घणेरा,
खड़ियो वाँसे लाया रे। आसो पालो...

बोलो रे म्हारा सोरमजी रा वासी,
चिपियो काँसे लाया?

अपणी गंगाजी में बाँसज घणेरा,
चिपियों वाँसे लाया रे। आसो पालो...

बोलो रे म्हारा जगदीसजी रा वासी,
झारी काँसे लाया?

अपणी गंगाजी में कसेरा घणारे,
झारी वाँसे लाया रे। आसो पालो...

बोलो रे म्हारा बद्रीनाथ रा वासी,
सिरनी काँसे लाया रे।

आसो पालो रे झरम झरियो,
जिस पर राधा लुँबाणी रे।

हरे-भरे घने अशोक वृक्ष की ओर राधा आकर्षित हो गई। वे कहती हैं कि गंगा सागर के वासी, बताईये आप ये खड़िया कहाँ से लाये हैं? अपनी गंगाजी में बहुत से दर्जी हैं, वहीं से खड़िया लाया हूँ।

मेरे सोरमजी के वासी आप ये चिपिया (बाँस की छड़ी) कहाँ से लाये हैं? अपनी गंगाजी में ढेर से बाँस हैं। चिपिया वहाँ से लाया हूँ।

मेरे जगदीशजी के वासी आप ये झारी कहाँ से लाये हैं? अपनी गंगाजी में ठठेरे बहुत हैं, झारी वहीं से लाया हूँ।

बोलिये मेरे बद्रीनाथ के वासी, आप मिठाई कहाँ से लाये हैं? अपनी गंगाजी में हलवाई बहुत हैं, मिठाई उन्हीं से लाया हूँ। हरे-भरे घरे अशोक वृक्ष की ओर राधा आकर्षित हो गई।

तीर्थ यात्रा के दौरान कभी-कभी परिवारजनों का साथ छूट जाता है अर्थात् वे आपस में बिछुड़ जाते हैं। ऐसी स्थिति में वे चिंतित हो उठते हैं। इन्हीं भावों की अभिव्यक्ति कार्तिक स्नान के इस गीत में हुई है—

सुणो-सुणो हो बिरज की सब सखियाँ,
हमारा दाऊजी के देख्या कौन गलियाँ?
हमारा पिताजी के देख्या कौन गलियाँ?
सुणो-सुणो हो बिरज की सब सखियाँ,
तमारा दाऊजी तो सोरमजी में न्हाय रया,
हरकी पोड़ी पे धोत्याँ सुखाय रया।
तमारा पिताजी तो गंगाजी में न्हाय रया,
हर की पोड़ी पे धोत्याँ सुखाय रया।
सुणो-सुणो हो बिरज की सब सखियाँ,
हमारा काको सा के देख्या कौन गलियाँ?
हमारा मामो सा के देख्या कौन गलियाँ?
सुणो-सुणो हो बिरज की सब सखियाँ,
तमारा काको सा तो जगदीसजी में न्हाय रया,
हरकी पोड़ी पे धोत्याँ सुखाय रया।
तमारा मामो सा तो बद्रीनाथ में न्हाय रया,
हर की पोड़ी पे धोत्याँ सुखाय रया।

हे ब्रज की सखियाँ! सुनो। हमारे दादाजी एवं पिताजी को आपने किसी गली में देखा है? तब वे उत्तर देती हैं, हे ब्रज की सखियाँ! सुनो। तुम्हारे दादाजी तो सोरमजी में स्नान कर रहे थे, हर की पोड़ी पर धोती सुखा रहे थे तथा तुम्हारे पिताजी गंगासागर में स्नान कर रहे थे, हर की पोड़ी पर धोती सुखा रहे थे। हे ब्रज की

सखियाँ! सुनो। हमारे काकाजी एवं मामाजी को आपने किसी गली में देखा है? तब वे कहती (उत्तर देती) हैं सुनो ब्रज की सखियों! तुम्हारे काकाजी तो जगदीशजी में स्नान कर रहे थे, हर की पोड़ी पर धोती सुखा रहे थे। तुम्हारे मामाजी तो बद्रीनाथ में स्नान कर रहे थे, हर की पोड़ी पर धोती सुखा रहे थे।

निम्नांकित गीत में एक महिला तीर्थ यात्री की बहुत ही सहज स्वाभाविक एवं मार्मिक मनोव्यथा अभिव्यक्त हुई है–

या मटकी सोरमजी से भरी है।
या मटकी गंगाजी से भरी है।
भरत-भरत लागो तड़को,
म्हारो हार टूटो नवसर को।
सासू लड़े म्हारा ससरा लड़े है,
ए जेठानी लड़े पर घर की।
म्हारो हार टूटो नवसर को,
टूटी गयो हार बिखर गया मोती,
ए बीनत-बीनत लागो तड़को।
म्हारो हार टूटो नवसर को।
जेठानी लड़े म्हारा जेठजी लड़े हैं,
देरानी लड़े पर घर की।
म्हारो हार टूटो नवसर को,
देरानी लड़े म्हारा देवर लड़े हैं,
ननद लड़े पर घर की।
म्हारो हार टूटो नवसर को।
हार का कारण सायब लड़े है,
सौकन लड़े म्हारा घर की।
म्हारो हार टूटो नवसर को।

इस मटकी (मिट्टी का कलश) को सोरमजी से भरी है, इस मटकी को गंगाजी से भरते-भरते मुझे धूप लगी और उसी दौरान मेरा नौ लड़ियों वाला हार टूट गया। हार के कारण मेरे सास-ससुर लड़ते हैं, और पराये घर से आई जेठानी भी।

हार टूटने से मोती बिखर गये, और उन्हें बीनते-बीनते (समेटते हुए) मुझे धूप लगी। हार के कारण मेरी जेठानी के साथ जेठजी भी लड़ते हैं और पराये घर से आई देवरानी भी।

हार के कारण मेरी देवरानी के साथ, मेरे देवरजी भी लड़ते हैं और परायी ननद भी।

मेरी नौ लड़ियों वाला हार टूट गया, जिसके कारण मेरे पति देव लड़ते हैं तथा घर की सौतन भी।

जब तीर्थयात्री यात्रा करके घर लौटते हैं, उस समय परिवार के लोग उनका आत्मीयतापूर्वक धूमधाम से स्वागत करते हैं–

ढोल नगारा बाजा हो बाजे, बाजा हो बाजे,
संख बाजो ने म्हारा संगवी हो आया।

घड़ी दोय संगवी विलमण करजो, विलमण करजो,
घर वो आँगण म्हारे लीपण दीजो। ढोल नगारा...

घड़ी दोय संगवी विलमण करजो, विलमण करजो,
पगल्या तो म्हाने माँडण दीजो। ढोल नगारा...

घड़ी दोय संगवी विलमण करजो, विलमण करजो,
पंथवारी तो म्हाने करवा दीजो। ढोल नगारा...

घड़ी दोय संगवी विलमण करजो, विलमण करजो,
संग की सहेल्या म्हाने बुलावा दीजो। ढोल नगारा...

घड़ी दोय संगवी विलमण करजो, विलमण करजो,
आरती तो म्हाने संजोवा दीजो।

ढोल नगारा बाजा हो बाजे, बाजा हो बाजे,
संख बाजो ने म्हारा संगवी हो आया।

संगवी तीर्थयात्रा करके लौट आये हैं, उनके स्वागत में ढोल-नगाड़ा एवं शंख-ध्वनि हो रही है। अरे संगवी! दो घड़ी (कुछ समय) विलंब तो करिये। हमें घर आँगन लीपने दीजिये।

इसी प्रकार उनसे कहा जा रहा है कि थोड़ा विलंब करिये और हमें 'पगल्या' (पद चिन्ह) अंकित करने दीजिये, पंथवारी बनाने दीजिये, स्वागत हेतु सहेलियों को बुलवाने दीजिये, आरती की तैयारी करने दीजिये। अर्थात् सम्पूर्ण तैयारी के पश्चात् आप गृह प्रवेश करें तो हमें विशेष आनंद प्राप्त होगा।

केसर ने कस्तूरी घोलो, रगड़ चंदन को बाटको।
यो बाटको हमारा राजनलाल ने दीजो।
करे गंगा मई की आरती।
साँज की आरती-सवेरे की आरती
सवा पेर सेवा आपकी।
केसर ने कस्तूरी घोलो, रगड़ चंदन को बाटको।

यो बाटको हमारा शरदलाल ने दीजो।
करे गंगामाई की आरती।
साँज की आरती-सवेरे की आरती,
सवा पेर सेवा आपकी।

केसर और कस्तूरी को घोलकर, चंदन घिसकर (अर्थात् लेपन तैयार करके) कटोरा भर लो। यह कटोरा हमारे राजेन्द्रलाल को दो, यह कटोरा हमारे शरदलाल को दो, वे गंगा माई की आरती करेंगे। सायंकाल की आरती, और प्रातःकाल की आरती के साथ ही सवा प्रहर अर्थात् सदैव सेवा में उपस्थित रहेंगे।

निम्नांकित पंथवारी गीत में तीर्थ स्थानों की आरती के साथ ही विशेष रूप से भगवान कृष्ण का उल्लेख करते हुए लोकांचल-वासियों के हृदय की अत्यंत सरलता भी अभिव्यक्त हुई है—

हात कड़ोल्या, पाँय कड़ोल्या,
आँख काजलिया नी रेख,
चारीधाम की आरती हो भगवान।
गंगामाई की आरती हो भगवान।
दूर खेलन मती जाओ रे कन्हैया,
किसकी नजर लगी जाय,
गंगामाई की आरती हो भगवान।
माता जसोदा झारी भराई, भोजन बणाया,
न्हावण के मिसआओ, जीमण के मिसआओ,
केदारनाथ की आरती हो भगवान।
माता जसोदा झारी आरती, बिड़ला बँधाया,
पीवण के मिसआओ, चाबण के मिसआओ,
हरिद्वार की आरती हो भगवान।
माता जसोदा सार मँगाई, चौपड़ रळाया,
खेलण के मिसआओ, जीतण के मिसआओ,
डाकोर जी की आरती हो भगवान।

कान्हा के हाथों और पैरों में कड़े सुशोभित हो रहे हैं, साथ ही आँखों में काजल है। हम चारों धाम की आरती उतारते हैं। अरे कान्हा! दूर खेलने मत जाना, किसी की नजर लग जायेगी। यशोदा माता ने झारी भराई है, भोजन बनाया है। कान्हा! स्नान करने के बहाने, भोजन करने के बहाने ही आ जाओ। हम केदारनाथ की आरती उतारते हैं। माता यशोदा ने झारी भराई है, पान के बीड़े लगवाये हैं। कान्हा! पानी पीने के बहाने, बीड़े चबाने आ जाओ। हम हरिद्वार की आरती उतारते हैं। अरे कान्हा! माता यशोदा ने गोटे मँगवाई हैं, चौपड़ सजाया है। खेलने के बहाने, जीतने के बहाने ही आ जाओ। हम डाकोरजी की आरती उतारते हैं।

अनेकानेक तीर्थ स्थानों की यात्रा हेतु यात्रियों की अभिलाषा एवं उत्साह को दर्शाने वाले इस गीत में कहा जा रहा है—

आगे मिलेगा बद्रीनाथ, चलो रे संगवी।
आगे जो आगे रेल खड़ी है,
बैठ चलाँगा चारी धाम, चलो रे संगवी।
आगे मिलेगा जगदीस, चलो रे संगवी।
आगे जो आगे मंदर बण्यो है,
वँई कराँगा पूजा-पाठ, चलो रे संगवी।
आगे मिलेगा कासीजी, चलो रे संगवी।
आगे जो आगे गंगा बहत है,
वँई कराँगा अस्नान, चलो रे संगवी।
आगे मिलेगा सोरमजी, चलो रे संगवी।
आगे जो आगे कन्या खड़ी है,
वँई कराँगा कन्यादान, चलो रे संगवी।
आगे मिलेगा रामेसर, चलो रे संगवी।
आगे जो आगे गौवा खड़ी है,
वँई कराँगा गौवा दान चलो रे संगवी।
आगे मिलेगा द्वारखाधीस, चलो रे संगवी।
आगे जो आगे तुलसा को क्यारो।
वँई कराँगा दरसण। चलो रे संगवी।

संगवी! तीर्थयात्रा हेतु प्रस्थान करिये। आगे 'बद्रीनाथ-धाम' है। सबसे आगे जो रेल खड़ी है, उसी में बैठकर चारों धाम की यात्रा करेंगे। आगे 'जगदीशजी' मिलेंगे। सबसे आगे जो मंदिर बना है, चलो वहीं चलकर पूजन-पाठ करेंगे। और आगे बढ़िये काशीजी चलें। सबसे आगे जो गंगा नदी प्रवाहित हो रही है, वहीं चलकर स्नान करेंगे। आगे चलिये वहाँ 'सोरमजी' के दर्शन होंगे। वहाँ सबसे आगे कन्या खड़ी है, चलकर उसका कन्यादान करेंगे। अरे संगवी! आगे तीर्थ 'रामेश्वरम्' है। सबसे आगे जो गौ माता खड़ी हैं, वहीं चलकर गौदान करेंगे। और आगे चलें वहाँ 'द्वारिकाधीश' है। वहाँ सबसे आगे तो तुलसी चौरा है, चलकर वहीं दर्शन करेंगे।

तीर्थयात्रा के दौरान तीर्थयात्री महिलाएँ पुण्य प्राप्ति की चर्चा करते हुए कहती हैं—

भरलो राधा-भरलो रुखमा,

हीरा के री थाळ, मोती केरी थाळ,
जई गंगाजी में पुन्न करो।
जई हरिद्वार में पुन्न करो।
गंगा न्हाया-गोमती न्हाया,
सरजू घाट न्हाया, जमना घाट न्हाया।
बद्रीनारायण अस्नान करिया,
मळ्या चारीधाम।
यों संग आयो मज आदी रात, बड़ी परभात,
यों संग आयो रे उतावळो।
भरलो राधा-भरलो रुखमा,
हीरा के री थाळ, मोती के री थाळ,
जई गंगाजी में पुन्न करो।
जई हरिद्वार में पुन्न करो।
गंगा न्हाया, गोमती न्हाया,
सरजू घाट न्हाया, जमना घाट न्हाया,
रामेश्वर स्नान कर्‌या,
मळ्या चारीधाम।
यो संग आयो मज आदी रात, बड़ी परभात,
यो संग आयो रे उतावळो।

राधा-रूक्मिणी हीरा-मोती से थाल भर लो और जाकर गंगाजी में पुण्य करो, हरिद्वार में पुण्य करो। गंगाजी में, गोमती में, सरयूजी और यमुनाघाट पर स्नान किया साथ ही बद्रीनारायण तीर्थ में स्नान किया मानों वहीं चारों धाम प्राप्त हो गये। तीर्थ यात्रियों का समूह यात्रा करके मध्य रात्रि में आया। मुँह अंधेरे-प्रभात में बहुत जल्दी आया। इसी तरह गीत में आगे उक्त चारों पवित्र नदियों में स्नान के पश्चात् 'रामेश्वरम्' में स्नान करके चारों तीर्थों का पुण्य प्राप्त करने का उल्लेख हुआ है। इसी तरह एक अन्य गीत में कहा जा रहा है—

हूँ तो थाळ भरी ने हार-फूल लई वो,
सागर के चढ़ावा ने अई वो।
सागर जाणे अकेला आया, हम सात सखी संग लाया।
हम तो जोड़ा से दरसण करवा आया।
हूँ तो थाळ भरी ने अटको लई वो,
जगदीस के चढ़ावा ने अई वो।
जगदीस जाणे अकेला आया, हम सात सखी संग लाया।
हम तो जोड़ा से दरसण करवा आया।
हूँ तो थाळ भरी ने बिलपत्तर लई वो,
रामेसर के चढ़ावाने अई वो।
रामेसर जाणे अकेला आया, हम सात सखी संग लाया।
हम तो जोड़ा से दरसण करवा आया।
हूँ तो थाळ भरी ने मिसरी लई वो,
द्वारखानाथ के चढ़ावा ने अई वो।
द्वारखानाथ जाणे अकेला आया, हम सात सखी संग लाया।
हम तो जोड़ा से दरसण करवा आया।

एक तीर्थयात्री महिला सागर किनारे कहती है मैं तो थाल भरकर पुष्प-हार लायी हूँ, समन्दर को समर्पित करने आयी हूँ। सागर को लगता है मैं यहाँ अकेले ही आयी हूँ, लेकिन मैं तो सात सखियों के संग जोड़े से (पति-पत्नी) दर्शन हेतु आयी हूँ।

मैं तो थाल भरकर प्रसाद हेतु अटका ('भात', मोहन भोग) लायी हूँ। भगवान् जगदीश्वर को समर्पित करने आयी हूँ। भगवान् जगदीश्वर समझ रहे हैं कि मैं यहाँ अकेली ही आयी हूँ, लेकिन मैं तो सात सखियों के संग, जोड़े से दर्शन करने आयी हूँ।

मैं तो थाल भरकर 'बेल-पत्र' लायी हूँ। भगवान् रामेश्वर को समर्पित करने आयी हूँ। रामेश्वर समझ रहे हैं कि मैं यहाँ अकेले ही आयी हूँ, मैं तो सात सखियों के संग जोड़े से दर्शन करने आई हूँ।

मैं तो थाल भरकर द्वारिकानाथ को मिश्री चढ़ाने आयी हूँ। द्वारिकानाथ समझ रहे हैं कि मैं यहाँ अकेली ही आई हूँ, लेकिन मैं तो सात सखियों के संग जोड़े से दर्शन करने आई हूँ।

पावन गंगा माता के लिए अत्यन्त श्रद्धा एवं समर्पण की भावना अभिव्यक्त करने वाले निम्नांकित गीत में कहा जा रहा है—

जद म्हारी गंगा माता न्हावण बैठ्या,
धोत्याँ पण लोट्यो हाजर होय गंगा माता,
थारा नाम पर गेंद हुई जऊँ वो।
गेंद हुई जऊँ वो, गुलाब हुई जऊँ,
अनार हुई जऊँ वो, गंगा माता,
थारा नाम पर गेंद हुई जऊँ वो।
जद म्हारी गंगा माता जीमण बैठ्या,
लाडू-जलेबी, बरफी हाजर होय गंगा माता,
थारा नाम परगेंद हुई जऊँ वो।
गेंद हुई जऊँ वो, गुलाब हुई जऊँ,
अनार हुई जऊँ वो, गंगा माता,
थारा नाम पर गेंद हुई जऊँ वो।
जद म्हारी गंगा माता लोटण वेळ्या,

गादी-गलीचा, तकिया हाजर होय गंगा माता,
थारा नाम पर गेंद हुई जऊँ वो।
गेंद हुई जऊँ वो, गुलाब हुई जऊँ,
अनार हुई जऊँ वो, गंगा माता,
थारा नाम पर गेंद हुई जऊँ वो।
जद म्हारी गंगा माता आरती की बेळ्या,
कंकू-पिंगाणी, कुँवासी हाजर होय, गंगा माता,
थारा नाम पर गेंद हुई जऊँ वो।
गेंद हुई जऊँ वो, गुलाब हुई जऊँ,
अनार हुई जऊँ वो, गंगा माता,
थारा नाम पर गेंद हुई जऊँ वो।

जब मेरी गंगा माता स्नान के लिए बैठी तो मैं उनकी सेवा में धोती (साड़ी) एवं लोटा लेकर उपस्थित होती हूँ। हे माँ! आप स्वयं तो क्या मैं आपके नाम के लिए भी गेंदा, गुलाब, अनार आदि के पुष्प बन जाऊँ (अर्थात् संपूर्ण समर्पित होने का भाव निहित है।)

जब मेरी गंगा माता भोजन करने के लिए बैठी तो मैं उनकी सेवा में लड्डू, जलेबी और बरफी लेकर उपस्थित होती हूँ। हे माँ! आप स्वयं तो क्या मैं आपके नाम पर भी गेंदा, गुलाब, अनार आदि के पुष्प बन जाऊँ।

जब मेरी गंगा माता के विश्राम का समय होता है तब मैं गादी-गलीचा और तकिया लेकर उपस्थित होती हूँ। हे माँ! मैं आपके लिए गेंदा, गुलाब, अनार आदि के फूल बनने को तैयार हूँ।

जब मेरी गंगा माता की आरती (स्वागत एवं विदाई का समय) का समय होता है तब मैं कुँकुँ-पिंगाणी (हल्दी-कुँकुँ का विशेष पात्र) और सुहागिनों सहित उपस्थित होती हूँ। हे माँ! आप तो क्या मैं आपके नाम पर गेंदा, गुलाब और अनार आदि के पुष्प बनकर संपूर्ण समर्पण हेतु तत्पर हूँ।

एक स्त्री के तीर्थाटन पर गये अपने सास-ससुर की सहायता एवं शुभकामनाओं हेतु मनोभाव कुछ इस तरह हैं–

ससरा हमारा गंगाजी हो गया।
सासूजी हमारा गंगाजी हो गया।
जणा की तो पूजों पंथवारी रे,
सुणो लकड़ी हमारी।
काँख माय आरती ने, खोळा माय फुलड़ा,
जणा की तो पूजों पंथवारी,
सुणो लकड़ी हमारी।
जेठजी हमारा सोरमजी हो गया।
जेठाणी हमारा सोरमजी हो गया।
जणा की तो पूजों पंथवारी रे,
सुणो लकड़ी हमारी।
काँख माय आरती ने, खोळा माय फुलड़ा,
जणा की तो पूजों पंथवारी,
सुणो लकड़ी हमारी।

हमारी लकड़ी सुनो! हमारे सास-ससुर तीर्थ यात्रा हेतु गंगाजी गये हैं, मैं उनके लिए पंथवारी पूजती हूँ। इसके लिए बगल में आरती एवं मेरे आँचल में फूल हैं।

मेरे जेठ-जेठानी भी तीर्थ यात्रा हेतु सोरमजी गये हैं। जिनके लिए मैं पंथवारी पूजती हूँ। हमारी लकड़ी सुनो। (अर्थात् तुम उनकी सहायक बनना, इसमें यह भाव भी निहित है) बगल में आरती और आँचल में फूल है जिससे मैं पंथवारी पूजती हूँ।

श्रीकृष्ण के प्रति अत्यन्त समर्पण दर्शाने वाले निम्नांकित 'पंथवारी गीत' में कहा जा रहा है–

हाँ रे कान्ह जो सुणती वाँसळी को राग,
तो ऊबी की ऊबी चली पड़ती, साँवरिया रे कान्ह।
हा रे कान्ह चूला पे उकळे हो दूद,
अंगारे सीजे खीचड़ी, साँवरिया रे कान्ह।
हाँ रे कान्ह गोबर भरिया रे हाथ,
सोरमजी में धोई लेती, साँवरिया रे कान्ह।
हाँ रे कान्ह जो सुणती वाँसळी को राग,
तो ऊबी की ऊबी चली पड़ती, साँवरिया रे कान्ह।
हाँ रे कान्ह झोळी में रोवे नन्दलाल,
सेरयाँ में नाना भाणेजा, साँवरिया रे कान्ह।
हाँ रे कान्ह भोजन परोसी है थाळ,
झारी भरी है गंगा जल, साँवरिया रे कान्ह।
हाँ रे कान्ह जो सुणती वाँसळी को राग,
तो ऊबी की ऊबी चली पड़ी, साँवरिया रे कान्ह।

अरे कान्हा! यदि मैं आपकी बाँसुरी की मधुर तान सुनती तो, खड़ी की खड़ी (जैसी की तैसी ही) आपके पास चली आती। कन्हैया! मेरे चूल्हे पर दूध उबल रहा है, अंगारे पर खिचड़ी बन रही

है, मेरे गोबर से सने हुए हाथ हैं, मैं उन हाथों को सोरमजी में धो लेती।

झोली में मेरा बालक रो रहा है और आँगन में मेरा छोटा भानजा है। थाली में भोजन परोसा हुआ है, गंगा जल से भरी (पानी) झारी है। उन सबको छोड़कर मैं आपकी बाँसुरी की मधुर तान सुनती तो दौड़ी चली आती।

तीर्थयात्री के व्यक्तित्व को दर्शाने के साथ ही यह गीत गंगा की पवित्रता एवं जीवनदायिनी माँ के रूप में निरूपित हुआ है—

म्हारा संगवी ने पागों हजार।
पेंचा करोड़ की हो भोला संगवी।
म्हारा संगवी ने मोती हजार,
चुन्नी करोड़ की हो भोला संगवी।
म्हारा संगवी ना बालक बेस,
छोड्गा वणका देस, जतना से राखजो हो गंगा माता।
म्हारा संगवी नी कंठी हजार,
डोरा करोड़ का हो भोला संगवी।
म्हारा संगवी ना जामा हजार,
केसर करोड़ की हो भोला संगवी।
म्हारा संगवी का बालक बेस,
छोड्या वणका देस, जतना से राखजो हो गंगा माता।
म्हारा संगवी ना कड़ा हजार,
घड़िया करोड़ की हो भोला संगवी।
म्हारा संघवी नी मोजड़ी हजार,
मेंदी करोड़ की भोला संगवी।
म्हारा संगवी का बालक बेस,
छोड्या वणका देस, जतना से राखजो हो गंगा माता।

मेरे संगवी की पाग (पगड़ी) हजारों की है। उसमें लगा पेंच करोड़ का अर्थात उससे मूल्यवान है जिससे शोभा द्विगुणित हो गई।

मेरे संगवी के मोती (माला) हजारों के हैं तथा उसमें लगी चुन्नी (हीरा) करोड़ों की है। मेरे संगवी का बाल स्वरूप है, वे अपना देश (मुकाम) छोड़कर तीर्थ यात्रा करने आये हैं। हे माँ गंगे! आप उनकी सुरक्षा करना। मेरे संगवी की कंठी हजारों की है, तथा डोरा, (गले की चेन) करोड़ों की है। मेरे संगवी का जामा हजारों का है तथा उसको सुवासित करने वाली केसर करोड़ की है।

निम्नांकित गीत में गंगाजी के घाट पर हरि द्वारा बगीचा लगाने तथा उस बगीचे में लगी फुलवारी, डाली पर बैठे हुए तोते द्वारा 'सीताराम' की वाणी बोलने की सहज अभिव्यक्ति हुई है—

गंगाजी ना घाट पे हो,
हरि ने बाग लगाई हो राज।
बाग लगाई डोड़ा एलची हो,
चारी फूल लगाया हो राज।
जिस पर बैठो सूड़ो सोयटो रे,
सूड़ा कँई वाणी बोल्यो हैं आज?
वाणी बोल्यो हे सीताराम हो,
सीता लंखी भणाया हो राज।
सोरमजी ना घाट पे हो,
हरि ने बाग लगाई हो राज।
बाग लगाई डोड़ा एलची हो,
चारी फूल लगाया हो राज।
जिस पर बैठो सूड़ो सोयटो रे,
सूड़ा कँई वाणी बोल्यो हे राज?
वाणी बोल्यो हे सीताराम की हो,
सीता लँखी भणाया हो राज।

गंगाजी के घाट पर हरि ने बगीचा लगाया है। उस बगीचे में इलायची के डोड़े तथा चार प्रकार के पुष्प लगाये हैं। उसके ऊपर सुन्दर तोता बैठा है। वह तोता क्या वाणी बोला है? वह तोता 'सीताराम' की वाणी बोला है, जो कि सीता के समान गुणों वाली ने सिखाया है।

सोरमजी के घाट पर हरि ने बगीचा लगया है। उस बगीचे में इलायची के डोड़े तथा चार प्रकार के पुष्प लगाये है। उसके ऊपर सुन्दर तोता बैठा है। वह तोता क्या बाणी बोला है? तोता 'सीताराम' की वाणी बोलता है, जोकि उसे सीता के समान गुणों वाली ने सिखाया है।

हे गंगा मैया! जो भी तेरे द्वार पर आये उसे आनंदित कर, उन्हें अभीष्ट फल दे। दुःखी को सुखी एवं रीते को भरपूर कर—

इ तो पाना आया ने फूलाँ मेल वो,
म्हारी जरनी, गंगा ना धोरे गुल क्यारी।

गुल क्यारी ने लागे प्यारी वो,
म्हारी जरनी, गंगा ना धोरे गुल क्यारी।
इ तो रोता आया ने हँसता मेल वो,
म्हारी जरनी, गंगा ना धोरे गुल क्यारी।
गुल क्यारी ने लागे प्यारी वो,
म्हारी जरनी, गंगा ना धोरे गुल क्यारी।
इ तो तरस्या आया ने पीदा मेल वो,
म्हारी जरनी, गंगा ना धोरे गुल क्यारी।
गुल क्यारी ने लागे प्यारी वो,
म्हारी जरनी, गंगा ना धोरे गुल क्यारी।

ये पत्तों से युक्त आये हैं, तू इन्हें पुष्पित कर दे। मेरी जननी गंगा के किनारे (निकट) लाल फूलों की क्यारी है। वो लाल फूलों की क्यारी बहुत सुहावनी लगती है।

ये तो रोते हुए आये हैं, तू इन्हें हँसता हुआ भेज। मेरी जननी गंगा के निकट लाल फूलों की क्यारी है। वो लाल फूलों की क्यारी बहुत सुहावनी लगती है।

ये मार्ग से भटक गये हैं, तू इन्हें अभीष्ट मार्ग पर पहुँचा। मेरी जननी गंगा के निकट लाल फूलों की क्यारी है। वो लाल फूलों की क्यारी बहुत सुहावनी लगती है।

ये तो प्यासे आये हैं, इन्हें तृप्त करके भेज। मेरी जननी गंगा के किनारे लाल फूलों की क्यारी है। वो लाल फूलों की क्यारी बहुत सुहावनी लगती है। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक को गंगा मैया प्रगति पथ पर अग्रसर करें।

जो लोग (प्रायः महिलाएँ) अत्यंत व्यस्तता एवं पारिवारिक जिम्मेदारियों के कारण विभिन्न तीर्थ स्थलों का सुख नहीं ले पाते हैं। उन लोगों के मन को सुकून देने के लिए घर के बुजुर्ग उन्हें कुछ इस तरह कहते हैं।

हो हरियाला प्रभु लाड़ला।
म्हने चारी धाम बताड़ो।
चारी धाम हो सीता! घर में समझ लो,
कुटुम-कबीला परवार।
ससरा बड़ा वो सीता! समदर समझ लो,
सासु गंगा जल-नीर।
हो हरियाला प्रभु लाड़ला।
म्हने चारीधाम बताड़ो।
जेठजी बड़ा वो सीता! जगदीस समझ लो,
जेठानी नरबदा-नीर।
हो हरियाला प्रभु लाड़ला।
म्हने चारीधाम बताड़ो।
देवर बड़ा वो सीता! द्वारखा समझ लो,
देराणी सरसती-अवतार।
हो हरियाला प्रभु लाड़ला।
म्हने चारी धाम बताड़ो।
नणदोई बड़ा वो सीता! अर्जुन समझ लो,
नणद सौदरा-अवतार।
हो हरियाला प्रभु लाड़ला।
म्हने चारी धाम बताड़ो।
पति बड़ा वो सीता! परमेश्वर समझ लो,
आप लछमीजी-अवतार।

ओ आनंदित करने वाले मेरे प्रभु! मुझे चारों धाम के दर्शन कराओ। तब उसे उपदेश मिलता है कि-हे सीता! घर में ही कुटुम्ब एवं परिवार को चारों धाम समझो। ससुरजी जो कि सबसे बड़े हैं उन्हें सागर एवं सासूजी को गंगाजल सा पवित्र समझो। जेठजी जो कि बड़े हैं उन्हें जगदीशजी (तीर्थ स्थान) समझ लो तथा जेठानीजी को नर्मदा का पवित्र जल। देवर जो कि बड़े हैं उन्हें द्वारिका के समान तथा देवरानी को सरस्वती का अवतार मान लो। ननदोईजी जो कि बड़े हैं उन्हें अर्जुन के समान तथा ननद को बहन सुभद्रा का अवतार समझ लो। मेरे आनंदित करने वाले प्रभु चारों धाम के दर्शन कराओ। अपने पति को परमेश्वर के समान समझो और स्वयं को लक्ष्मीजी का अवतार। अर्थात् तुम्हारा परिवार ही समस्त तीर्थों का संगम है।

पवित्र गंगा-यमुना के जल को आदर सहित घर लाकर उसका समारोहपूर्वक उद्यापन किया जाता है। इन्हीं भावों को दर्शाने वाले निम्नांकित गीत में कहा जा रहा है–

सोना को घड़ल्यो ने रेसम लम्बी डोर,
रेसम लम्बी डोर हो।
गंगा-जमना नो पाणी सांचर्‌यो।
कुण सा राय ना डावड़ा ने काँई तमारो नाम?
काँई तमारो नाम।
कणा वो नगर का तम राजवी?
लछमी नारायणजी का डाबड़ा, मनोहर हमारो नाम,

बघेरा गाम का हम राजवी।
दई दो झकोळ्ो, संगवी भर लो यो नीर,
भर लो यो नीर!
हो जई ने वपरा जो तमारा देस में।
नीर वपराजो संगवी, कन्या परणाओ रे,
भाणेज परणाजो रे, जात जीमाड़ो रे।
जद तमारी गंगा माता संग चढ़े।

सोने के घड़े में रेशम की लम्बी डोर बाँधकर गंगा-यमुना का जल संचय किया (भरा)। आप किनके पुत्र हैं, आपका क्या नाम है? और आप कहाँ के निवासी हैं? मैं लक्ष्मीनारायणजी का पुत्र हूँ, मनोहर मेरा नाम है। और मैं ग्राम बघेरा का निवासी हूँ। अरे संगवी (तीर्थयात्री)! झकोला देकर ये पवित्र जल भर लो और इस जल को आपके यहाँ जाकर वितरण कर देना। आप गंगा जल का वितरण कन्या के विवाह में, भानजे के विवाह में, तथा जाति-समाज को भोज के समय करना, जिससे आपको गंगा माता का पुण्य प्राप्त होगा।

एक और पंथवारी लोकगीत में मानव के सांसारिक विपदाओं से मुक्ति हेतु प्रभु से कामना की जा रही है—

प्रभुजी कबकी छोड़ी मथुरा नगरी, कबकी छोड़ी कासी।
झारखण्ड में आप बिराजो द्वारखा का वासीजी,
कँई द्वारखा का वसीजी, म्हने तारो-तारो-तारोजी,
भव सागर पार उतारोजी, संसार लगे म्हने खारोजी,
कँई आप लगो म्हने प्याराजी, ओड़ीसा-जगदीस।

प्रभुजी लाल छत्र पर धजा बिराजे, मस्तक सोवे हीरा।
बद्रीनारायण-मंदर माय नाचे दास कबीरा जी।
कँई नाचे दास कबीराजी, म्हने तारो-तारो-तारोजी,
भव सागर पार उतारोजी, संसार लगे म्हने खारोजी,
कँई आप लगो म्हने प्याराजी ओड़ीसा-जगदीस।

प्रभुजी बुढ़िया माँगे खीचड़ी, बंगालन माँगे भात।
साधु माँगे दरसण-महापरसादीजी,
कँई माँगे दरसण-परसादीजी, म्हने तारो-तारो-तारोजी,
भव सागर पार उतारोजी, संसार लगे म्हने खारोजी,
कँई आप लगो म्हने प्याराजी, ओड़ीसा-जगदीस।

प्रभुजी बंगाल देस की सुन्दर कामणी, हळद लगावे तेल।
धूप-दीप का दीपक संजोवे, मोहन भोग लगावे जी,
कँई मोहन भोग लगावे जी, म्हने तारो-तारो-तारोजी,
भव सागर पार उतारोजी, संसार लगे म्हने खारोजी,
कँई आप लगो म्हने प्याराजी, ओड़ीसा-जगदीस।

हे द्वारिका के वासी! (श्री कृष्ण), आपने कब से मथुरा नगरी और काशी छोड़कर झारखंड में निवास किया है? हे उड़ीसा के जगदीश प्रभु! मेरा उद्धार करो, उद्धार करके मुझे इस संसार सागर से पार उतारो, क्योंकि यह संसार-सागर बहुत ही नीरस लगता है। आप मुझे अत्यन्त प्रिय हैं। हे प्रभु! आपके छत्र पर लाल ध्वजा विराजित है और आपके मस्तक पर हीरा सुशोभित हो रहा है। बद्रीनाथ के मंदिर में दास-कबीर मग्न होकर नृत्य कर रहे हैं। हे प्रभु! मेरा भी उद्धार करिये। हे प्रभु! उड़ीसावासी (उड़िया) आपसे खिचड़ी का प्रसाद, बंगाली (बंगालवासी) आपसे भात का प्रसाद माँगते हैं। लेकिन साधु तो सदैव आपके दर्शन का ही महा-प्रसाद चाहते हैं। हे प्रभु! आप मेरा भी उद्धार करिये। हे प्रभु! बंगाल देश की सुन्दरी आपको हल्दी एवं तेल का उबटन तथा मोहन भोग का नैवेद्य लगाकर, धूप-दीप से आपकी आरती उतारती है। हे प्रभु! आप कृपा करके मेरा भी उद्धार करिये।

तीर्थ यात्रियों के आगमन पर जो उत्साहपूर्ण माहौल एवं वातावरण बनता है, उसकी प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति दृष्टव्य है—

बद्रीनाथजी में बाजा बाजिया वो,
म्हारा मालवा में पड़ी झनकार, रेण बाजा बाजिया।
निकळो शरद रई बायरा,
तमारी माजीबई को संघ आयो हो राम।
रेण बाजा बाजिया।
गंगाजी में बाजा बाजिया वो,
म्हारा मालवा में पड़ी झनकार, रेण बाजा बाजिया।
निकळो अरुण रई बायरा,
तमारा काकाजी को संघ आयो हो राम।
रेण बाजा बाजिया।
सोरमजी में बाजा बाजिया वो,
म्हारा मालवा में पड़ी झणकार, रेण बाजा बाजिया।
निकळो सुभाष रई बायरा,

तमारी मामी बई को संघ आयो हो राम।
रेण बाजा बाजिया।
रामेसर में बाजा बाजिया वो,
म्हारा मालवा में पड़ी झनकार, रेण बाजा बाजिया।
निकळ्यो संजू रई बायरा,
तमारा मामाजी को संघ आयो हो राम।
रेण बाजा बाजिया।

बद्रीनाथ धाम में रात्रि के समय बाजे बज रहे हैं, जिसकी गूँज मेरे मालवांचल में सुनाई दे रही है। अरे शरद राय! बाहर तो आईये, आपकी माताजी तीर्थयात्रा करके अन्य यात्रियों के साथ पधार रही हैं। रात्रि में बाजे बज रहे हैं। गंगाजी में रात्रि के समय बाजे बज रहे हैं। जिसकी गूँज मेरे मालवांचल में सुनाई दे रही है। अरे अरुण राय! बाहर तो आईये, आपके काकाजी तीर्थयात्रा करके अन्य यात्रियों के साथ पधार रहे हैं। रात्रि में बाजे बज रहे हैं। सोरमजी में रात्रि के समय बाजे बज रहे हैं। जिसकी गूँज मेरे मालवांचल में सुनाई दे रही है। अरे सुभाष राय! बाहर तो आईये, आपकी मामीजी तीर्थयात्रा करके अन्य यात्रियों के साथ पधार रही हैं। रात्रि में बाजे बज रहे हैं। रामेश्वरम् में रात्रि के समय बाजे बज रहे हैं जिसकी गूँज मालवांचल में सुनाई दे रही है। अरे संजू राय! बाहर तो आईये, आपके मामाजी तीर्थ यात्रा करके अन्य यात्रियों के साथ पधार रहे हैं। रात्रि में बाजे बज रहे हैं।

बुन्देली लोकजीवन की गारियाँ

गुप्तेश्वर द्वारका गुप्त

गाली जीवन का एक अभिन्न अंग बनकर मानव की आदिम अवस्था से ही जुड़ी हुई है। जब मानव शब्दों से अपने प्रेम अथवा गुस्से को उजागर करने में सक्षम नहीं था तब वह अपने भावों को चेहरे और इशारों के माध्यम से व्यक्त करता था। उस अवस्था में भी गाली का स्वर मूक होते हुए स्पष्ट हो जाता था। कालान्तर में जब शब्दों से मानव ने बोलना सीखा तो फिर उसने जीवन में जीने की कला के साथ गाली को भी साकार रूप दिया और अपना अभिन्न बना लिया। गाली का मूल स्वर दो भावों को व्यक्त करता है जिसमें एक गुस्से का, लड़ाई झगड़े का, नोंक-झोंक का मारपीट के दौरान उपजी मनःस्थिति को स्पष्ट करता है और अपने विरोधी पक्ष को 'गाली-गलौज' अर्थात् दुर्वचनों के संबोधन देकर उसे दबाने का उपक्रम रचता है। दूसरा भाव प्यार भरा, लाड़-दुलार वाला, रिश्ते नातों को प्रगाढ़ करने वाला होता है जिसमें गाली को मीठी वाणी से देकर सामने वाले से अपनत्व का नजदीकी रिश्ता उजागर किया जाता है। ये प्रेम पगी गालियाँ छन्दबद्ध नहीं होतीं। इनमें किसी प्रकार का छल छन्द भी नहीं होता। ये बहुत ही स्पष्ट और खुले शब्दों में दी जाती हैं। जिन्हें सामान्य भाषा में अपशब्द कहा जाता है। पुरूष वर्ग द्वारा दी जाने वाली गाली कर्कश, तीखी और कठोरता लिए हुए शुष्क होती हैं जबकि महिलाओं द्वारा दी जाने वाली गाली भोंडी, भद्दी, लचीली और चुभन लिए हुए होती है। बच्चों द्वारा दी जाने वाली गाली रोमांचित करती है, स्निग्धता लिए होती है और बाल मनोवृत्तियों पर पड़े प्रभाव को उजागर करती है।

एक और अन्य प्रकार की गाली होती है, जिसे गाया जाता है। यह गाली छन्दबद्ध होती है। इस गाली में भी अपशब्द होते हैं। अश्लील शब्दों की बौछार होती है। परन्तु समय विशेष पर ही ऐसी गालियों को एक लय के साथ समूह स्वरों में गाया जाता है। इन गालियों को बुन्देलखंड में 'गारी' के नाम से जाना जाता है। इन गारियों को केवल महिलाएँ ही गाती हैं और पुरूष वर्ग सुनता है, रस लेता है, आनन्दित होता है। ऐसी गारियाँ विवाह के समय गायी जाती हैं।

बुन्देलखंड में गारी-गायन की परम्परा बहुत पुरानी है। यहाँ इन गारियों का प्रचलन उस समय से जान पड़ता है जब से इस क्षेत्र में गायन की प्रथा लोक से एकाकार होकर चली है। गारियाँ मानव की प्रवृत्तियों, उनके हाव-भाव और रहन-सहन की वैशिष्टता को उजागर

करती हैं। बुन्देली लोक जीवन में प्रचलित गारियाँ एक ओर जहाँ सामाजिक संगठन के बीच सेतु का काम करती हैं, वहीं वे आस्था और विश्वास के बंधन को मजबूत भी करती हैं। गारियों की विषय वस्तु विविध प्रकार की मिलती है। परन्तु अधिकतर गारियाँ स्त्रियों द्वारा विवाह के अवसर पर ही गायी जाती हैं। मूल रूप से ये स्त्री गीतों के प्रकारों के अंतर्गत आती हैं। गारी की विशेषता को विस्तार देते हुए वासुदेव गोस्वामी लिखते हैं कि अधिकाँशतः ये श्रृँगार गीत होते हैं। कदाचित् श्रृँगारी का लघु रूप बनाकर इन्हें गारी कहा जाने लगा है। गारियों के बारे में वे कहते हैं कि कभी-कभी गारियों का श्रृँगार रस इतना उदात्त हो जाता है कि वे अश्लील बन जाती हैं। इन्हें 'बुरई गारी' अर्थात् खराब गारी कहा जाता है। अश्लीलता को ही मद्देनजर रखते हुए डॉ. शालिगराम गुप्त लिखते हैं कि कभी-कभी यह अश्लीलता इतनी अधिक होती है कि उसके आगे अश्लील कही जाने वाली रीति कालीन कविता भी अत्यन्त शिष्ट और संयत प्रतीत होती है। यह परम्परा निम्न वर्ग के वैवाहिक संस्कारों में आज भी बरकरार है। परन्तु यह तो एक पक्ष ही कहा जा सकता है। दूसरा पक्ष भी गारियों का है जिसमें वे करूणा प्रधान और शिक्षाप्रद के साथ-साथ लोक मंगल की भावना से ओत-प्रोत होती हैं। सभ्य समाज में आजकल धीरे-धीरे यह गारी गायन की प्रथा भी समाप्ति के कगार पर पहुँच गयी है।

विवाह संस्कार के अन्तर्गत गारियों की गायिकी का उद्देश्य एक ओर जहाँ नये रिश्ते नातों को गाढ़ा करने के लिए होता है वहीं दूसरी ओर अपनों के किये गये महत्वपूर्ण कार्यों को 'अमंगल' की स्थिति से बचाये रखने के लिए भी किया जाता है। यही समय होता है जब महिलाओं द्वारा गारी गायन के माध्यम से 'मंजिलों के मारे' बाराती अपनी थकावट से विश्रान्ति पाते हैं और पंगत में बैठकर गारियों को सुनते, उनका रसास्वादन लेते हुए भरपेट भोजन कर लेते हैं। डॉ. शालिगराम गुप्त लिखते हैं कि विवाह के गीतों में गालियों का महत्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि इन गीतों का विवाह से कोई सीधा संबंध नहीं है परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि मनोरंजन की दृष्टि से ही गाली गीतों को विवाह के गीतों में स्थान दिया गया है। गारियाँ बुन्देली लोकगीतों में अपनी महत्वपूर्ण पहचान रखती है। उनकी मिठास सहज ही मन मोह लेती है। बुन्देली विवाह संस्कार के अन्तर्गत ज्यौनार की गारियाँ वधू पक्ष की महिलाएँ अपने मधुर कंठ से समूह स्वरों में जब गाती हैं, तो बाराती सुनते-सुनते रस विभोर हो जाते हैं। इन गारियों में वर के संबंधियों के नामों को जोड़-जोड़कर गाया जाता है। और उन्हें अनेक प्रकार से गारियाँ ही दी जाती हैं। ये गारियाँ एक ओर जहाँ हास्य मिश्रित होती हैं वहीं दूसरी ओर इनमें अर्थ गाम्भीर्य भी होता है। गारियाँ एक ओर जहाँ करूणा प्रधान, सुरूचिपूर्ण सुमधुर और रसीली होती हैं वहीं इनमें अश्लीलता की पराकाष्ठा भी अपनी सीमा लाँघ लेती है। बुन्देली गारियों के प्रकार सैकड़ों मिलते हैं। जिन्हें धुन विशेष अथवा गायिकी के अन्दाज से पहचाना जाता है। वैसे आजकल के प्रचलन में गारी जो गायी जाती है उसमें प्रमुख रूप से रामा औतारी गारी, कृष्णा औतारी गारी, ज्ञान गारी, रसिक गारी, समाज सुधार की गारी, कबीरी गारियाँ, सुराजी गारियाँ, लोक देवताओं से संबंधित गारियाँ, प्राकृतिक प्रकोपों से संबंधित गारियाँ, जीवन के उतार-चढ़ाव से संबंधित गारियाँ और साथ ही साथ समय प्रभाव से उपजी गारियाँ भी होती हैं। आजकल समय ने करवट बदली है और पुरूष वर्ग भी इन्हें गाने लगा है अतः इन गारियों की व्यापकता ने अपनी सीमाओं को बढ़ाया है और मौसम के प्रभाव से भी प्रभावित होकर गारियों के अनेक प्रकार सामने आये हैं।

वैसे बुन्देलखंड में आख्यान और गाथापरक गारियों के अन्तर्गत भक्त प्रहलाद, भक्त ध्रुव, सती अनसुइया, सती सावित्री, मूरत ध्वज, दानी हरिश्चन्द्र, भागीरथ, सरमन, स्थान विशेष की सत्ती, तुलसा विवाह के अतिरिक्त शिव विवाह की गारियाँ भी गाई जाती हैं। अनेक गारियों में शिक्षाप्रद भावना और लोक मान्यताओं की विशेष अभिव्यक्ति उजागर होती है। लोक जीवन को सुखमय और परिवार को संयुक्त बनाये रहने की इच्छा इन गारियों का मूल भाव होता है। कुछ आख्यान और गाथापरक गारियाँ राष्ट्रीय भाव धारा से ओत-प्रोत होती हैं जिनमें सुराज की चाह और उसके प्रति समर्पित नायकों की भूमिकाएँ उभरती हैं। ऐसी गारियाँ महारानी लक्ष्मी बाई, दुर्गावती, मानवती, गाँधी जी, पं. जवाहर लाल नेहरू आदि के साथ-साथ स्थान विशेष के शहीदों से संबंधित होती हैं।

गायन शैली की विविधता भरी बुन्देली गारियाँ एक ओर जहाँ लोकोन्मुखी जीवन दृष्टि को मुखरित करती हैं वहीं वे दूसरी ओर आध्यात्मपरक होकर कबीर की शैली को उजागर करने में सक्षम हैं। इन गारियों के बारे में ज्यादा कुछ न कहते हुए उन्हें बानगी बतौर प्रस्तुत कर रहा हूँ जिससे विज्ञ जन बुन्देली गारियों की गहराई और उनकी समयानुकूल उपादेयता को समझने में कामयाब होंगे। विलुप्त होती गारियों के प्रकार भी देने की कोशिश की गई है और नये ढंग से प्रस्तुत की जाने वाली गारियों को भी सम्मलित करने का प्रयास किया गया है।

गारियों की विषय वस्तु व्यापक है। मोटे तौर पर हम बुन्देली गारियों को निम्न प्रकार से विभाजित कर सकते हैं।

शिव विवाह की गारियाँ– बुन्देली गारियों में भगवान शंकर के विवाह का चित्रण रोचक ढँग से सुनने को मिलता है। भगवान शिव की बारात का चित्रण उभरता है, जिसमें सभी देवता सम्मिलित होते हैं, उनके साथ ही भगवान शंकर के गण बारात में अनेक प्रकार के रहते हैं।

राजा हिमांचल के द्वार पर मैना शंकर का अद्‌भुत रूप देखती हैं। पार्वती मन ही मन प्रार्थना करती हैं।

बुन्देली गारियों के अन्तर्गत शिव विवाह की गारियाँ जो लोक में प्रचलित हैं उनमें शिव की वेशभूषा का चित्रण होता है। इस वेश भूषा में बिच्छू, ततैया, नाग, भूत, बाघम्बर, चंद्रमा, गंगा की छटा का उल्लेख होता है। सवारी के लिए नंदी (बैल) उनका प्रिय है। अपनी धुन में मस्त रहने वाले भोले सदा ही भंग की मस्ती में डूबे रहते हैं।

उनके संग चल रही बारात में एक ओर ब्रह्मा, विष्णु, नारद, इन्द्र जैसे देवता सम्मिलित रहते हैं तो दूसरी ओर भूत, प्रेत, चुड़ैलन, अगिया, बैताल भी रहते हैं। कोई बिना सिर का है, कोई के हाथ ही नहीं, किसी के पैर नहीं, तो कोई काना है, लूला है। किसी से बड़े-बड़े खब्बीसा दाँत हैं तो किसी के सूपा जैसे कान हैं। विचित्रताओं से भरी हुई बारात रहती है शिवजी की। यही चित्रण बुन्देली गारियों में अपनी विशेषता लिए होता है। बारात का यह रूप देखकर मैना घबरा उठती है। पार्वती मन ही मन खुश होती हैं और प्रार्थना कर कहती हैं हे प्रभु! अब आप अपनी माया समेट लो।

रामा औतारी गारियाँ– राम औतारी गारियों में राम की लीलाओं का जहाँ चित्रण मिलता है वहीं राम विवाह की गारियों में बुन्देली संस्कृति का दिग्दर्शन भी हो जाता है। परम्परागत और रीति-रिवाजों की विशेषताएँ इन राम विवाह की गारियों में स्पष्ट रूप से मिलती है। बुन्देली क्षेत्र में राम विवाह की गारियाँ यहाँ के विवाह संस्कार में रची बसी हुई हैं।

रामा औतारी गारियों में राम का मुनि आश्रम में शिक्षा पाने जाना, फूल वाटिका में विचरण करना, धनुष भंग करना, बारात का तैयार होना, श्रृँगार चित्रण, ऊबनी द्वारचार, भाँवर, कुँवर कलेऊ, कंकन छोरना, विदा आदि से संबंधित गीत महिलाओं द्वारा गाये जाते हैं।

इसके अतिरिक्त राम वन गमन, सीता हरण, राम विलाप, लक्ष्मण शक्ति, हनुमान का मूर संजीवन लाना आदि गारियाँ भी बुन्देली क्षेत्र में प्रचलित हैं।

कृष्ण औतारी गारियाँ– बुन्देली गारियों में कृष्ण औतारी गारियाँ जो प्रचलित हैं उनमें मुख्य रूप से कृष्ण की लीलाओं के आख्यान ही प्रमुख हैं। दान लीला, माखन चोरी, चीर हरण, राधा कृष्ण के झगड़े, मनिहारी रूप, वैद्य का रूप धारण करना आदि के साथ-साथ कृष्ण का गोप-ग्वालों के साथ गायें चराना, गोवर्धन धारण करना और असुर संहारक स्वरूप भी सुनने को मिलता है।

गोपियों के साथ रहस रचाना, उनका मोहनी नृत्य रूप, वंशी वादन भी अपनी विशिष्टताओं के साथ उभरता है। कृष्ण सुदामा चरित, राधा कृष्ण लीला, द्वारका गमन आदि से संबंधित गारियाँ बुन्देली लोक साहित्य की अमूल्य निधि हैं।

देवी की गारियाँ– देवियों से संबंधित गारियाँ जो यहाँ पर प्रचलित हैं उनमें देवी के स्थान का चित्रण, उनके श्रृँगार और भक्तों पर की गई कृपा का उल्लेख ही प्रमुख रूप से मिलता है।

स्थान विशेष की देवियों की छवि का अंकन गारियों में विशेषता लिए होता है। इस क्षेत्र में मैहर की शारदा, विन्ध्यवासिनी देवी, पवई की कलेही माता, जालपा माता, खड़ैरा की माता, बंजारी माता, हरसिद्धि माता, ज्वाला माता आदि के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रीयता वाली देवियों का गुणगान भी सुनने को मिलता है।

आध्यात्मपरक गारियाँ– इन गारियों की भावधारा कबीर के मूल स्वर को जहाँ एक ओर उजागर करती है, वहीं दूसरी ओर भक्ति भावना से ओत-प्रोत संवेदना ईश्वर के चरणों में समर्पित करती है। काया और माया की गारियाँ जीवन को आध्यात्म की ओर मोड़ने की प्रेरणा देती हैं। भक्तों के चरित्रों का गुणानुवाद भगवत्भक्ति में लीन रहने के लिए प्रोत्साहित करता है।

पंचतत्व, जीव और ब्रह्म, देह गाथा आदि के साथ-साथ अंतर्जगत की अनुभूति का उजास भी इन गारियों की विशिष्टता को उजागर करता है।

यथार्थपरक गारियाँ– लोक जीवन के विभिन्न पहलुओं को उजागर करती हुई बुन्देली की गारियों में जीवन की यथार्थ अभिव्यक्ति उजागर हुई है। दैनिक जीवन की स्थितियों में जहाँ एक ओर गरीबी,

भुखमरी, बेरोजगारी का स्वर इन गारियों से उभरता है वहीं बेमेल विवाह, सती प्रथा, संयुक्त परिवार की कथा, ज्यादा-ज्यादा संतान पैदा होने की स्थिति के साथ ही साथ प्राकृतिक आपदाओं से त्रस्त लोकजीवन, सूखा, बाढ़, रोगों का प्रकोप भी गारियों की विषय वस्तु बनकर उभरा है।

ऋतु का प्रभाव, महँगाई की मार, विदेशी वस्तुओं का असर आदि गारियों के माध्यम से जन-मानस के बीच गूँजा है। ये यथार्थ परक गारियाँ चोरी, चुगली, कलह, पीड़ा, संत्रास, टीस के मनोभावों को जहाँ उजागर करती हैं वहीं लोक की मंगल कामना का भाव लेकर जीवन को आनन्दमय और सुखमय बनाने की महत्वाकांक्षा भी उभारती हैं।

गाथापरक गारियाँ—इन गारियों में अनेक राजाओं की गाथाएँ गायी गई हैं। जैसे हरदौल, हरिश्चंद, मूरतध्वज, राजा भरथरी आदि। अन्य भक्त परक गाथाओं में सरमन, प्रहलाद, ध्रुव, शबरी, सती अनसुइया, ग्राम्य-सती, दुर्गावती, लक्ष्मीबाई आदि। जनसेवियों और राष्ट्र हितैषियों में गाँधी, जवाहर, सुभाषचंद बोस के अतिरिक्त कुछ स्थानीय व्यक्तियों को लेकर भी गारियाँ गायी गई हैं। डाकुओं में देवीसींग, मूरतसिंह आदि से संबंधित गारियाँ भी बुन्देली क्षेत्र में समयानुसार गायी गई हैं क्योंकि इन डाकुओं द्वारा गरीबों और आदिवासियों के लिए पेट की आग बुझाने के अनेक प्रकार के उपक्रम रचे गये हैं।

अन्यान्य प्रकार की गारियाँ—इसके अन्तर्गत हम लोक-जीवन के वे तमाम रूप रख सकते हैं, जो व्यक्तियों के आम रोजमर्रा से जुड़े और उन्हें प्रभावित कर गारियों के रूप में ढलकर प्रचलित हुए हैं। इनमें उनकी जीवनचर्या और मेहनतकस श्रम की पहचान को अभिव्यक्ति मिली है। कुछ गारियों में स्थान विशेष की छटा और प्राकृतिक चित्रण भी हमें सुनने को मिलता है।

इस प्रकार से बुन्देली गारियों का क्षेत्र व्यापक है। और उनकी व्यापकता जीवन के किसी न किसी पहलू से जुड़ी हुई मिलती है।